શ્રી સ્વામિનારાયણો વિજયતેતરામ્

શિવપુરાણ

૮

www.neelkanthvarni.com

तृप्ति को प्राप्त हो गये हैं।२३। इस प्रकार प्रथम तीनों ऋणसे उऋण होकर वानप्रस्थआश्रम ग्रहण करे और शीत,उष्णता,सुख दुःख आदि सहन करे तथा जितेन्द्रिय रहे ।२४। तपस्वी,आहार पर संशय रखने वाला, मय-नियम पालन पूर्वक योगाभ्यास करने वाला तथा बुद्धि को दृढ़ और निश्चल रखने वाला बने ।२५। शुद्धिपूर्वक सभी कर्म करे और सम्पूर्ण काम्य कर्मों का त्याग कर दे और ज्ञानमय पूजन में तत्पर होजाय ।२६। यह ज्ञानमय पूजन शिवजी से सङ्गति तथा जीवनसे मुक्तिप्रदान करने वाला है,यह सर्वोत्तम विकार रहित यतियों के लिए ज्ञातव्य है ।२७। हे महाप्राज्ञ ! आपके स्नेहवश तथा लोक कल्याणार्थ ही उसका वर्णन करता हूँ उसे सावधानी से श्रवण करो ।२८।

सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञं वेदान्तज्ञानपारगम् ।
आचार्यमुपगच्छेत्स यतिर्मतिमतां वरम् ।२९।
तत्समीपमुब्रज्यं यथाविधि विचक्षणः ।
दीर्घदण्डप्रणामाद्यस्तोषयेद्यत्नतः सुधीः ।३०।
योगुरुः स शिवः प्रोक्तो यः शिवः स गुरुस्मृतः ।
इति निश्चित्य मनसा स्वविचारं निवेदयेत् ।३१।
लब्धानुज्ञस्तु गुरुणा द्वादशाहं पयोव्रती ।
शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां वा दशम्यां वा विधानतः ।३२।
प्रातः स्नात्वाः विशुद्धात्मा कृतनित्यक्रियः सुधीः ।
गुरुमाहूय विधिना नाँदीश्राद्धं समारभेत् ।३३।
विश्वेदेवाः सत्यवसुसंज्ञावन्तः प्रकीर्तिताः ।
देवश्राद्धे ब्रह्मविष्णुमहेशाः कथितास्त्रयः ।३४।
ऋषिश्राद्धे तु सम्प्राक्ता देवक्षेत्रमनुष्यजाः ।
देवश्राद्धे वसुरुद्रादित्यास्तु सम्प्रकीर्त्तिताः ।३५।

सभी शास्त्रों के तत्वार्थ ज्ञाता,वेदान्त के पारगामी मेधावी आचार्य के निकट बुद्धिमान् यतीजाय ।२९। और उन्हें दण्डवत् प्रणामों में भले प्रकार सन्तुष्ट करे ।३०। जो गुरु है, वह शिव है और जो शिव है वह गुरु है इस

प्रकार मनमें विचारे उस विचार को गुरु के प्रति निवेदन करे ।३१। फिर गुरु की आज्ञा से बारह दिन तक तथा शुक्ल पक्ष की चतुर्थी या दशमीको विधिवत् पयोव्रतकरे ।३२। स्नान करके प्रातः कृत्यकरे और शुद्ध होने पर विधिसे गुरु को बुलाकर नान्दी श्राद्ध करना चाहिए ।३३। हे ऋषि ! उसमें विश्वदेवा सत्यवसु संज्ञक हैं। श्राद्धमें ब्रह्मा विष्णु,महेश वर्णन किये हैं ।३४।श्राद्धमें देवक्षेत्र मनुष्य तथा द्रव्य श्राद्धमें वसु,रुद्र,और आदित्यकहे हैं ३५।

चत्वारो मानुषश्राद्धे सनकाद्या मुनीश्वराः ।
भूतश्राद्धे पञ्च महाभूतानि च ततः परम् ।३६।
चक्षुरादीन्द्रियग्रामो भूतग्रामश्चतुर्विधः ।
पितृश्राद्धे पिता तस्य पिता तस्य पिता त्रयः ।३७।
पितृश्राद्धे मातृपितामह्यौ च प्रपितामही ।
आत्मश्राद्धे तु चत्वार आत्मा पितृपितामहौ ।६६।
प्रपितामहनामा च सपत्नीकाः प्रकीर्त्तिताः ।
मातामहात्मकश्राद्धे त्रयो मातामहादयः ।३९।
प्रतिश्राद्धं ब्राह्मणानां युग्मं कृत्वोपकल्पितान् ।
आहूय पादौ प्रक्षाल्य स्वयमाचम्य यत्नतः ।४०।
समस्तसपत्समवाप्तिहेतवः समुत्थितापत्कुलधूमकेतवः ।
अपारसंसारसमुद्रसेतवः पुनन्तु मां ब्राह्मणपादरेणवः ।४१।
अपाद्धनघ्वान्तसहस्रभानव समीहितार्थर्पणकामधेनवः ।
समस्ततीर्थाम्बुपवित्रमूर्त्तयो रक्षतु मां ब्राह्मणपादपांसवः।४२

मनुष्य श्राद्धमें चार सनकादि तथा भूताश्राद्ध में पच महाभूत कैसे हैं। ।३६। चक्षु आदि इन्द्रियाँ और जरायुज अण्डज स्वेदज,उद्भिज्ज यह चार प्रकारके प्राणी कहे है, पितर श्राद्धमें पिता,पितामह और प्रपितामह कहे हैं ।३७। मातृ श्राद्धमें माता,पितामही तथा प्रपितामही और आत्म श्राद्ध में पिता और पितामह कहे हैं।३८।प्रपितामह सपत्नीक तथा मातामह(नाना) के श्राद्ध में मातामह, तथा उनके पिता (परनाना) कहे हैं ।३९। प्रत्येक श्राद्ध में दो ब्राह्मणोंको भोजन करावे,उनकोबुलाकर स्वयं आचमनकर पवित्र

हो और उनके चरण धोवे ।४०। और कहे कि सम्पूर्ण सम्पत्ति की प्राप्ति के कारणरूप,विपत्ति-नाशके लिए अग्निरूप तथा अपार भवसागरसे पार होने के लिए सेतुस्वरूप ब्राह्मणों की चरणरज मुझे पवित्र बनावे।४१।विपत्ति रूप अन्धकार को नष्ट करने के लिए सूर्य, काम्य पदार्थ प्राप्त कराने को कामधेनु तथा सम्पूर्ण तीर्थों के जल की पवित्र मूर्ति ब्राह्मणों की पग-रज मेरी रक्षक बने ।४२।

इति जप्त्वा नमस्कृत्य साष्टांग भुवि दण्डवत् ।
स्थित्वा तु प्राङ्मुखः शम्भोः पादाब्जयुगलं स्मरन् ।४३।
सपवित्रकरः शुद्ध उपवीती दृढासनः ।
प्राणायामत्रयं कुर्याच्छ्रुत्वा तिथ्यादिक पुनः ।४४।
मत्सन्यत्सांगभूत यद्विश्वेदेवादिकं तथा ।
श्राद्धमष्टविधं मातामहान्तं पार्गणेन वै ।४५।
विधानेन करिष्यामि युष्मदाज्ञापुरः सरम् ।
एवं विधाय संकल्पं दर्भानुत्तरतस्त्यजेत् ।४६।
उपस्पृश्याप उत्थाय वरणक्रममारभेत् ।
पवित्रपाणिः संस्पृश्य वाणीं ब्राह्मणयोर्वदेत् ।४७।
विश्वेदेवार्थं इत्यादि भयद्भूयां क्षण इत्यपि ।४८।
प्रसादनीय इत्यन्त सर्वत्रैवं विधिक्रमः ।
एव समाप्य वरणं मण्डलानि प्रकल्पयेत् ।४९।

इस प्रकार जपकर, पृथ्वीमें दण्डवत् होकर प्रणाम करे और शिवजी के सम्मुख पूर्वाभिमुख खड़ा होकर उनके चरणों का ध्यान करे ।४३। और पवित्र हाथकर शुद्ध होकर नवीन यज्ञोपवीत धारण करे,दृढ़ चित्तसे आसन ग्रहण करे और तीनबार प्राणायामकर,तिथ्यादि सुने ।४४।मेरे संन्यास का अङ्गभूत वैश्वदेवादि कर्म क्रम पूर्वक पूर्वोक्त विधि से देवश्राद्धादि भेद के क्रम से नानातक पार्वणश्राद्ध ।४५। विधिवत् आपके आदेशानुसार करूँगा, इस प्रकार सङ्कल्पकर उत्तरकी ओर कुशों को छोड़दे ।४६। फिर ब्राह्मणों का हाथ स्पर्श करता हुआ वरण का क्रम आरम्भ करे तथा पवित्रीको स्पर्श

कर ब्राह्मणों से कहे ।४७। मैंने विश्वदेवा के हेतु आपका वरण किया है, इसे आप क्षण भरको स्वीकार करें ।४८। सबको इस प्रकार प्रसन्न करे, वरण का क्रम सर्वत्र यही है,इसे समाप्त करके मण्डल बनावे ।४९।

उदगारभ्य दश च कृत्वाऽभ्यचनमक्षतैः ।
तेषु क्रमेण संस्थाप्य ब्राह्मणान्पादयोः पुनः ।५०।
त्रिश्वेदेवादिनामानि स सम्बोधनमुच्चरेत् ।
इदं वः पाद्यमिति सकुशपुष्पाक्षतोदकैः ।५१।
पाद्यं दत्वा स्वयमपि क्षालितांघ्रिरुदङ्मुखः ।
आचम्य युग्मक्लृप्तांस्तानासनेषूपवेश्य च ।५२।
विश्वेदेवस्वरूपस्य ब्राह्मणस्येदमासनम् ।
इति दर्भासनं दत्वा दर्भपाणिः स्वयं स्थितः ।५३।
अस्मिन्नान्दीमुखश्राद्धे विश्वेदेवार्थं इत्यपि ।
भवद्भयां क्षण इत्युक्त्वा क्रियतामिति संवदेत् ।५४।
प्राप्नुतामिति सम्प्रोच्य भवन्ताविति संवदेत् ।
वदेतां प्राप्नुयावेति तौ च ब्राह्मणपुंगवौ ।५५।
सम्पूर्णमस्तु संकल्पसिद्धिरस्त्विति तान्प्रति ।
भवन्तोऽनुगृह्णंत्विति प्रार्थयेद् द्विजपुंगवान् ।५६।

उत्तर से प्रारम्भ कर दशों मण्डलों का पूजन अक्षत से करे, ब्राह्मणों को उन मण्डलों पर बैठाकर अक्षत से उनके चरण पूजे ।५०। विश्वदेवा रूप ब्राह्मणों से कहे कि आपके लिये यह पाद्य है,इस प्रकार कर, कुश, पुष्प, अक्षत और जलदे ।५१। फिर पाद्य देकर मुख धुलावे और उत्तराभिमुख बैठाकर आचमन करावे तथा बैठने के लिए श्रेष्ठ आसनदे ।५२। विश्वेदेवा स्वरूप ब्राह्मणों के लिये यह आसन है, यह कहकर कुशका आसन दे और स्वयं भी हाथमें कुश लेकर बैठे ।५३। और कहे कि इस नान्दी मुख श्राद्ध में आप विश्व देवों के निमित्त क्षणमात्र स्थित हों।५४।आप दोनों स्वीकार करें और दोनों ब्राह्मण भी कहें कि हम दोनों स्वीकार करते है ।५५। तुम्हारे सङ्कल्प की पूर्ण रूपेण सिद्धि हो, तब ब्राह्मणों से निवेदन करे कि आप अनुग्रह करें ।५६।

तत्रः शुद्धकदल्यादिपात्रेषु क्षालितेषु च ।
अन्नादिभोज्यद्रव्याणि दत्वा दर्भैः पृथक्पृथक् ।५७
परिस्तीर्य स्वयं तत्र पषिच्योदकेन च ।
हस्ताभ्यामवलम्ब्याथ पात्र प्रत्येकमादरात् ।५८
पृथिवी ते पात्रमित्यादि कृत्वा सत्र व्यवस्थितान् ।
देवादींश्च चतुर्थ्यन्तांननूद्याक्षतसयुतान् ।५९
उदग्गृहीत्वा स्वाहेति देवार्थेऽन्न यजेत्पुनः ।
न ममेति वदेदन्ते सर्वत्राय विधिक्रमः ।६०
यत्पादपद्मस्मरणाद्यस्य नामजपादपि ।
न्यूनं कर्म भवेत्पूर्णं त वन्दे साम्वमीश्वरम् ।६१
ज्ञात जप्त्वा ब्रूयान्मया कृतमिदं पुनः ।
नान्दीमुखश्राद्धमिति यथोक्तं व वदेत्ततः ।६२
असत्विति ब्रूतेति च तान्प्रसाद्य द्विज पुङ्गवान् ।
विसृज्य स्वकरस्थोदं प्रणम्य भुवि दण्डवत् ।६३

फिर केलेकेस्वच्छ पत्तों को धोकर बनाये हुए अन्नादि पदार्थ परोसे और अगल२ कुछ बिछाकर ।५७। तथा जलसे छिड़ककर प्रत्येक पात्र को हाथ में उठावे ।५८। और सादर उन पात्रों को पृथिवी पर रखकर 'पृथिव्ुतेपात्रम्' का उच्चारण कर देवता आदिकी चतुर्थी विभक्ति का उच्चारण करे ।५९। फिर अछत सहित जल लेकर 'देवाय स्वाहा' कह कर उस अन्न को छोड़दे और अन्त में 'इदं न मम'कहे, ऐसा सर्वत्र करना चाहिए ।६०। बिन महेश्वर के पादपद्म के स्मरण मात्र से और जिनके नाम जपके द्वारा न्यून कर्म भी अपूर्ण नहीं रहता,उन्हें पार्वतीजीसहित नमस्कार करताहूँ ।६१। ऐसा कहकर उनसे कहे कि मैं जो कुछ कर सका हूँ, उसे इस नांदी मुख श्राद्ध के द्वारा आप यथा-योग्य कहें ।६२। ब्राह्मण 'ऐसा ही हो कहें तब उन विप्रवरोंको प्रसन्न कर' अपने हाथसे जल छोड़े और पृथिवी में लेटकर दण्डवत् करे ।६३।

उथात्य च ततो ब्रूयादमृतं भवतु द्विजान् ।
प्रार्थयेच्च परं प्रीत्या कृतांजलिरुदोरधीः ।६४

श्रीरुद्र चमकं सूक्तं पौरुष च यथाविधि ।
चित्ते भदाशिवं ध्यात्वा जपेद्ब्रह्माणि पञ्च च ।६५
भोजनान्ते रुद्रसूक्तं क्षमापय्य द्विजान्पुनः ।
तन्त्रमन्त्रे च ततो दद्यादुक्तरापोशनं पुरः ।६६
प्रक्षालितांघ्रिराचम्य पिण्डस्थानं व्रजेततः ।
आसीनः प्राङ्मुखो मौनी प्राणायामत्रयं चरेत् ।६७
नान्दीमुखोक्तश्राद्धांगं करिष्ये पिंडदानकम् ।
इति संकल्प्य दक्षाणि समारभ्यादकान्तिकम्।६८
नव रेखाः समालिख्य प्रागग्रान्ष्टादश क्रमात्:
सस्तीर्य दर्भान्दक्षादिस्थानपञ्चकम् ।६९
तूष्णी दद्यात्साक्षतीदं त्रिषु स्थानेषु च क्रमात् ।
स्थानेष्वन्येषु मातृषु मार्ज्जयंस्तास्ततः परम् :७०

और फिरउठकरकहे कि ब्रन्ह्मणोंको यह अमृत स्वरूप हो और उदार बुद्धिपूर्वक अत्यन्त प्रीतिसहित हाथ जोड़ता हुआ प्रार्थना करे ।६४। ग्यारह अनुवाक 'सहस्रशीर्षा' इत्यादि पुरुषसूक्तको था ईशान आदि ब्रह्मा के पाँच नामोंको लेता हुआ शिवजीका ध्यान करे ।६५। भोजन के अन्त में रुद्र को समाप्त करे और 'अमृतापिधानमसीति' मन्त्रसे उनब्राह्मणोंको जलदे ।६६। फिर चरण धोकर आचमन करे और पिंड-स्थानमें स्वयंजाकर पूर्वाभिमुख होकर मौन बैठे तथा तीन प्राणायाम करे ।६७। और कहेकि अब मैं नांदी मुख श्राद्धका अङ्गरूप पिंडदान करूंगा, इस प्रकार सङ्कल्प पूर्वकदक्षिणा-दि से आरम्भ करउत्तर पर्यन्त ।६८।नौ रेखा खींचे और उनके आगेकमसे देवादिके पांच स्थ नमें दो २ कुशविछावे ।६९। फिर मौन होकर क्रम से तीनस्थानों में अक्षर सहित जल दे, दूसरे स्थान में माताओं का मार्जन करे ।७०।

आपेति पितरः पश्चात्साक्षतोदं समर्च्या च ।
दद्यात्ता कृमेर्णव देवादिस्थानपञ्चके ।७१
तत्तद्देव विनामानि चतुर्थ्यन्तान्युदीर्य्या च ।

स्वगृह्योक्तेन मार्गेण दद्यात्पिण्डान्पृथक् पृथक् ।
दद्यादिद साक्षत च पितृसाद्गुण्यहेतवे ।७३
ध्यायेत्सदाशिव देव हृदयाम्भोजमध्यत ।
तत्पादतपद्मस्मरणादिति श्लोक पठन् पुन ।७४
नमस्कृत्य ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां च स्वशक्तितः ।
दत्वा क्षमापय्य च तान्विसृज्य च तत क्रमात् ।७५
पिण्डानुत्सृज्य गोग्रास दद्यान्नोचेज्जले क्षिपेत् ।
पुण्याहवाचनं कृत्वा भुंजीत स्वजनैः सह ।७६
अन्येद्यु प्रातरुत्थाय कृतनित्यक्रियः सुधीः ।
उपोष्य क्षौरकर्मादि कक्षोपस्थविवर्जितम् ।७७

'यहाँ पितर स्थित हों' इस प्रकार कहकर अक्षत और जल दे, इसी प्रकार देवताओं के पाँच स्थानों में करे ।७१। फिर उन-उन देवताओं के चतुर्थ्यन्त नाम लेकर उन पाँच स्थानों में प्रत्येक को पिंडदे ।७२। पितरादि पचक स्थानमें मौनपूर्वक जल अक्षत अर्पणकरे और अपने गृह्य-सूत्रके अनुसार पिंडदानकरे और श्रेष्ठ गुणार्थ जल अक्षतदे ।७३ फिर हृदयकमलके मध्यमें शिवजीका ध्यानकरे और यत्पादपद्म स्मरणात्, इत्यादि श्लोकका उच्चारण करे ।७४। और ब्राह्मणों को नमस्कार पूर्वक शक्ति के अनुसार दक्षिणा दे और क्षमाकराकर उनको विदाकरे ।७५। फिर पिंडको छोड़कर गोग्रास दे या जलमें छोड़ दे फिर पुण्याहवाचन कर इष्टजनोंके साथ स्वयं भी भोजनकरे ।७६। दूसरे दिन प्रातःकाल नित्यकर्मकरके बगल और उपस्थ के बालों को छोड़कर-क्षौर कर्म करावे ।७७।

केशश्मश्रुनखानेव कर्मविधि विसृज्य च ।
समष्टिकेशान्विधिवत्कारयित्वा विधानतः ।७८
स्नात्वा धौतपटः शुद्धो द्विराचम्याथ वाग्यत ।
भस्म सधार्य विधिना कृत्वा पुण्याहवाचनम् ।७९
तेन संप्रोक्ष्य संप्राप्य शुद्धदेहस्वभावतः ।
होमद्रव्यार्थमाचार्यं दक्षिणार्थं विहाय च ।८०

द्रव्यजात महेशाय द्विजेभ्यश्च विशेषतः ।
भक्तेभ्यश्च प्रदायाथ शिवाय गुरुरूपिणे ।८१
बस्त्रादिदक्षिणां दत्वा प्रणम्य भुवि दण्डवत्।
धौतकौपीनवसनं दण्डाद्यं क्षालितं भुवि ।८२
आदाय होमद्रव्याणि समिधादीनि च क्रमात् ।
समुद्रतीरे नद्यां वा पर्वते वा शिवालये ।८३
अरण्ये चापि गोष्ठे वा विचार्य स्थानसुत्तमम् ।
स्थित्वाचम्य ततः पूर्वं कृत्वा मानसमञ्जरीम् ।८४

क्षौर कर्ममें उपस्थ के बालों को छोड़कर केश, दाढ़ी, मूंछ, नाखून आदि को कटवावे, यह कर्म-विधिसे करे ।७८। स्नान कर, धोती धारण करे और दो आचमन कर विधि सहित भस्म धारण करे और पुण्यावाचन करावे ।७९। फिर प्रोक्षण करे, शुद्ध देहसे होम द्रव्य तथा आचार्य दक्षिणा के निमित्त द्रव्यकोछोड़े ।८०। तथा शिवजी, ब्राह्मणों और भक्तोंकेहेतु सम्पूर्ण द्रव्यदेकर गुरुरूप शंकरके लिए ।८१। वस्त्र दक्षिणा आदि दे और प्रणाम पूर्वक पृथिवीमें दण्डवत्करे तथा धोयेहुये धागा, कौपीन, वस्त्र, दण्डादि लेकर ।८२। होम द्रव्य और समिधा आदि को लेकर समुद्र तट पर, नदी तट पर अथवा पर्वत या शिवालय में ।८३। अथवा वन, गोष्ठ आदि श्रेष्ठ स्थान का विचार कर आचमन करे और मानस जप रूपी मंजरी करे ।८४।

ब्राह्ममोंकारसहित नमो ब्राह्मणा इत्यपि ।
जपित्वा त्रिस्ततो ब्रूयादग्निमीले पुरोहितम्।८५
अथ महाव्रतमिति अग्निर्वै देवनामतः ।
तथैतस्य समाम्नायमिषे त्वोर्ज्जेत्वा वेति तत् ।८६
अग्न आयाहि वीयते शन्नो देवीरभीष्टये ।
पश्चात्प्रोच्य मयरसतजभनलगैः सह ।८७
संमितं च ततः पञ्चसंवत्सरमयं ततः ।
समाम्नायः समाम्नातः अथ शिक्षं वदेत्पुन ।८८
अथातो धर्मजिज्ञासेत्युच्चार्यपुनरंजसाः ।

अथातो ब्रह्मजिज्ञासा देवादीनपि संजपेत् ।८९
ब्रह्माणमिन्द्रं सूर्यञ्च सोमं चैव प्रजापतिम् ।
आत्मानमन्तरात्मानं ज्ञानात्मान मतः परम् ।९०
परमात्मानमपि च प्रणवाद्यं नमोंतकम् ।
चतुर्थ्यन्तं जपित्वा सक्तुमुष्टिं प्रगृह्य च ।९१

फिर ओंकार सहित ब्रह्ममन्त्र का और 'नमो ब्रह्मणे'को तीनबार जप करे 'अग्निमीडे पुरोहितम्'कहे ।८५। फिर 'महाव्रतमिति' और 'अग्निर्देवा-नामवमः तथा इसका समाम्नाय 'इषेत्वोर्जेत्वा' ।८६। 'अग्नआयाहिवीतये' और 'शन्नोदेवी०'इत्यादि कहकर म य र स त ज भ न ल ग का उच्चारण करे ।८७। इनका समाम्नाय पांच संगतसरमय कहा है 'मैं फिर कहूँगा' यह कहकर वृद्धिरादैच्'सूत्रका उच्चारणकरे ।८८। फिर 'अथातो धर्म जिज्ञासा' इस दर्शन सूत्रका उच्चारणकर पुनः 'ब्रह्मजिज्ञासा' यत्रका उच्चारण करे अथा केवल वेदमन्त्रोंका उच्चारणकरे ।८९। ब्रह्मा-इन्द्र-सोम-सूर्य-प्रजापति आत्मा-अन्तरात्मा और ज्ञानात्मा ।९०। तथा परमात्माका उच्चारण आदि में प्रणव और अन्तमें नमः संयुक्तकर चतुर्थी विभक्तियुक्त उच्चारण करके एक मुठ्टी सत्तू ग्रहण करे ।९१।

प्राश्याथ प्रणवेनैव द्विराचम्याथ संस्पृशेत ।
माभिमन्त्रं क्ष्वयमाण प्रणवाद्यान्नमोन्तकान् ।९२
आत्मानमन्तरात्मानं ज्ञानात्मान परं पुनः ।
आत्मानं च समुच्चार्य प्रजापतिमतः परम् ।९३
स्वाहांतान्प्रजपेत्पश्चात्पयोदधिघृतं पृथक् ।
त्रिवारं प्रणवेनैव प्राश्याचम्य द्विधाः पुनः ।९४
प्रागास्य उपविश्याथ दृढचित्तः स्थिरासन ।
यथोक्तविधिना सम्यक् प्राणायामत्रयञ्चरेत् ।९५

भक्षण करके प्रणव सहित दो बार सत्तू का आचमन करे और वक्ष्यमाण मन्त्रों से नाभि स्पर्श करे, उन मन्त्रों के आदि में प्रणव अन्त में नमः संयुक्त करे ।९२। फिर आत्मा, अन्तरात्मा, ज्ञानात्मा,

निज आत्मा और प्रजापतिका उच्चारणकरे।९३। अन्तमें स्वाहा लगाकर जपकरे,फिर दूध, दही और घृतको पृथक्-पृथक् तीन वार प्रणव उच्चारण पूर्वक चाटकर दोबार आचमनकर।९४। फिर पूर्वाभिमुख होकर दृढ़चित्त से स्थित होकर आसन पर बैठे और बिधिवत् तीन प्रणायाम करे।९५।

। प्रणव जप के अधिकार में विरजा होम,गायत्री जप।

अथ मध्याह्नसमये स्नात्वा नियतमानसः ।
गन्धपुष्पापाक्षतादीनि पूजाद्रव्याण्युपाहरेत् ।१
नैऋत्ये पूजयेद्देव विघ्नेश देवपूजितम् ।
गणानां त्वेति मन्त्रेणावाहयेत्सुविधानतः ।२
रक्तवर्ण महाकार्य सर्वाभरणभूषितम् ।
पाशांकुशाक्षामीष्टञ्च दधानं करपङ्कजैः ।३
एवमावाह्य सन्ध्यायां शम्भुपुत्र गजाननम् ।
अभ्यर्च्या पायसापूपनालिकेरगुडादिभिः ।४
नैवेद्यमुत्तमं दद्यात्ताम्बूलादिमथापरम् ।
परितोष्य नमस्कृत्य निर्विघ्नं प्रार्थयेत्तत ।५
औपत्सनाग्नौ कर्त्तव्यां स्वगृह्योक्तविधानत ।
आज्यभागान्तमाग्नेयां मखतन्त्रमतः परम् ।६
भूः स्वाहेति त्रयृचा पूर्णाहुतिं हुत्वा समाप्य च ।
गायत्रीं प्रजपेद यावदपराह्णामवन्द्रितः ।७

स्कन्दजीने कहा-फिर मध्याह्न के समय प्रसन्न मनसे स्नान करे तथा गंध,पुष्प,अक्षत आदि पूजन-सामग्री को ।१। विधिवत् नैऋत्यकी ओर देव पूजित विघ्नेशकी पूजाकर 'गणानात्वा' मंत्रसे आह्वाहनकरे।२। लालवर्ण वाले,महाकाय, सभी आभूषणों को धारण किये हुए,हाथों में पाश अंकुश, अक्ष लिए हुए।३। इस प्रकार शंकर सुवन गणेशजी का ध्यानपूर्वक क्रमसे गंधादि के द्वारा पूजन करे और खीर,पुआ,नारियल, मिष्टान्न इत्यादि।४। तथा नैवेद्यसे सन्तुष्टकर ताम्बूल भेंट करे तथा विघ्नेशकी प्रार्थनाकर उन्हें प्रसन्न करके नमस्कार करे।५। अपने गृह्य-सूत्रकी विधिसे आज्यके श्रेष्ठ

भागका सोमकरे, उसमें जो अग्नि मुख तन्त्र है ।६। उस करके 'भूःस्वाहा' उच्चारणकर श्रुत्वासे पूर्णाहुति दे और हवन समाप्त करके अपराह्न समाप्त होने तक गायत्री का जप करता रहे ।७।

अथ सायन्तनीं सन्ध्यामुपास्य स्नानपूर्वकम् ।
सायमौपासन हुत्वा मौनी विज्ञापयेद् गुरुम् ।८
श्रपयित्वा चरुं तस्मिन्समिदन्नाज्यभेदतः ।
जुहुयाद्रौद्रसूक्तेन सद्योजातादिपञ्चभिः ।९
ब्रह्माभिश्च महादेवं सांबं वह्नौ विभावयेत् ।
गौरीर्मिमाय मन्त्रेण हुत्वा गौरीमनुस्मरन् ।१०
ततोऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति जुहुयात्सकृत् ।
हुत्वोपरिष्टाद्यन्त्रं तु ततोऽग्नेरुत्तरे बुधः ।११
स्थित्वासने जपेन्मौनी चैलाजिनकुशोत्तरे ।
आब्राह्मं च मूहुर्त्तं तु गायत्रीं दृढमानसः ।१२
ततः स्नात्वात्वशक्तश्चेद्भस्मना वा विधानताः ।
श्रपयित्वा चरुं तस्मिन्नग्नावेवाभिधारितम् ।१३
उदगुद्वास्य बर्हिष्यासाद्याज्येन चरुं ततः ।
अभिधार्य्य व्याहृतीश्च रौद्रसूक्तश्च पञ्च च ।१४

फिर स्नान करके सन्ध्याकालकी सन्ध्यापूर्ण करके और सायंकालीन हवनकरके, मौनरहता हुआ गुरुको आज्ञाप्राप्त करे ।८। समिधा, अन्न, आज्य के चरुको एकत्रकर रुद्र सूक्त अथवा सद्योजात आदि पाँचमन्त्रोंसे होमकरे ।९। ईशाद्रि पाँच ब्रह्म मन्त्रोंसे पार्वती सहित शिवजी का अग्निमें ध्यान करें तथा 'गौरीर्मिमाय' मन्त्रसे हवन कर पार्वतीजी का स्मरण करे ।१०। फिर 'अग्नेय स्विष्ट कृते स्वाहा' मन्त्र से एक बार आहुति देकर हवन युक्त तन्त्रको समाप्तकर अग्निके उत्तर ओर ।११। मौन होकर कुश या मृगचर्म के आसन पर बैठकर ब्रह्ममुहूर्त्त होने तक दृढ़ मनसे गायत्री का जप करे ।१२। फिर स्नान करे, यदि जल स्नान न कर सके तो भस्म स्नान करे, फिर उस चरुको संयुक्तकर अग्निपर रखे ।१३। उसके जलको अलग करके

कुश पर बैठकर उरु को घी में मिलावे और व्याहृती का उच्चारण कर रुद्र सूक्त का जप करे ।१४।

जपेद् ब्रह्माणि सन्धार्य चित्तं शिवपदांबुजे ।
प्रजापतिमथेन्प्रञ्चा विश्वे देवास्यतः परम् ।१५
ब्रह्माणं सचतुर्थ्यन्तं स्वाहातान् प्रणवादिकान् ।
सजप्य वाचयित्वाऽथ पुण्याऽह क्ष ततः परम् ।१६
परस्तात्तंत्रमग्नये स्वाहे यग्निमुखावधि ।
निर्वत्य पश्चात्प्राणाय स्वाहेत्यारभ्य पंचभि ।१७
साज्येन चरुणा पश्चादग्नि स्विष्टकृतं हनेत् ।
पुनश्च प्रजतेत्सूक्तं रौद्रं ब्रह्माणि पञ्च च ।१८
महेशादि चतुर्व्यूहमन्त्रांश्च प्रजपेत्पुनः ।
हुत्वोपरिष्टात्तन्त्रं तु स्वशाखोक्तेन वर्त्मना ।१९
तत्तद्देवान्समुद्दिश्य सांग कुर्याद्विचक्षणः ।
एवमग्निमुखाद्य यत्कर्म तन्त्र प्रवर्तितम् ।२०
अतः परं प्रजुहयाद्विरजाहोममात्मनः ।
षड्विंशत्तत्वरूपेऽस्मिन्देहे लीनस्य शुद्धये ।२१

फिर ईशानादि पंचब्रह्म का उच्चारण कर शिवजी के चरण कमल में मन लगावे, फिर प्रजापति इन्द्र, विश्वेदेवा ।१५। तथा ब्रह्माके नाम के अन्त में नमः जोड़े तथा थादि में प्रणव लगाकर चतुर्थी विभक्ति सहित उच्चारणकरे । इस प्रकार जप और पुण्याहवाचन करके ।१६। तंत्र के समक्ष 'अग्नये स्वाहा' कहे और अग्नि के मुखकी ओर से निवृत्त होकर प्राणाय स्वाहा, अपनाय स्वाहा आदि मंत्रों से पंचाहुति दे ।१७। फिर समिधा, अन्न, घृतकेभेदसे हवनकरे और चरुतथा घृतसे अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा' उच्चारण पूर्वक होम करे, फिर रुद्रसूक्त और पञ्चब्रह्म के मत्रोंका जप करे ।१८। फिर महेशादि चतुर्व्यूहके मंत्रोंका जपकर अपनीशाखा कीविधिसे महेशादि मंत्रोंसे होम करे ।१९। उन-उन देवताओं के लिए तत्व के ऊपर आहुतिदे, इस प्रकार अग्नि मुखसे कर्मतंत्रको प्रवृत्त करे ॥२०। फिर अपनी शुद्धि के लिए विरजा होम करे । प्रकृतिआदि जो छब्बीस तत्त्व इस देह में हैं ।२१।

तत्वान्येतानि मद्देहे शुध्यन्तामित्यनुस्मरन् ।
तत्रात्मतत्वशुद्ध्यर्थं मन्त्रैरारुणकेतकैः ।२२।
पठ्यमानैः पृथिव्यादिपुरुषांतं क्रमान्मुने ।
साज्येन चरुणा मौनी शिवपादाम्बुज स्मरन् ।२३।
पृथिव्यादि च शब्दादि वागाद्यं पंचकं पुनः ।
श्रोत्राद्यं च शिरःपार्श्वपृष्ठोदरचतुष्टयम् ।२४।
जँघा च योजयेत्पश्चात्त्वगाद्य धातुसप्तकम् ।
प्राणाद्यं पचकं पश्चादन्नाद्यं कोशपचकम् ।२५।
मनश्चित्तं च बुद्धिश्चाहङ्कृतिः ख्यातिरेव च ।
सङ्कल्प स्तु गुणाः पश्चात्प्रकृतिःपुरुषस्ततः ।२६।
पुरुषस्य तु भोक्तृत्व प्रतिपन्नस्य भोजने ।
अन्तरङ्गतया तत्वपचक परिकीर्तितम् ।२७।
नियतिः कालरागश्च विद्या च तदन्तरम् ।
कला च पचकमिद मायोत्पन्नं मुनीश्वर ।२८।

उनकी शुद्धि के लिए विरजा हवन करके कहे मेरे शरीर के यह सब तत्त्व शुद्ध हो जाँय फिर आत्मशुद्धि के लिए तैत्तिरीय आरण्य के मद्र प्रपाठक में अरुण केतुक मन्त्र ।२२। अग्नयोनिमष्टं स सप्त पुरुषा तक उच्चारण कर घृत लेकर मौन होकर शिवजीके चरणकमलका स्मरण करे ।२३। पृथिवी आदि, शब्द आदि और वर्ग आदि पाँच तथा श्रोत्र आदि पाँच इन्द्रिय, शिर,पीठ, उदर, पाद यह चार ।२४। तथा जांघ को युक्त कर फिर त्वक् आदि सप्त धातु फिर प्राणादि पाँच और अन्नादि पाँच कोष ।२५। मन, बुद्धि, अहंकार, ख्याति, संकल्प, गुण और प्रकृति पुरुष ।२६। पुरुष का भोक्तापन पाँच तत्व कहे हैं.नियति, काल सहित, राग, विद्या, कला पंचक यह सब माया से ही उत्पन्न हैं ।२७।२८।

मायां तु प्रकृतिं विद्यादिति माया श्रुतीरिता ।
तज्जान्येतानि तत्त्वानि श्रुत्युक्तानि न संशयः ।२९।
कालस्वभावो नियतिरिति च श्रुति ब्रवीत् ।
एतत्पचकमेवास्य पचकंचक्रमुच्यते ।३०।

अजानन्पश्च तत्वानि विद्वानपि च मूढधीः ।
निपत्याधस्तात्प्रकृतेरुपरिष्टात्पुमानयम् ।३१।
काकाक्षिन्यायमाश्रित्य वर्त्तते पार्श्वताऽन्वहम् ।
विद्यातत्वमिदं प्रोक्तं शुद्धविद्यामहेश्वरौ ।३२।
सदाशिवश्च शक्तिश्च शिवश्चेदं तु पञ्चकम् ।
शिवतत्वमिद ब्रह्मन्प्रज्ञानब्रह्मवाग्यतः ।३३।
पृथिव्यादिशिवांत यत्तत्वजात मुनीश्वर ।
स्वकारणलय द्वारा शुद्धिरस्य विधीयताम् ।३४।
एकादशानां मन्त्राणां परस्मैपदपूर्वकम् ।
शिवज्योतिश्चतुर्थ्यंतमिदं पदमथोच्चरेत् ।३५।

श्रुति में प्रकृति को माया हीं कहा गया है यह तत्व उसी से उत्पन्न हुए बताते हैं ।२९। श्रुति कहतीहैकि स्थिति कालस्वभावको ही कहते हैं । इसी पचक का नाम पंचक चुक है ।३०। इन पाँच तत्वों को जाने बिना विद्वान् भी मूर्ख हो जाता है, प्रकृति के नीचे नियत तथा ऊपर पुरुष है।३१। काकाक्षि न्यायसे यह पुरुष नियत प्रकृति में स्थित होता है,इसी को विद्या तत्व कहा है शुद्ध विद्या महेश्वर।३२।सद शिव शक्ति और शिवयही पंच कहे । 'प्रज्ञान ब्रह्म' वाक्य से शिवतत्व ही कहा है।३३।जो पृथिवी से शिव तक तत्व हैं अपने कारण प्रकृतिमें लीन होने के द्वारा इसकी शुद्धि करे।३४। परस्मैपद पूर्वक ग्यारह मन्त्रों को शिव ज्योति तक उच्चारण करे ।३५।

न ममेति वदेत्पश्च उद्देशत्याग ईरितः ।
अतः पर विविद्यौति कष्टपोतेति मन्त्रयोः ।३६।
व्यापकाय पदस्यान्ते परमात्मन इत्यपि ।
शिवज्योतिश्चतुर्थ्यन्त विश्वभूत पद पुनः ।२७।
धसनोत्सृकशब्दश्च चतुर्थ्यंतमथो वदेत् ।
परस्मैपदमुच्चार्य देवाय पदमुच्चरेत् ।३८।
उत्तिष्ठत्वेति मन्त्रस्य विश्वरूपाय शद्वतः ।
पुरुषाय पदं ब्रूय दोंस्वाहेत्यस्य सवेदत् ।३९।
लोकेत्रयपदस्यान्ते व्यापिने परात्मने ।
शिवायेदं न मम पदं ब्रूयादतः परम् ।४०

स्वशाखोक्तप्रकारेण पुस्तात्तन्त्रकर्म च ।
निर्वर्त्य सर्पिषा मिश्रं चरुं प्राश्य परोधसे ।४१।
प्रदद्याद्दक्षिणां तस्मै हेमादिपरिबृंहिताम ।
ब्रह्माणमुद्वास्य ततः प्रातरोपासनं हुनेत ।४२।

फिर 'इद न मम' कहे, प्रकृति देवता के लिए इसीको त्याग कहतेहैं। ।३६। फिर विविद्यै स्वाहा, कशोतकाय स्वाहा, व्यापकाय परमात्मने इदन मम, इस प्रकार कहकर शिवा ज्योति चतुर्थी संयुक्त कर तथा ।३७। घसनोत्सुकायेदं इस प्रकार चतुर्थी विभक्ति से कहे तथा त्रैलोक्य व्यापि ने परमात्माने देवाय इद न मम कहे ।३८। 'उत्तिष्ठ' मन्त्रसे ॐ विश्वरूपाय पुरुषाय स्वाहा इस प्रकार उच्चारण करे ।३९। फिर त्रैलोक्य व्यापि ने परमात्म ने इत्यादि मन्त्रसे भागदे ।४०। अपनी शाखा के विधान से तन्त्र कर्म करके गुरु के लिए घृतयुक्त चरुको किंचित् भक्षण करावे ।४१। और उन्हें सुवर्णादि की दक्षिणा दे फिर ब्रह्मा को विदा करे और प्रातःकालीन उपासना करता हुआ हवन करे ।४२।

समांसञ्चन्तु मरुत इति मन्त्रञ्जपेन्नर ।
याते अग्न इत्यनेन मन्त्रणाग्नौ प्रताप्य च ।४३।
हस्तमग्नौ समारोप्य स्वात्मन्यद्वै तधामनि ।
प्रभातिकीं ततः सन्ध्यामुपास्यादित्यमप्यथ ।४४।
उपस्थाय प्रविश्याप्सु नाभिदघ्न प्रवेशयन् ।
तन्मन्त्रान्प्रजपेत्प्रीत्या निश्चलात्मा समुत्सुकः ।४५।
आहिताग्निस्तु यः कुर्यात्प्र जापत्येष्टिमाहिते ।
श्रोते वैश्वानरे सम्यक् सर्ववेदसदक्षिणाम् ।४६।
अथाग्निमात्मन्यारोप्य ब्राह्मणः प्रव्रजेद् गृहात् ।
सावित्री प्रथमं पादं सावित्रीमित्युदीर्य च ।४७।
प्रवेशयामि शब्दान्ते भूरोमिति च संवदेत् ।
द्वितीय पादमुच्चार्य सावित्रीमिति पूर्ववत् ।४८।
प्रवेशयामि शब्दान्ते भुवरोमिति सवदेत् ।

फिर समाँ सिचन्तु मरुतः मन्त्र जपे और 'याते अग्न' इसमन्त्रसे अग्नि को प्रज्वलित करे ।४३। अद्वैत तेज वाले अग्निको हाथसे अपने आत्मा में

आरोपित करे और प्रातःकालीन सन्ध्योपासन करके सूर्य को नमस्कार करे। ।४४। फिर नाभि तक जलमें प्रविष्ट होकर प्रीयिपूर्वक उनमन्त्रों का जप करे।४५। तथा अहिताग्नि प्राजापत्येष्टि करे, वह भले प्रकार से श्रौत वश्वानर में होम करके सब वेद और दक्षिणा सहित दान कर।४६।अग्नि को आत्मा में आरोपित कर घर से निकलकर सन्यासी होजाय तथा गायत्री के प्रथम पाद का उच्चारण करके।४७। सावित्री प्रवेशयामि ऐसा कहे और भूरोम् उच्चारण कर फिर गायत्री का द्वितीय पाद कहे।४८। फिर सावित्री प्रवेशयामि कहकर भूवरोम् कहे और तृतीयपादका उच्चारणकरे४९

प्रवेशयामि शद्धान्ते सवरोमित्युदीरयेत्ः।
त्रिपादमुच्चरेत्पूर्वं सावित्रीमित्यतः परम् ।५०।
प्रवेशयामि शद्धान्ते भूर्भुव सवरोमिति।
उदीरयेत्परं प्रीत्या निश्चलात्मा मुनिश्वर ।५१।
इयम्भगवती साक्षाच्छंकरार्द्ध शरीरिणी।
पञ्चवक्त्रा दशभुजा त्रिपञ्चनयनोज्ज्वला ।५२।
नवरत्नकिरीटोद्यच्चन्द्रलेखावतसिनी।
शद्धस्फटिकसकाशा दशाधयुधरा शुभा ।५३।
हारकेयूरकटकांकिकिणीनपुरादिभिः।
भूषितावयवा दिव्यवसना रत्नभूषणा ।४५।
विष्णूना विधिना देवऋषिगन्धर्वनायकेः।
मानवैश्च सदा सेव्या सर्वात्मव्यापिनी शिवा ।५५।
सदा शिवस्य परमा धर्मपत्नी मनोहरा।
जगदम्बात्रिजननी त्रिगुणा निर्गुणाप्यजा ।५६।

फिर सावित्रीं प्रवेशयामि कहता हुआ सुवरोम् कहे और गायत्री के तीन पादों का उच्चारण करे ५०।फिर सावित्रीं प्रवेशयामि कह कर भूर्भुवः सुवरोम् इस प्रकार उच्चारण करे।५१। यह भगवती साक्षात भगवान् शिव के आधे अङ्ग वाली है पाँच मुख दश भुजा पन्द्रह नेत्र तथा उज्ज्वल देह है। ।५२। नवरत्न किरीट से जगमगाती, उदय हुए चन्द्र जैसी कान्ति वाली स्वच्छस्फटिक मणिके समान दस आयुधधरिणी ।५३। हार, केयूर खडरा

कौंधनी तथा नूपुर आदि से विभूषित देह वाली दिव्य वस्त्र तथा रत्नों के आभूषण धारण किये हुए।५४। विष्णु ब्रह्मा, देव,ऋषि, गन्धर्व, दानव और मनुष्यों के द्वारा सेवा के योग्य तथा सबकी आत्मा में सदैव व्याप्त।५५। शिवा भगवान् शिवकी मनोहारिणी पत्नी हैं। जो संसार की माता, त्रैलोक्य को उत्पन्न करने वाली त्रिगुणात्मिका तथा गुणों से परे हैं।५६।

इत्येव सविचार्याथ गायत्रीं प्रजपेत्सुधीः।
आदिदेवीं च त्रिपदां ब्राह्मणत्वादिदामजाम्।५७।
यो ह्यन्यथा जपेत्पापो गायत्रीं शिवरूपिणाम्।
स पच्यते महाघोरे नरके कल्पसख्यया।५८।
सो व्याहृतिभ्यः सजाता तास्वेव विलय गता।
ताश्च प्रणवसम्भूताः प्रणवे विलय गता।५९।
प्रणवः सर्ववेदादि प्रणवः शिववाचकः।
मन्त्राधिराजराजश्च महाबीजं मनुः पर,।६०।
शिवो वा प्रणवो ह्येष वा शिवः स्मृतः।
वाच्यवावाचकयोर्भेदो नात्यन्तं विद्यते यतः।६१।
एनमेव महामन्त्रञ्जीवानाञ्च तनुत्यजाम्।
काश्यां सश्रात्य मराणे दत्ते मुक्ति परां शिवः ६२।
तस्मदेकाक्षर देवं शिवं परमकारणम्
उपासते यतिश्रेष्ठो हृदयांभोजनमध्यगम्।६३।

इस प्रकार ध्यान कर गायत्री का जप करना चाहिये क्योंकि यही आदि देवी त्रिपदा ब्राह्मणत्व के देने वाली तथा स्वयं अजन्मा है ५७ जो पापकर्मी मनुष्य शिव स्वरूप गायत्री को इसके विपरीत समझता है, वह घोरनरकगामी होता है।५८।वह गायत्री व्याहृतियोंसे उत्पन्नहुई तथा उन्हीं में लीन होती हैं और वह व्याहृतियां प्रणवसेउत्पन्नहोतीं तथा प्रणव मेंलय होती है।५९। वेदों का आदि प्रणव ही है, यही शिव का वाचक है तथा मन्त्रों का अधीश्वर और बीज मन्त्र है।६०। प्रणव ही शिव है तथा शिव ही प्रणव है वाचक में किंचित् भेद नहीं है।६१।काशी में शरीर त्याग करने वालों को इसी मन्त्र का उपदेश देकर शिवजी मुक्तकर देते हैं।६२।

इस कारण इन एकाक्षर श्रेष्ठ परमदेव का जो यति अपने हृदय कमल में पूजन करते हैं।६३।

मुमुक्षवोऽपरे धीरां विरक्ता लौकिका नराः।
विषयान्मनसा ज्ञात्वोपासते परम शिवम्।६४।
एव विलाप्यगायत्रीं प्रणवे शिववाचके।
अह वृक्षस्य रेरिवेत्यनुवाकं जपेत्पुनः।६५।
यश्छन्दसामामृषभ इत्यानुवाकमुपक्रमात्।
गोपायांतं जपन्पश्चादुत्थितोऽहमितीरयेत्।६६।
वदेज्जपेत्रिधा मदन्मध्योच्छ्रायक्रमान्मुने।
प्रणवं पूर्वमद्धृस्य सृष्टिस्थितिलयक्रमात्।६७।
तेषामथ क्रमाद् भूयाद् भूःसन्यस्तं भुवस्तथा।
सन्यस्तं सुवरित्युक्त्वा संन्यस्तं पदमुच्चरन्।
सर्वमंत्राद्यः प्रदेशे मयेति च पदं वदेत्।
प्रणवं पूर्वमुदधृत्य समष्टिव्याहृतीर्वदेत्।६९।
समस्तमित्यतो ब्रूयान्मयेति च समब्रवीत्।
सदाशिवं हृदि ध्यात्वा मन्दादीति ततो मुने।७०।

तथा जो अन्य धीर,मुमुक्षु, विरक्त अथवा लौकिक जन अपने मनको विषयों से हटाकर शिवजी की उपासना करते हैं।६४। तथा जो गायत्री को शिव वाचक प्रणवमे लीनकर अह वृक्षस्यरेरिव इस अनुवाक को जप कर।६५। तथा यश्छदसाम ऋषभः इस अनुवाक का जप करते तथा श्रून में गोपाये इन तैत्तरीय शाखा के अनुवाकों को जपकर उत्थितोहम्कहे।६६। और तीनों इच्छाओंका त्याग करता हुआ कहे कि मैं पुत्रकी इच्छासे पृथक हुआ हूँ,धन की इच्छासे पृथक हुआ हूँ,लोकेषणासे पृथक हुआहूँ इस प्रकार क्रम से कहे। प्रथम मद,फिर मध्यम, फिर अधिक शब्दसे जप करे, प्रणव का उद्धार कर सृष्टि,स्थिति औरलयके क्रमसेकरे।६७।उनका क्रम से—भूः संन्यस्तं,भुवःसन्यस्तं,सुवःसंन्यस्तं,ऐसाक्रम सेकहें६८ इन सब मन्त्रों के अन्तमें 'माया'लगावे और आदिमें प्रणव संयुक्तकरेऔर भूर्भुवःस्वःइससमष्टिभ्याहृतिका

उच्चारण करे।६९। संन्यस्तं मया कहकर हृदय में शिवजी का ध्यान करे तथा मन्द, मध्यम और उच्च स्वर से जप करे।७०।

प्रैषमंत्राँस्त जप्त्वैवं सावधानेन चेतसा।
अभयं सर्वभूतेभ्यो मत्तः स्वाहेति संजपन्।७१।
प्राच्याँ दिश्यप उद्धृत्य प्रक्षिपेदं जलिं ततः।
शिखां यज्ञोपवीतं च यत्रोत्पाट्य च पाणिना।७२।
गहीत्वा प्रणव भूश्च समुद्रं गच्छ संवदेत्।
बह्निजायाँ समुच्चार्य सोदकांजलिना ततः।७३।
अप्सु हूयादथ प्रेषैरभिमन्त्र्य त्रिधा त्वपः।
प्राश्य तीरे समागत्य भूभौ वस्त्रादिकं त्यजेत्।७४।
उदङ्मुख प्राङ्मुखो वा गच्छेत्सप्तपदाधिकम्।
किञ्चिद् दूरमथाचार्यस्तिष्ठ तिष्टेति संवदेत्।७५।
लोकस्य व्यवहारार्थं कौपीनं दण्डमेव च।
भगवन्स्वीकुरुष्वेति दद्यात्स्वेनैव पाणिना।७६।
दत्वा सूदीरं कौपीनं काषायवसनं ततः।
आच्छाद्याचम्य च द्वेधा तं शिष्यमिति संवदेत्।७७।

सावधानी से इस प्रकार प्रेषमन्त्र को जपकरके कहे अभय सर्वभतेभ्यो मत्त:स्वाहा अर्थात् मुझसे सब जीवों को अभय हो.इसका जपकरे।७१। पूर्व दिशामें अन्जलीमें जललेकर छोड़ेतथा शिखा, यज्ञोपवीत को गायत्री मन्त्र पूर्वकहाथ मे उखाड़कर।७२।ग्रहण करे तथाप्रणव सहित वह्निजाया स्वाहा तथ ॐभू समुद्रं गच्छ स्वाहा कहकर हाथमें जलावे।७३। तथा प्रेष मन्त्रों से शिखा और यज्ञोपवीत कोजलमें छोड़दे,और जलसे आचमन कर वस्त्रादि भी पृथ्वीमें त्यागदे।७४। उत्तराभिमुख या पूर्वाभिमुख होकर सात पग चले। कुछ दूर चलने पर आचार्य ठहरो कहे।७५। और आचार्य कहे कि लोक व्यवहारार्थ कौपीन स्वीकार करिये यह कहकर आचार्य अपने हाथ से कौपिन दे।७६। आचार्य की बात सुनकर धागे सहित कौपिन काषाय वस्त्र से देहको ढक करदो चार आचमन करे,तब आचार्य उससेकहे।७७

इन्द्रस्य वज्रोऽसि तत इति मन्त्रमुदाहरेत् ।
सम्प्रार्थ्य दण्डगृह्णीयात्सखाय इति सजपन् ।७८।
अथ गत्वा गुरोःपार्श्वं शिवपादाम्बुज स्मरन् ।
प्रणमेद्दण्डवद् भूमौ त्रिवारं संयतात्मवान् ।७९।
पुनरुत्थाय च शनैः प्रेम्णा पश्यन्गुरुं नजम् ।
कृतांजलि पुटस्तिष्ठेद्गुरुपादसमापितः ।८०।
कर्मारम्भात्पूर्वमेव गृहीत्वा गोमयं शुभम् ।
स्थूलामलकमात्रेण कृत्वा पिण्डान्विशोषयेत् ।८१।
सौरैस्तु किरणैरेव होमारम्भाग्निमध्यगान् ।
निक्षिप्य होमसम्पूर्त्तौ भस्म सगृह्यगोपयेत् ।८२।
ततो गुरुः समादाय विरजानलज सितम् ।
भस्म तेनैव त शिष्यमग्निरित्यादिभिः क्रमात् ।८३।
मत्रै रगानि संस्पृश्य मूर्द्धादिचरणान्ततः ।
ईशानाद्यैः पञ्चमत्रैः शिर आरभ्य सर्वतः ।८४।

इन्द्रस्य तज्रोसि तत् इस मन्त्र को जपता हुआ सखाय मां' कहता दण्ड ग्रहण करे ।७८।फिर शिवजी के चरण कमलों के ध्यान पूर्वक गुरु के समीप जाकर पृथ्वीमें लेटकर तीन बार प्रणामकरे ।७९। फिर उठकर प्रेमपूर्वक गुरु को देखे और उसके चर के पास हाथ जोड़कर खड़ा हो।८०। कर्मका आरम्भ करने से पहिले ही गोबर लेकर बड़े २ आमलों के समान उसके गोले बनाकर सुखाले।८१।जब वे धूपसे सूखजाँय तब उन्हें होमाग्नि के बीच में रख दे,होमके सम्पूर्ण होनेके लिए उस भाग को रख ले ।८२। तब गुरु विरजाग्नि के बने श्वेत पिंडोंकी भस्म को अग्निरिति भस्म' इत्यादि मन्त्रोंसे ।८३। सब अङ्गों में लगाकर सिर से चरणों तक ईशानादि' पाँच मन्त्रों से आरम्भ करे ।८४।

समधृत्य विधानेन त्रिपुण्ड्रं धारयेत्ततः ।
त्रियायुषैस्त्र्यम्बकैश्च मूर्घ्नं आरभ्य च क्रमात् ।८५।
ततः सद्भक्तियुक्तेन चेतसा शिष्यसत्तमः ।

हृत्पङ्कजे समासीनं ध्यायेच्छिवमुमासखम् ।८६।
हस्तं निधाय शिरसि शिष्यस्य स गुरुर्वदेत् ।
त्रिवारं प्रणव दक्षकर्णे ऋष्यादिसंयुतात् ।८७।
ततः कृत्वा च करुणां प्रणवस्यार्थमादिशेत् ।
षड्विधार्थपरिज्ञानसहितं गुरुसत्तमः ।८८।
दिष्टद्प्रकारं स गुरुं प्रणमेद भुवि दण्डवत् ।
तदधीनो भवेन्नित्य नान्यत्कर्म समाचरेत् ।८९।
तदाज्ञया ततः शिष्यो वेदान्तार्थानुसारतः ।
शिवज्ञानपरो भूय त्सुगुणागुणभेदतः ।९०।
ततस्तनैव शिष्येण श्रवणाद्यङ्गपूर्वकम् ।
प्राभातिकाद्यनुष्टानं जपान्तं कारयेद्द गुरुः ।९१।

तथा सब प्रकार देहमें भस्म मल कर त्रिपुण्ड धारण करे । त्रियायुषं: तथा त्र्यम्बकं यजामहे मन्त्रोंसे आरम्भ करे ॥८५॥ और उत्तम भक्ति से सम्पन्न श्रेष्ठ शिष्य अपने हृदय कमल में पार्वती सहित शिवजीकाध्यान करे ।८६। फिरप्रसन्न होकर गुरुशिष्यके शिर पर हाथ रखे और ऋषि आदि का उच्चारण कर उसके दक्षिण कान में मन्त्र कहे और प्रणव का तीन प्रकार से उच्चारण करे ।८७ फिर उसके अर्थ को कृपापूर्वक कहे । गुरुको अध्याय में वर्णित छः प्रकार के अर्थका ज्ञानकराना चाहिये ॥८८॥ फिर शिष्य बारह प्रकारसे गुरुको पृथिवीमें प्रणाम कर उनके अधीन रहे तथा उनकी आज्ञा के बिना अन्य कार्यों का आरम्भ न करे ॥८९॥ तथा गुरु आज्ञा से शिष्य सदैव वेदान्त ज्ञानमें तत्पर रहे और सगुण-अगुण भेद से शिव ज्ञान प्राप्त करे ॥९०॥ वेदान्त मार्ग के अनुसार नित्य प्रति गुरु की आज्ञा में रहे तथा श्रवणादि युक्त शिव ज्ञानमें तत्पर हो । प्रातः कालीन अनुष्ठान को गुरु जपके अन्त तक करावे। ।९१॥

पूजां च मण्डले तस्मिन्कैलासप्रस्तराह्वये ।
शिवोदितेन मार्गेण शिष्यस्तत्रैव पूजयेत् ।९२।
देवं नित्यमशश्चेत्पूजितुं गुरुणा शुभम् ।

स्फटिकं पीठिकोपेतं गृणहीयाल्लिगमैश्वरम् ।९३
वरं प्राणपरित्यागश्छेदनं शिरसोऽपि मे ।
न त्वनभ्यर्च्य भंजीयां भगवन्तं तिलोचनम् ।।९४
एवं त्रिवारमुच्चोर्य शपथं गुरुसन्निधौ ।
कुर्याद् दृढमनाः शिष्यः शिवभक्ति समुद्धहन् ।।९५
तत एवं महादेवं नित्यमुद्युक्तमानसः ।
पूजयेत्परया भक्तया पञ्चावरणमार्गतः ।।९६

तथा शिष्य कैलाश प्रस्तर नामक मंडल में शिव वर्णित मार्ग से पूजन करे।।९२।। गुरु पूजित देवता के पूजन करने में नित्यप्रति समर्थ न हो तो स्फटिक सिंहासन सहित एक शिवलिंग ग्रहणकरे तथानित्यप्रति देव-पूजन और गुरु पूजन न कर सके तो शिवलिंगकाही पूजनकरे । ९३।। चाहे प्राण चला जाय शिर कटजाय, परन्तु त्रिनेत्र भगवान् शंकरका पूजनकिये बिना भोजान न करे ।।९४ इस प्रकार गुरुके निकट तीन बार सौगन्ध कर दृढ़ मनसे शिष्य शिवकी भक्तिकरे ।.९५।। तथा उत्कण्ठित मनसे परम भक्ति पूर्वक नित्य उसी लिंग में प्रसन्न होकर शिवजीका पांच आवरण के मार्ग से पूजन करे ।९६।

।। षट् प्रकार कथन पूर्वक ओंकार स्वरूप वर्णन ।।

भगवन्षण्मुखाशेषविज्ञानमृतवारिधे ।
विश्वामरेश्वरसुत प्रणतार्त्तिप्रभंजन ।।१
षड्विधार्थपरिज्ञानमिष्टदं किमुदाहृतम् ।
के तत्र षड्विधा अर्थाः परिज्ञान च किं प्रभो ।।२
प्रतिपादश्च कस्तस्य परिज्ञाने च किं फलम् ।
एतत्सर्वं समाचक्ष्व यद्यत्पृष्टं महागुह ।।३
एतमर्थमविज्ञाय पशुशास्त्रविमोहितः ।
अद्याप्यहं महासेन भ्रान्त श्च शिवमायया ।।४
अहं शिवपदद्व द्वज्ञानामृतरसायनम् ।
पीत्वा विगतसम्मोहो भविष्यामि यथा तथा ।।५

कृपामृतार्द्रया दृष्ट्या विलोक्य सुचिरं मयि ।
कर्त्तव्योऽनुग्रहः श्रीमत्पाब्जशरणागते ॥६
इति श्रुत्वामुनीन्द्रोक्तं ज्ञानशक्तिधरो विभुः ।
प्राहान्यदर्शनमहासंत्रासजनक वचः ॥७

वामदेव ने कहा—हे षडानन ! हे विज्ञानामृत्त के सिन्धो ! हे सर्वेश्वर हेदीन दुःखहर्ता शिवपुत्र ! ।।१।। छः प्रकारके अर्थका ज्ञानकौन-साहै ? वह किस प्रकार के इष्ट का दाता है ? छः प्रकारके अर्थ कौन-सेहै तथा उनका ज्ञान क्या है ? । २।। इसका प्रतिपाद्य कौन है ?उससे ज्ञानका फल क्या है! हेस्कन्दजी ! आप इस अर्थ को हमारे प्रतिकहें ।।३।। मैं इसअर्थ के ज्ञान बिना जीवशास्त्र से भ्रमाहुआ शिवजीकी मायासे मोहित हो रहा हूँ । ४।। मैं शिवपद के ज्ञानमृत रसायनको पीनेका इच्छूक हूँ जिससे मैं मोह रहित होजाऊँ ।।५।। इस प्रकार कृपामृतमयी दृष्टि से मुझे देख कर मुझ पर अनुग्रह करें, में आपकी शरण में आया हूँ ।। मुनिकी यह बातसुन करज्ञान शक्ति से सम्पन्न स्कन्धजी ने शिवशास्त्रसे विरुद्ध शास्त्रों को मानने वाले के प्रति त्रास देने वाले वचन कहे ।७।

श्रूयतां मुनिशार्दूल त्वया यत्पृष्टमादरात् ।
समष्टिव्यष्टिभावेन परिज्ञान महेशितुः ॥८
प्रणवार्थपरिज्ञानरूपं तद्विस्तरादहम् ।
वदामि षड्विधार्थैक्यपरिज्ञानेन सुव्रत ॥९
प्रथमो मन्त्ररूपः स्याद् द्वितीयो मन्त्रभावितः ।
देवतार्थस्तृतीयोऽर्थः प्रपञ्चार्थस्ततः परम्॥ १०
चतुर्थः पचमार्थःस्याद् गुरूरूपप्रदर्शकः ।
षष्टः शिष्यात्मरूपोऽर्थः षड् विधार्थाः प्रकीर्त्तिताः ॥ ११
येन विज्ञातमात्रेण महाज्ञानी भवेन्नरः ॥१२
अद्याः स्वरः पंचमश्च पञ्चमान्तस्ततः परः ।
बिन्दुनादौ पंचार्णाः प्रोक्ता च वेदैर्न चान्यथा ॥१३

एतत्समाष्टिरूपो हि वेदादिः समुदाहृतः ।
नादः सर्वसमष्टिः स्याद्बिंद्वाढयं यच्चतुष्टयम् ।१४।

स्कन्दजी ने कहा-हे मुने !तुमने जो प्रश्न किया है वह आदर सहित समष्टि व्यष्टि भाव से शिवजी का ।।८।। प्रणवार्थ परिज्ञान विस्तार सहित तुम्हारे प्रति कहता हूँ । उस एक के ही परिज्ञानमें छःप्रकार का अर्थ है ।।९।। प्रथम मन्त्र रूप, द्वितीय यन्त्ररूप, तृतीय देवार्थ और चतुर्थ प्रपंचार्थ है ।।१०।। पंचम अर्थ दिखाया गया तथा छटवाँ शिष्यके आत्मानुरूप, इस प्रकार छः अर्थ कहे हैं ।।११।। हे मुनिवर ! जिस यन्त्र के विज्ञानमात्र से पुरुष ज्ञानी होजाता है उस मन्त्रका श्रवण कीजिए ।।१२।। प्रथय स्वर अकार, पंचम उकार तथा पवर्गके अन्तका मकार बिन्दु और नाद इन पाँच वर्णों को वेद में ओंकार माना गया है ।।१३।। वेद में यह समष्टि रूप ही ओंकार कहा है, नाद सबकी समष्टि है, उकार और मकार बिन्दु के आदि है ।।१४।।

व्याष्टिरूपेण संसिद्धं प्रणवे शिववाचके ।
यन्त्ररूपं शृणु प्राज्ञ शिवलिंगं तदेव हि ।१५।
सर्वाधस्तालिखेत्पीठं तदूर्ध्वं प्रथम स्वरम् ।
उवर्णं च तदूर्ध्वस्थं पवर्गान्त तदूर्वगम ।१६।
तन्मस्तकस्थ विंदुं च तदूर्ध्वं वादमालिखेत् ।
यंत्रे सम्पूर्णतां याते सर्वकामः प्रसिद्धयति ।।१७।
एवं यन्त्रं समालिख्य प्रणवेनैव वेष्टयेत ।
तदुत्थेनैव नादेन विद्यान्नादावसानकम् ।१८।
देननार्थ प्रवेक्ष्यामि गूढं सर्वत्र यन्मुने ।
तव स्नेहाद्वामदेव यथा शङ्करभाषितम् ।१९।
सद्योजातंप्र पद्यामीत्युपक्रम्य सदाशिवम् ।
इति प्राह श्रुतिस्तारं ब्रह्मपञ्चकवाच कम् ।२०।
विज्ञेया ब्रह्मरूपिण्यः सूक्ष्माः पंचैव देवताः ।
एता एव शिवस्यापि मूर्त्तित्वेनोपबृंहिताः ।२१।

व्यष्टि रूप से सिद्ध ओंकार शिव की वचाकता में सिद्ध है, अब यन्त्र स्वरूप सुनो, वह लिंगस्वरूप है ॥५॥ सबसे नीचे पीठ बनावे, उसके ऊपर अकार फिर उकार फिर मकार बनावे ॥१६॥ उसके मस्तक पर बिन्दु और अर्द्ध चन्द्राकार नाद बनावे, यन्त्रमें पूर्ण सभी कार्यों की सिद्धि होती है।१७ इस प्रकार यन्त्र खींचकर ओंकारसे वेष्टित कर, उससे उठे हुये नादसे, नाद कीसमाप्ति तक भेद करे ॥१८॥ हे वामदेव ! अब शिवजीद्वारा कहा हुआ अत्यन्त गूढ़ देवार्थ तुम्हारे स्नेहके कारण तुमसे कहता हूँ ॥१९॥ साक्षात् श्रुति ने ही ब्रह्म पञ्चक ओंकार बताया है ॥२०॥ प्रणव ब्रह्म रूप वाले पाँच देवता भी शिवजी की मूर्त्ति समझो, उन्हें शिवजी से पृथक् मत जानो ॥२१॥

शिवस्य वाचको मन्त्रः शिवमूर्त्तेश्च वाचकः ।
मूर्त्तिमूर्त्तिमतोर्भेदो नात्यन्तं विद्यते यतः ।२२।
ईशानमुकुटोपेत इत्यारभ्य पुरोदिताः ।
शिवस्य विग्रहः पंचवक्त्राणि शृणु सांप्रतम् ।२३।
पंचमादि समारभ्य सद्योजाताद्यनुक्रमात् ।
उर्ध्वांतिमीशानांतं च सुखपञ्चकमीरितम् ।२४।
ईशानस्यैव देवस्य चतुर्व्यूहपदे स्थितम् ।
पुरुषाद्यं च सद्यांतं ब्रह्मरूपं चतुष्टयम् ।२५।
पंचब्रह्मसमष्टिः स्यादीशानं ब्रह्मविश्रुतम् ।
पुरुषाद्यं तु तद्व्यष्टिः सद्योजातान्तिकं मुने ।२६।
अनुग्रहमयं चक्रमिदं पंचार्थकारणम् ।
परब्रह्मात्मकसूक्ष्मं निर्विकारमनाभयम् ।२७।
अनुग्रहोऽपि द्विविधस्तिरोभावादिगोचरः ।
प्रभुश्चान्यस्तु जीवानां परावरविमुक्तिदः ।२८।

शिवजी का पंचक मन्त्र शिव स्वरूप का भी वाचक है, मूर्त्ति और मूर्त्तिमान् में विशेष भेदनहीं होता।२२। ईशानोमुकुटोपेतःसेआरम्भकर पाँच ही शिवजीके देहबताये हैं अब पाँचों मुखोंका वर्णन सुनो ॥२३॥ शिवजी के

पाँच मुख पन्चमादिसे आरम्भकर सद्योजातिके अनुकमसे ऊर्ध्व और ईशान तक बताये हैं ।।२४।। यही ईशान उनके चतुर्व्यूह पद में स्थितहैं, पुरुष सो सद्योजात तक चतुष्टय ब्रह्मस्वरूप हैं ।।२५।। तथाईशाननामक ब्रह्मकीसंगति से पञ्चब्रह्मसमष्टि कही जातीहै,पुरुष के आदिकीव्यष्टि सद्योजात के अन्त तक ।२६। अनुग्रहमय चक्र कहा गया है, पंचार्थका कारण यही है तथा परब्रह्मात्मक,सूक्ष्म एवं निर्विकारभी इसीको समझो ।।२७।। तिरोभावऔर प्रकट भावके भेदसे अनुग्रहकेभी दो प्रकारकहे हैं, यह प्राणियोंको पर और अपर मुक्ति का दायक है ।।२८।।

एतत्सदा शिवस्यैव कृत्यद्वयमुदाहृतम् ।
अनुग्रेहऽप सृष्ट्यादिकृत्यानां पंचकं विभोः ।२९।
मुने तत्रापि साद्याद्या देवताः परिकीर्त्तिताः ।
परब्रह्मस्वरूपास्ताः पंचकल्याणदाः सदा ।३०।
अमुग्रहमय चक्रं शांत्यतीतकलामयम् ।
सदाशिवाधिष्ठितं च परम पदमुच्यते ।३१।
एतदेवं पदं प्राप्यं यतीनां भावितात्मनाम् ।
सदाशिववोपासकानां प्रणवासक्तचेतमस् ।३२।
एतदेव पदं प्राप्य तेन साकं मुनीश्वराः ।
भुक्त्वा सुविपुलान्भोगेन्देवेन ब्रह्मरूपिणा ।३३।
महाप्रलयसभूतौ शिवसाम्यं भजति हि ।
न पतति पुनः क्वायिः ससाराब्धौ जनाश्रते ।३४।
वे ब्रह्मलोश इति च श्रतिराह सनातनी ।
तेश्वर्य्यं तु शिवस्यापि समष्टिरिदमेव हि ।३५।

शिवजी के दो कृत्यहैं,अनुग्रह सृष्टि आदि कृत्योंका पंचक कहा गया है ।।२९।। वह सृष्टि आदि कृत पंचककेसद्यादिदेवता कहे हैं, पाँचों परब्रह्म स्वरूप हैं तथाकल्याणकेदाताहैं ।।३०।।अनुग्रहमय चक्र शान्ति से परे एव कतामय है,सदाशिवमें उसका अधिष्ठान होने से वह परमपदकहा जाता है ।।३१।। जोशिवजीके उपासकहैं और जिनका चित्त ओंकारमें रमा हुआहै,

उन भावितात्मा यतियों को इस पदकी प्राप्ति होतीहै। ३२।।हे मुनि-वर ! भगवान्‌शिवकी कृपासे वे इस पदको प्राप्तहोकर ब्रह्मस्वरूप परमात्माके साथ अनेकप्रकारके भोगोंका उपभोगकरके ।३३। महाप्रलयमें शंकर की साम्यताको प्राप्त होते और पुनः संसाररूपी समुद्रमेंनहींगिरते हैं ।३४। ते ब्रह्मलोकेषु० इत्यादि श्रुति इसी अर्थ का प्रतिपादन करती है, भगवान् शिवका ऐश्वर्य समष्टि रूप यही है ।।३५।।

सर्वेश्वर्येण सम्पन्न इत्याहाथर्वणी शिखा ।
सर्वेश्वर्यप्रदातृत्वमस्यैव प्रवदन्ति हि ।३६।
चमकस्य पदान्नान्यदधिकं विद्यते पदम् ।
ब्रह्मपंचकविस्तार प्रपञ्च खलु दृश्सते ।३७।
ब्रह्मभ्य एवं संजाताःनिवृत्याद्याः कला मताः ।
सूक्ष्मभूतस्वरूपपिण्यः कारणत्वेन बिश्रुता ।३८।
स्थूलरूपस्वरूपस्य प्रपञ्चस्यास्य सुव्रत् ।
पञ्चधाऽवस्थितं यत्तद् ब्रह्मपञ्चकमिष्यते ।३९।
पुरुषः श्रोत्रवाण्यौ च शब्दाकाशौ च पंचकम् ।
व्याप्तमीशानरूपेण ब्रह्मणा मुनिसत्तम् ।४०।
पुरुषः श्रोत्रवाण्यौ च शब्दाकाशौ च पंचकम् ।
व्याप्तं पुरुषरूपेण व्रहतणैव मुनीश्वर ।४१।
अहंकारस्तथा चक्षुः पादो रूपं च पावकः ।
अघोरब्रह्मणा व्याप्तमेतत्पंचकमंचितम् ।४२।

अथर्वशीर्षा की श्रुतिका भी का यही कहना है किवही सम्पूर्ण ऐश्वर्यों से सम्पन्न है तथा वही सम्पूर्ण एश्यर्योंकोप्रदानकरता है ।।३६।। चमकाध्याय में उसकेस्थानसे श्रेष्ठ अन्यकोई नहीं बताया, ब्रह्म पंचककेविस्तारकानाम ही प्रपंच कहा गया है ।।३७।। निवृत्ति आदि कलाये ब्रह्मसेही हुई हैं, यही सूक्ष्मभूत स्वरूपहोकर कारण में स्थित रहती हैं।।३८।। इसस्थूल शरीरवाले प्रपच के पांच प्रकार से स्थित होनेके कारणहीइसेब्रह्मपंचककहा है ।।३९।। पुरुष,श्रोत्र,वाणी,शब्द और आकाश ईशानरूप ब्रह्म सेही व्याप्त हैं ।।४०।।

प्रकृति, त्वक्, हाथ स्पर्श और वायु यह पाँचों पुरुषरूपब्रह्मसेव्याप्तहैं ।४१। अहंकार, चक्षु, चरण, रूप तथा पावक अघोर ब्रह्म से व्याप्त हैं ।।४२।।

बुद्धिश्च रसना पायू रस आपश्च पंचकम् ।
ब्रह्मणा यामदेवेन व्याप्त भवति नित्यशः ।४३।
मनो नासा तथोपस्थो गन्धो भूमिश्च पंचकम् ।
सद्येन ब्राह्मण व्याप्तं पञ्चब्रह्ममयं जगत् ।४४।
यन्त्ररूपेणोपदिष्टः प्रणवः शिववाचकः ।
समष्टिः पञ्चवर्णानां विंद्वाधं यच्चतुष्टयम् ।४५।
शिवोपदिष्टमार्गेण यन्त्ररूपं विभावयेत् ।
प्रणावं परम मन्त्राधिराज शिवरूपिणम् ।४६।

बुद्धि, रसना, पायु, रस, जल यह पाँचों ब्रह्म वामदेव से व्याप्त हैं ।।४३।। मन, नासिका, उपस्थ, गंध और भूमिसद्य ब्रह्मसे व्याप्त हैं, इस प्रकार पंचब्रह्मात्मक जगत् कहा है ।।४४।। जो शिववाचक प्रणव यन्त्र रूपसे कहा गया है, वह पाँचों वर्गों की समष्टि तथा बिन्दु आदि समष्टि एवं कला प्रणव शिव वाचकहै ।।४५।। शिवजी द्वारा उपदिष्ट मार्ग से उसकाधिचार करना चाहिए यही प्रणव मन्त्रराज तथा साक्षात् शिव स्वरूप है ।।४६।।

।। ओंकार को समस्त सृष्टि का कारण कथन ।।

प्रतिलोमाष्मकं हंसे वक्ष्यामि प्रणवोद्भवम् ।
तव स्नेहाद्वामदेव्र सावधानतया शृणु ।१।
व्यंजनस्य सकारस्य हकारस्य च वर्जनात् ।
आमित्येव भवेत्स्थूलो वाचकः परमात्मनः ।२।
महामन्त्रः स विज्ञयो मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ।
तत्र सूक्ष्मो महामन्त्रस्तदुद्धारं वदामि ते ।३।
आधे त्रिपञ्चरूपे च स्वरे षोडशके त्रिषु ।
महामन्त्रो भवेदादौ ससकारो भवेधदा ।४।
हंसस्य प्रतिलोमः स्यात्सकारार्थः शिवः स्मृतः ।
शक्त्यात्मको महामन्त्रवाच्यः स्यादिति निर्णयः ।५।

गुरुपदेशकाले तु सोहं शक्त्यात्मकः शिवः ।
इति जीवपरो भूयान्महामन्त्रस्तदा पशुः ।६।
शक्त्यात्मकः शिवांशश्च शिवैक्याच्छिवसाम्यभाक् ।
प्रज्ञानं ब्रह्मवाक्ये तु प्रज्ञानार्थः प्रदृश्यते ।७।

हेवामदेव ! अबमैं प्रतिलोम अर्थात् सोहं प्रकार के एकार वाले हंस में प्रणवकी प्राप्ति कहता हूँ तुम सावधानी से सुनो ।।१।। व्यंजन सकार का हकारके वर्जनसेॐरूपस्थूल परमात्मवाचक सूक्ष्म ।।२।। महामन्त्र होता है, तत्वदर्शी मुनियोंका ऐसा कथन है, मैं उसका उद्धार करता हूँ अ अं अः इन तीनोंके आदिस्वर अकारके पन्द्रहवें स्वरूपको प्राप्त होनेपर आदि हकार व्यंजनमें हंकी स्थिति होनेपर तथा सोलहवेंअ रूपका आदिसकार होने पर वह हंस होताहैं । इसका उल्टा अर्थात्आदिमें सकार होनेपर सोहं रूप महा-मन्त्र ही है, यह उद्धार सूक्ष्महोनेके कारणमहा सूक्ष्महै ।।४।। इसका उल्टा हँस ही होता है तथा संकार अर्थ शिवही है क्योंकि वह सर्वनाम विशुद्ध स्वभाव शिव के ही बुद्धि का विषय है, इस शक्त्यात्मक महामन्त्रको शिव का वाचक समझो ।५। गुरु के उपदेशकाल में शकत्यात्मक शिवसोहं ही है, शिवोहसस्मीति इस महामन्त्र के होने पर ।।६।। शक्त्यात्मक तथा शिवांश पशु शिवके एकीकार से साम्यभाग होता है, शक्यात्मक और शिवांश होने के कारण शिव की समानता का भागी होता है यह वाक्य प्रज्ञान का अर्थ दर्शाता है ।।७।।

प्रज्ञानशब्दश्चैतन्यपर्यायः स्यान्न संशय ।
चैतन्यमात्मेति मुने शिवसूत्रं प्रवर्त्तितम् ।८।
चेतन्यमिति विश्वस्य सर्वज्ञानकियात्मकम् ।
स्वातन्त्र्य तत्सव भावो यः स आग्मा परिकीर्तित ।९।
इत्यादिशिवसूत्राणां वार्त्तिकं कथितं मया ।
ज्ञानं वंध इतीदं तु द्वितीय सूत्रमीशितुः ।१०।
ज्ञानमित्यात्मनस्तस्य किंचिज्ज्ञानक्रियात्मकम् ।
इत्यहायपदेनेशः पशुवर्गस्य लक्षणम् ।११।

एतद्द्वयं पराशक्तेः प्रथमं स्पन्दता गतम् ।
एतामेव परां शक्ति श्वेताश्वतरशाखिनः ।१२
स्वाभाविकी ज्ञानवलक्रिया चेत्यस्नुवन्मदा ।
ज्ञानक्रियेच्चारूप हि शंभोर्दृष्टित्रयं विदुः ।१३
एतन्मनोमध्यगं सदिप्रियज्ञानगोचरम ।
अनुप्रविश्य जानाति करोति च पशुः सदा ।१४

निः स्सन्देह प्रज्ञान शब्द चेतना का पर्यायहीहै । आत्मा चेतनहै, शिव सूत्रों में ऐसा कहा है ।८। जो चेतन है तथा जिसमेंविश्व का सम्पूर्णज्ञान और क्रिया भरी पड़ी है, ऐसे स्वतन्त्र स्वभाववाला वह परमात्माहीबताया है ९। शिवसूत्र और वार्तिकोंके अनुसारजीव-स्वरूपमें दो लक्षणज्ञान और बन्ध रहतेहैं ।१०। उस विश्व प्रपंच में आत्माको ज्ञान क्रियात्मक स्व—तन्त्रताहै, आदि भेदसे जीवका लक्षण वही है ।११। यही चैतन्य ज्ञान वाली स्वतन्त्र माया शक्ति प्रथम सृष्टि प्रयोजन तथा चेतना स्वरूप को प्राप्त हुई है, इसी को पराशक्ति कहा है जानता हूँ, करताहूँ आदि व्यवहार शरीर तथा इन्द्रियादि का है या आत्माका ! इसका समाधान करते हैं कि शिवजीकी दृष्टिके तीन भेद हैं, ज्ञान क्रिया और इच्छा ।१३। शिव की यह तीन प्रकार की दृष्टि ही कर्त्ता के मन में इन्द्रिय के द्वारा दृश्यमान देह में प्रविष्ट स्वरूप बनकर, जानने, करने वाली होती हैं ।१४।

तस्मादात्मन रूएवेद रूपमित्येव निश्चितम् ।
प्रपञ्चार्थं प्रवक्ष्यामि प्रणवैक्यप्रदर्मनम् ।१५
तस्याः श्रुतेस्तु तात्पर्यं वक्ष्यामि श्रुयतामिदम् ।
तव स्नेहाद्वामदेव विवेकार्थं बिजृम्भितम् ।१६
शिवशक्तिसमायोगः पपमात्मेति निश्चितम् ।
पराशक्तेस्तु संजाता चिच्छक्तिस्तु तदुद्भवा ।१७
आनन्दशक्तिस्तज्जा स्यादिच्छाशक्तिस्तदुद्भवा ।
ज्ञानशक्तिस्ततो जाता क्रियाशक्तिस्तु पंचमी ।
एताभ्य एवं संजाता विवृत्याद्याः कला मुने ॥१८

चिदानन्दसमुत्पन्नौ नादबिन्दू प्रकीर्तितौ ।
इच्छाशक्तेर्मकारस्तु ज्ञानाशक्तेस्तु पंचमम् ।१९।
स्वरः क्रियाशक्तिजातो ह्यकारस्तु मुनीश्वर ।
इत्युक्ता प्रणवोत्पत्तिः पञ्चब्रह्मोद्भवं शृणु ।२०।
शिवादीशान उत्पन्नस्ततस्तत्पुरुषोद्भवः ।
ततोऽघोरस्ततो वामः सद्योमाताद् भवस्ततः ।२१।

इसलिए अवश्य ही यह आत्मा का रूप है, अब प्रपच के साथ प्रणव की एकता का वर्णन करता हूँ ॥१५॥ हे वामदेव! तुम्हारे स्नेहसे मैं उसका तात्पर्य कहता हूँ जिससे तुम्हें ज्ञानकी प्राप्ति हो ॥१६॥ शिव और शक्ति के योग को ही परमात्मा कहा है, वह परमात्माही आकाशआदिरूपमें होताहै, जैसे उपादान कारण मिठ्टी अपने से अभिन्न घड़ेका रूप रखती है, दूधरूप उत्पादन दही रूप होजाताहै, रस्सी अज्ञान से सर्प रूप होजाती है, परा शक्तिसे चित् शक्ति॥१७॥ और उससे आनन्दशक्ति तथा उससेइच्छा शक्ति की उत्पत्ति हुई है उससे ज्ञान शक्ति और ज्ञान शक्ति से क्रिया शक्ति हुई। इन्हीं शक्तियों से निवृत्ति आदि कलायें उत्पन्न हुईं ॥१८॥ चिदानन्द शक्तियों से नाद और बिन्दुकी उत्पत्ति हुई, इच्छाशक्तिसे मकार तथा ज्ञान शक्ति से पंचम स्वर उकार हुआ ।१९। क्रिया शक्तिसे अकार हुआ । इस प्रकार प्रणवकी उत्पत्ति हुई, अब पंच ब्रह्मकी उत्पत्ति सुनो ।२०। शिव से ईशान हुई, ईशानसे पुरुष, पुरुष से अघोरसे वाम सद्योजात की उत्पत्ति हुई ॥२१॥

एतस्मान्मातृकादष्टत्रिंशन्मातृसमुद्भवः ।
ईशानांच्छान्त्यतीताख्या कला जाताऽथ पूरुषात् ।
उत्पद्यते शान्तिकला विद्याऽघोरसमुद्भवा ।२२।
प्रतिष्टा च निवृत्तिश्च वामसद्योद्भवे मते ।
ईशाच्चिच्छक्तिमुखतो विभोर्मिथुनपंचकम् ।२३।
अनुग्रहादिकृत्यानांहेतुः पञ्चकमिष्यते ।
तद्विद्भिर्मुनिभिः प्रज्ञैर्वरतत्वप्रदर्शिभिः ।२४।
वांच्यवाचकसम्बन्धान्मिथुनत्वमुपेयुषि ।

कलावर्णस्वरूपेऽस्मिन्पञ्चके भूतपञ्चकम् ।२५।
वियदादिक्रमादासीदुत्पन्नं मुनिपुङ्गव ।
आद्यं मिथुनमारभ्य पंचमं यन्मयं विदुः ।२६।
शब्दैकगुण आकाशः शब्दस्पर्शगुणो मरुत् ।
शब्दस्पर्शरूपगुणप्रधानो वह्निरुच्यते ।२७।
शब्दस्पर्शरूपरसगुणकं सलिलं स्मृतम् ।
शब्दस्पर्शरूपसरसगन्धाढ्या पृथिवी स्मृता ।२८।

इन्हीं अकारादि की मात्रासे अड़तीस कला हुईं, ईशानसे शान्त्यतीत कला,पुरुषसे शान्तिकला और अघोरसे विद्याकी उत्पत्तिहुई।।२२।।प्रतिष्ठा और निबृत्ति की उत्पत्ति वामदेव और सद्योजातसे हुई,ईशऔर चित्शक्ति मुखसे शिवके मिथुनपंचक हुए ।।२३।। अनुग्रह, तिरोभाव, सँहार स्थिति, सृष्ठि आदि रूपोंका कारण हेतु पंचकहै,यह उसके ज्ञाता ज्ञानी मुनियों का कहना है ।।२४।। वाच्य-वाचक सम्बन्धसेमिथुनत्वको पाने वाले कला, वर्ण स्वरूप वाले इस पञ्चक में भूतपञ्चक।।२५।।आकाशादि के क्रम से उत्पन्न हुआ । आद्यामैथुन ईशचित् शक्त्यात्मकसे आरम्भकर भूतपञ्चकको चित् शक्त्यात्मक ही कहा है ।।२६।।आकाश में शब्द, गुण और वायु का शब्द स्पर्श गुण है तथा शब्द स्पर्श रूपगुण वाला अग्नि है ।।२७।। शब्द,स्पर्शरूप रस गुणयुक्त जल कहा गया है तथा शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध वाली पृथिवी कही गयी हैं ।।२८।।

व्यापकत्वञ्च भूतानामिदमेव प्रकीर्तितम् ।
व्याप्यत्व वैपरात्येन गन्ध दिकमतौ भवेत् ।।२९
भूतपंचकरूपोऽयं प्रपञ्च परिकीर्त्यते ।
विराट सर्वसमष्ट् यात्मा व्रह्माण्डमिति च स्फुटम् ।३०।
पृथिवीतत्त् वमारभ्य शिवतत्त्वावधि क्रमाता ।
निलीय तत्वसं दोहे जीव एव विलीयते ।३१।
संशक्तिकः पुनः सृष्टौ शक्तिद्वारा विनिर्गतः ।
स्थूलप्रपंचरूपेण तिष्ठत्याप्रलयं सुखम् ।३२।

निजेच्छया जगत्सृष्टमुद्युक्तस्य महेशितुः ।
प्रथमो यः परिस्पन्दः शिव तत्वं तदुच्यते ।३३।
एषैवेच्छाशक्तितत्वं सर्वकृत्यानुवर्तनात् ।
ज्ञानक्रियाशक्तियुग्मे ज्ञानाधिक्ये सदाशिवः ।३४।
महेश्वर क्रियोद्रेके तत्वं विद्धि मुनिश्वर ।
ज्ञानक्रियाशक्तिसाम्यं शुद्धविद्यात्मक मतम् ।३५।

यह सभी गुण क्रम-क्रमसे अपने-अपने भूतोंमें व्याप्त हैं और गंधादि क्रमसे विपरीततासे व्याप्तहो रहेहैं ।२९।। भूत पंचक यही रूप प्रपंचकहा गयाहै तथायही प्रपंचसम्पूर्ण समष्टिआत्मा विराट्में ब्रह्माण्ड कहा गया है ।।३०।। पृथिवी तत्वसे शिव तक तत्व समुदाय शक्ति सहित परश्मेवर में लीन होकर, जीवरूप विराट्में लय होता है ।।३१।। तथा सृष्टि कालमें पुनः शक्तिसे निर्गत होकर स्थूल प्रपचके रूपमें प्रलय होने तक स्थित रहता है ।।३२।। स्वेच्छापूर्वक विश्वरचनामें शिवका उद्यतहोना तथा उनके पूर्वकार्य कोही,जो क्रियात्मकहोनाहै शिव तत्व कहा गया है ।।३३।।सम्पूर्ण कृत्यके अनुवर्तनसे इसीको इच्छा शक्ति तत्व कहा गया है । ज्ञान और क्रिया शक्ति मेंज्ञानका आधिक्य होनेसे शिवत्व है तथा ज्ञान की अपेक्षा क्रियाकीअधिकता होनेपर ।।३४। महेश्वरतत्वकी अधिकता समझो । ज्ञान तथा क्रियाशक्ति की समानता होने पर विशुद्ध ज्ञानरूप शिब तत्व समझना चाहिए ।।३५।।

स्वाङ्गरूपेषु भावेषु मायातत्वविभेदधीः ।
शिवो यदा निज रूप परमैश्वर्य पूर्वकम् ।३६।
निगृह्य माययाऽशेषपदार्थग्राहको भवेत् ।
तदा पुरुष इत्याख्या तत्सृष्ट्वेत्यभवच्छ्रुतिः ।३७।
अयमेव हि संसारी मायया मोहितः पशुः ।
शिवज्ञानविहीनो हि नानाकर्मविमूढधीः ।३८।
शिवादभिन्नं न जगदात्मानं भिन्नमित्यपि ।
जानतोऽस्य पशोरेव मोहो भवति न प्रभोः ।३९।
यथैन्द्रजालिकस्यापि योगिनो न भवेद्भ्रमः ।

गुरुणा ज्ञापितैश्वर्यः शिवो भवति चिद्घनः ।४०।
सर्वकर्तृ त्वरूपा च सर्वजत्वस्वरूपिणो ।
पूर्णत्वरूपा नित्यत्वध्यापकत्वस्वरूपिणी ।४१।
शिवस्य शक्तयः पञ्च संकुचन्द्र पभास्वराः ।
अपि संकोचरूपेण विभांत्य इति नित्यशः ।४२।

अपने अङ्ग रूप अवयवों में भेद रूप बुद्धि होने पर मायातत्व कहा जाता है. जब शिव अपनी माया से अपने परमैश्वर्य स्वरूपको ।।३६।।छिपा कर सम्पूर्ण पदार्थ ग्रहण कर लेतेहैं,तबउसे पुरुष नामसृष्टिकहते हैं ।।३७।। यह शिव माया से मोहित होकर जीवरूप होकर अज्ञानवश अपनेको अनेक कर्मकर्त्ता तथा सबसे भिन्न समझता है।।३८।।तथा विश्वको शिवसे अभिन्न नहीं समझता, इस प्रकार मोहित हो जाता है।।३९।।जैसे इन्द्रजालके ज्ञाता को भ्रम नहीं होता, वैसेही गुरु के ज्ञानरूप ऐश्वर्य से सम्पन्न शिष्य शिव रूप को प्राप्त होताहै।।४०।।सम्पूर्ण कर्त्त यस्वरूपा,सर्वज्ञा, पूर्णत्ववालीहोने से नित्यत्व और व्यापकत्व स्वरूप वाली ।।४१।। शिवजी की संकोच युक्त, सूर्य रूपिणी तथा नित्य प्रकाश करने वाली पाँच शक्तियाँ हैं ।।४२।।

पशोः कलाख्यविद्येति रागकालौ नियत्यपि ।
तत्वपन्चकरूपेण भवत्यत्र कलेति सा ।४३।
सा विद्या तु भवेद्रागो विषयेष्वनुरञ्जकः ।४४।
कालो हि भावभावानां भासानां भासनात्मकः ।
कमावच्छेदको भूत्वा भूतादिरिति कथ्यते ।४५।
इदं तु मम कर्तब्यमिदं नेति नियामिका ।
नियतिः स्याद्विभोः शक्तिस्तदाक्षेपात्पतेत्पशुः ।४६।
एतत्पचकमेवास्य स्वरूपावारकत्वतः ।
पञ्चकंचुकमाख्यातमन्मरंगं च साधनम् ।४७।

जीव की कला नाम वाली विद्या राग,कालनियति पंच तत्व रूप से कला में होती है।।४३।।जिसमें कर्त्तापन का कुछ कारण तत्व का साधन

हो वह विद्या और विषयोंमें प्रीति उत्पन्न कराने वालारागकहा गया है। ।४४। भाव तथा अभावोके क्रमसे परिच्छेदक होकर वहभूतों का आदि होता है ।४५। यह मुझे करने योग्य नहीं, उसी को नियामक कहा है, विभुकी शक्ति को नियति कहते हैं, उसके त्यागसे यह प्राणी पतित हो जाता है ।४६। उस जीव स्वरूप के यह पांच आवरण माने गये हैं यह अन्तरङ्ग साधन वाले तथा पांच कंचुक कहे जाते हैं ।४७।

।। शिव के अद्वैत ज्ञान के निमित्त सृष्टि तत्व कथन ।।

नियत्यधग्तात्प्रकृतेरुपरिस्थः पुमानिति : ।
पूर्वत्र भवता प्रोक्तमिदानीं कथमन्यथा ।१
मायया संकुचद्रूपस्तदाधस्तादिति प्रमो ।
इति मे संशयं नाथ छेत्तुमर्हसि तत्वतः ।२
अद्वैतशैववादोऽयं द्वैतं न सहते क्वचित् ।
द्वैतं च नश्वरं ब्रह्माद्वैतं परमनश्वरम् ।३
सर्वत्राः सर्वकर्ता च शिवः सर्वेश्वरोऽगुणः ।
त्रिदेवजनकों ब्रह्मा सच्चिदानन्दविग्रहः ।४
स एव शङ्करो देव स्वेच्छया च स्वमावया ।
संकुकद्रूप इव सत्पुरुषः सत्रभूव ह ।५
कलादिपिश्चकेनैव भोक्तृत्वेन प्रकज्पितः ।
प्रकृतिस्थः पुमानेषभुंक्ते प्रकृतिजान्गुणान् ।६
इति स्थानद्वयांतःस्थः पुरुषो न विरोधकः ।
सङ्कुचन्निजरूपाणां ज्ञानादीमां समष्टिमान् ।७

वामदेव ने कहा-हे प्रभो ! आपने प्रकृति के नीचे नियतितथा ऊपर पुरुष कहा था, अब उसके विपरीत कैसे कहते हो?।१। तथा आपने माया से सकुचित रूप को उससे नीचे कहा है, आप मेरे इस सन्देहको मिटानेकी कृपा करें ।२। स्कन्दजीनेकहा-यह अद्वैत शैव्यवाद द्वैतको कभी सहन नहीं करता,क्योंकि द्वैत नाशवान्और अद्वैत अविनाशी हैं ।३। सबकेकर्तातीनों देवोंको उत्पन्न करनेवाले, सर्वज्ञ एक शिव ही सच्चिदानन्द स्वरूपब्रह्म हैं

।४। वही शिव अपनी माया एवं स्वेच्छासे संकुचित रूपके समान पुरुष बनगये हैं।५। पाँचकला आदि होनेकेकारण भोक्ताभी यहीहै, क्योंकि यही पुरुष प्रकृतिमें प्रकृति जन्म गुणोंका भोगने वाला है।६। इस प्रकार दोनों स्थानोंमें स्थित होने वाला पुरुष किसी प्रकार विरोधी नहीं होता तथा अपने रूप, ज्ञान आदि का संकोच करता हुआ समष्टियुक्तहोता है।७।

सत्वादिगुणसाध्यै च बुध्यादित्रियात्मकम् ।
चितम्प्रकृतित्व उदासीत्सत्वादिकारणात् ।८
सात्विकादिविभेदेन गुणाः प्रकृतिसम्भाः ।
गुणेभ्यो बुद्धिरुत्पन्ना वस्तुनिश्चयकारिणी ।९
ततो महानङ्कारस्ततो बुद्धीन्द्रियाणि च ।
जातानि मनसारूपं स्यात्सङ्कल्पविकल्पकम् ।१०
बुद्धीन्द्रियाणि श्रोत्रत्वक्चक्षुजिह्वा च नासिका ।
शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्धश्च गोचरः ।११
बुद्धीन्द्रियाणां कथितः श्रोत्रादिक्रमतस्ततः ।
वैकारिकादहंकारात्तन्मात्राण्यभवन्क्रमात् ।१२
तानि प्रोक्तानिसूक्ष्माणि मुनिभिस्तत्वदर्शिभि ।
कर्मेन्द्रियाणि ज्ञेयानि स्वकार्यसहितानि च ।१३
विप्रर्षे वाक्करौ पादौ पायूपस्थौ च तत्क्रिया ।
वचना दानगमनविसर्गानन्दसंज्ञिताः ।१४

सत्वादि गुणसेसाध्य बुद्धि आदि त्रयात्मकचित्तही उनगुणों के कारण प्रकृति तत्व है।८। सात्विक आदि के भेदसे प्रकृतिकेगुणों कीउत्पत्ति होती है तथा गुणोंसे ही वस्तुके निरूपणकरने वाली बुद्धि की उत्पत्ति हैं।९। तीन प्रकारके अहङ्कारकी उत्पत्ति बुद्धिसे हुई, उसकाजीवन साधनात्मकअभिमान हैं यह तीनप्रकारके देहवाला हैं, सत्वादि तथा तामसादिके भेदसे भी उसके तीन प्रकारहैं, अहङ्कार और तेजसे मन, बुद्धि, इन्द्रियकी उत्पत्ति हुई तथा मनका स्वरूप सङ्कल्प विकल्प वाला हैं।१०। बुद्धि, इन्द्रियाँ श्रोत्र त्वक्, चक्षु, जिह्वा, नासिका, स्पर्श, रसतथागन्धावृत्ति और बुद्धि इन्द्रियोंमेंश्रोत्रकेक्रम

से कही गयी है, अहकार से कर्मेन्द्रिय की उत्पत्ति हुई है ।1१।१२।
तत्वदर्शियों ने उन्हें सूक्ष्म कहा है तथा कर्मेन्द्रिय अपने कार्य के सहित हैं।१३।
वाक्, पाणि, पाद, वायु उपस्थ तथा उनकी सम्पूर्ण क्रियायें हैं ।।१४।।

भूतादिकादहंकारात्तन्मात्राण्यभवन् क्रमात् ।
तानि सूक्ष्माणि रूपाणि शब्दादीनामिति स्थितिः ।१५।
तेभ्यश्चाकाशवाय्यग्निजलभूमिजनिः क्रमात् ।
विज्ञेयामुनिशार्दूल पंचभूतमितीष्यते ।१६।
अवकाशप्रदानं च वाहकत्वं चे पावनम्ः ।
सरम्भो धारणं तेषां व्यापाराः परिकीर्तिताः ।१७।
भतसृष्टिः पुरा प्रोक्ता कलादिभ्यः कथं पुनः ।
अन्यथा प्रोच्यते स्कन्द संदेहोऽत्र महान्मम ।१८।
आत्मतत्वमकारः स्याद्विद्या स्यादुस्ततः परम् ।
शिवतत्वं मकारः स्याद्वामदेवेति चिन्त्यताम् ।१९।
बिंदुनादी तु विज्ञेयो सर्वतत्वार्थकावुभो ।
तत्रत्या देवत्ता याश्च ता मुने श्रृणु सांप्रतम् ।२०।

भूतादिकों से तथा अहकार के क्रम से तन्मात्रायें हुई, उन्हीं से शब्दादि रूप प्रकट हुए ।।१५।। हे मुने ! उन्हीं से आकाश, वायु, अग्नि जल और पृथ्वी की उत्पत्ति हुई, इन्हीं को पंचभूत कहते हैं ।१६। उनके व्यापार अवकाश देना, वहन करना, पचाना वेग तथा धारण क्रम पूर्वक हैं ।।१७।। वामदेव ने कहा आपने प्रथम भूत-सृष्टि का वर्णन किया है, फिर कला आदि किस प्रकार कहते हैं ? ।१८। आत्म तत्व अकार और विद्यातत्व उपकार यह अत्यन्त सन्देह जनक है, शिवतत्व मकार है यह समझो ।।१९।। बिन्दु और नाद तत्व के ही अर्थ है, अब इनके देवताओं को सुनो ।।२०।।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च महेश्वरसदाशिवौ ।
ते हि साक्षाच्छिवस्यैव मूर्तयःश्रुतिविश्रुता ।२१।
इत्युक्तं भवता पूर्वमिदानीमुच्यतेऽन्यथा ।
तन्मात्रेभ्यो भवन्तीति सन्देहोऽत्र महान्मम ।२२।

कृत्वा तत्करुणां स्कन्द संशयं छेत्तुमर्हसि ।
इत्याकर्ण्य मुनेर्वाक्यं कुमारः प्रत्यभाषत ।२३
तस्माद्वेति समारभ्य भूतसृष्टिक्रमे मुने ।
ताञ्छृणुष्व महाप्राज्ञ सावधानतयाऽदरात् ।२४
जातानि पंचभूतानि कलाभ्य इति निश्चितम् ।
स्थूलप्रपंचरूपाणि तानि भूतपतेर्वपुः ।२५
शिवतत्वादिपृथव्यन्तं तत्वानामुदयक्रमे ।
तन्मात्रेभ्यो भवन्तीति वक्तव्यानि क्रमान्मुने ।२६
तन्मात्राणां कलानामप्यैक्यं स्यादभूतकारणम् ।
अविरुद्धत्वमेवात्र विद्धि ब्रह्मविदां वर ।२७

ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, महेश्वर, सदाशिव यह सभी श्रुतियों द्वारा प्रसिद्ध भगवान् शकरकेही स्वरूप हैं ।२१। आपने पहिले ऐसा कहाथा, अब कहते हैं कि यह तन्मात्रा से उत्पन्न होता है, मुझे इसमें अत्यन्त सन्देह है।२२। हे स्कन्दजी ! आप कृपया मेरे इस सन्देह को मिटाइये, यहसुनकरस्कन्दजी कहने लगे।२३। स्कन्दजी ने कहा-हे मुने ! तस्माद्वासे आरम्भ कर भूत सृष्टि के क्रमसे मैं सब कहता हूँ, तुम उसे सावधान होकर सुनो।२४। कलाओं से पंचभूतों की उत्पत्ति हुई, इसमें सन्देह नहीं है, स्थूल प्रपंच रूप पञ्चभूत भगवान् शिवके शरीर ही हैं ।२५। शिव तत्व से पृथ्वी तत्व तक, तत्वों के क्रमसे तन्मात्राओं से उत्पत्ति है, उस क्रम को कहताहूँ ।२६। भूतोत्पत्ति वाले धर्म से तन्मात्रा और कला उन्हीं भूतों का कारण है, इसमें कुछ विरोध न समझें ।२७।

स्थूलसूक्ष्मात्मके विश्वे चन्द्रसूर्यादयो ग्रहाः ।
सनक्षत्राश्च सजातास्तथान्ये ज्योतिषाँ गणाः ।२८
ब्रह्मविष्णुमहेशादिदेवता भूतजातयः ।
इन्द्रादयोऽपि दिक्पाला देयाश्च पितरोऽसुराः ।२९
राक्षसा मनुषाश्चान्ये जंगमत्वविभागिनः ।
पशवः पीक्षणः कीटा पन्नागादिः प्रभेदिनः ।३०

तरुगुल्मलतौषध्यः पर्वताश्चाष्ट विश्रुताः ।
गंगाद्याः सरितः सप्त सागराश्च महर्द्धयः ।३१
यत्किंचिद्वस्तु जातं तत्सर्वमत्र प्रतिष्ठितम् ।
विचारणीयं सद्बुध्या न बहिर्मुनिनिसत्तमः ।३२
स्त्रीपुंरूपमिदं विश्वं विवशथक्त्यत्मक बुधैः ।
भवादृशैरुपास्यं स्याच्छिवज्ञानविशादै ।३३
सर्वं ब्रह्मोत्युपासीत सर्वं वै रुद्र इत्यपिः ।
श्रुतिराह मुने तस्मात्प्रपंचात्मा सदाशिवः ।३४
अष्टत्रिंशत्कलान्याससागर्थ्याद् द्वैतभावना ।
सदाशिवोऽहमेवेति भवितात्मा गुरुः शिवः ।३५

चन्द्र, सूर्य आदिकी ग्रह-नक्षत्रों सहित उत्पति इस स्थूल-सूक्ष्मात्मक विश्व में जैसे हुई है, वैसे ही ।२८। ब्रह्मा, विष्णु महेश आदि देवता, भूत, जाति, इंद्रादि दिक्पाल, देवता, पितर दैत्य ।२९। राक्षस, मनुष्य सथा विभिन्न प्रकार के जंगत जीव, पशु, पक्षी, कीट तथा पतगरूपी ।३०। वृक्ष, गुल्म, लता, औषधि, पर्वत नदी, सागर, महर्षिगण ।३१। जो कुछ भी है, सो सब इसीमें स्थित हैं, इसे बुद्धि से समझना चाहिए ।३२। यह स्त्री-पुरुष रूप जगत् शिव शक्ति से युक्त है, शिव ज्ञान के त्राता पण्डितों के लिए उपासनीय है ।३३। यह जी कुछ है, वह सभी शिव है ऐसा जानकर उपासना करे शिव ही प्रपञ्चात्मा है ऐसा श्रुतियाँ कहती हैं ।३४। अड़-तीस कलाओ का त्याग करने से शिवजी की अद्वैत भावना करने वाला गुरु शिव ही समझो ।३५।

एवविचारी सच्छिष्यो गुरुः स्यात्सशिवःस्वयम्।
प्रपंचदेवताथंत्रमंत्रात्मा न हि संशयः ।३६
आचार्यरूपया विप्रः संच्छिन्नाखिलबन्धनः ।
शिशुः शिवपादसक्तो गुर्वात्मा भवति ध्रुवम् ।३७
यदस्ति वस्तु तत्सर्वं गुणाप्राधान्ययोगतः ।
समस्तं व्यस्तमपि च प्रणवार्थं प्रचक्षते ।३८

रागादिदोषरहितं वेदसारः शिवो दिशः ।
तुभ्य मे कथितं प्रीत्याद्वैतज्ञानं शिवप्रियम् ।३९
यो ह्यन्यथैतन्मनुते मद्वचो मदगर्वितः ।
देवो या मानवः सिद्धो गन्धर्वो मनुजोऽपिवा।४०
दुरात्मनस्तस्य शिरः छिद्यां समतया ध्रुवम्।
सच्छक्त्या रिपुकालाग्निकल्पया न हि संशयः ।४१
भवानेव मुने साक्षाच्छिवाद्वैतविदां वरः ।
शिवज्ञानोपदेशे हि शिवाचारप्रदर्शकः ।४२

इस प्रकार विचार करने वाले श्रेष्ठ शिष्य से युक्त गुरु शिवही है तथा प्रपंच देवता यन्त्र मन्त्रात्मा गुरुभी शंकर ही है, इसमें सशय नहीं है ।३६। इस प्रकार गुरु की कृपासे सभी बन्धनों से मुक्त होकर शिवपद में आसक्ति वाला शिष्य अवश्य ही पूज्यात्मा बनजाता है।३७। सम्पूर्ण वस्तुगुण प्रधान योगकेकारण समस्त एव पृथक् प्रणवकेअर्थको ही प्रकाशित करती हैं।३८। रागादि दोषों से रहित तथा वेदों का साररूप यही शिवजी का उपदेश है, जो अद्वैत ज्ञान शिवजी का प्रिय है, वह मैंने तुम्हारे प्रतिकहाहै ।३९। जो इससे विपरीत करे अथवा अहङ्कारसे मेरे इस उपदेश को मिथ्यामाने, वह देवता, मनुष्य, सिद्ध अथवा गन्धर्व, कोई भी क्योन हो ।४०। उस दुरात्मा शत्रुका शिर मैं अपनी कालाग्नि के समान शक्ति से काट डालूँगा, इसमें शंका नहीं है ।४१। हे मुने ! तुम शिवजीके अद्वैत ज्ञानकेज्ञाता तथा शिव ज्ञान के उपदेशक और शिवाचार के प्रदर्शित करने वाले हो ।४२।

यद्देहभस्मसम्पर्कात्संच्छिन्नाघव्रजोऽशुचिः ।
महापिशाचः सम्प्राप त्वत्कृपातः सतां गतिम् ।४३
शिवयोगीतिसंख्यातस्त्रिलोकविभवोभवान् ।
भवत्कटाक्षसम्पर्कात्पशुः पशुपतिर्भवेत् ।४४
तव तस्य मयि प्रेक्षा लोकशिक्षार्थमादरात् ।
लोकोपकारकरण विचरन्तीह साधवः ।४५
इदं रहस्यं परमं प्रतिष्ठितमतस्त्वयि ।

त्वमपि श्रद्धया प्रथववष्वेव सादरम् ।४६
उपविश्य च तान्सर्वान्संयोज्य परमेश्वरे ।
शिवाचारं ग्राह्यस्व भूतिरुद्राक्षमिश्रितम्।४७
त्वं शिवो हि शिवाचारी सम्प्राप्ताद्वैतभावतः ।
विचरंल्लोकरक्षायै सुखमक्षयमाप्नुहि ।४८
श्रुत्वेदमद्भुतमतं हि षडाननोक्तंवेदान्तनिष्ठितमृषिस्तु विनम्रमूर्तिः।
भूत्वा प्रणम्यवहुशौ भुविदण्डवत्तत्पादारविंदविरन्मधुपत्वमाप।४९

जिसके शरीर की भस्मके स्पर्श से हीं पिशाचत्व को प्राप्त हुए महापापी भी पापोंसे मुक्त हो जाते हैं और आपकी कृपासे उन्हें सद्गति प्राप्त होती है ।४३। आप त्रैलोक्यमें महान् ऐश्वर्यशाली शिवयोगी कहे जाते हैं, आपके कटाक्षमात्र से प्राणी शिव स्वरूप होजाता है ।४४। आपलोकोपकार के लिये ही विचरण करते हैं और आपने जो प्रश्न किया,वह सबभी लोक शिक्षार्थ ही है ।४५। यह परम रहस्य आपमें सदाही प्रतिष्ठितरहताहैआप श्रद्धा और भक्ति सहित सदाप्रणव में आदरसे ।४६। अपने मन को शिव में लगाकर विभूति और रुद्राक्ष युक्त शिवाचार को ग्रहणकराओ ।४७। तथा आप शिव के आचार को ग्रहण करते हुए अद्वैत भावमेंरहकरलोक रक्षार्थ विचरण करते हुए अक्षय सुखकोप्राप्त होओ।४८। सूतजी ने कहा-स्कन्दजी के इन वेदाँत वचनों को सुनकर वामदेव विनम्र भाग से बारम्बार पृथ्वी में प्रणाम कर उनके चरण कमलों में विहार करते हुए मकरन्दरूपी रस को प्राप्त हो गये ।४९।

।। यातिलों का गुरुत्व और शिष्यकरण विधि ।।

श्रुत्वा वेदान्तसारं तद्रहस्य परमाद्भुतम् ।
किं पृष्टवान्वामदेवो महेश्वरसुतं तदा ।१
धन्योगी वामदेवः शिवाज्ञावरतः सदा ।
यत्सम्बन्धात्कथोत्पन्ना दिव्या परमपावनी ।२
इति श्रुत्वा मुनीनां तद्वचन प्रेमगर्भितम् ।
सूतः प्राह प्रसन्नस्ताञ्छिवासक्तमना बुधः ।३

धन्या यूयं महादेवभक्ता लोकोपकारका: ।
शृणुध्वं मुनय: सर्वे संवाद च तयो: पुन: ।४।
श्रुत्वा महेशतनयवचनं द्वैतनाशकम् ।
अद्वैतज्ञानजनकं सन्तुष्टोऽभून्माहमुनि: ।५
नत्वा स्तुत्वा च विविध कार्तिकेयं शिवात्मजम् ।
पुन: प्रपच्छ तत्वं हि विनयेन महामुनि: ।६
भगवन्सर्वतत्वज्ञ षण्मुखामृतवारिधे ।
गुरुत्वं कथमेतेषां यातिना भावितात्मनाम् ।७

शौनकजी ने कहा-वेदान्त के सार और परम रहस्य को इस प्रकार सुनकर वामदेवने स्कन्दजीसे कहा ।१। सदा शिव ज्ञान में रत योगी वामदेव अत्यन्त धन्य है, जिनके कारण यह दिव्य ज्ञानदायिनी परम पवित्र कथा प्रकट हुई ।२। उन मुनियों के इस प्रकार प्रेम गर्भितवचनों से प्रसन्न हो महाज्ञानी सूतजी उनसे कहने लगे ।३। सूतजीने कहा-आप शिव भक्त धन्यहैं, आपलोकोपकार हैं हे मुनियों ! उन दोनों का संवाद पुन: श्रवण करो ।४। स्कन्दजी के इस प्रकार द्वैतनाशक वचन श्रवण कर महा मुनि अत्यन्त प्रसन्न हुए ।५। शिवजी के पुत्र कार्तिकेयजीको बारम्बार प्रणाम एवं स्तुति करके वामदेवने विनयपूर्वक प्रश्न किया ।६। वामदेवने कहा— हे प्रभो ! आप सम्पूर्ण तत्वों के ज्ञाता हैं । हे षडानन ! इन पूर्वकथित आत्मज्ञानियों का गुरुत्व ।७।

जीवानां भोगमोक्षादिसिद्धि सिध्यति यद्वशात ।
पारम्पर्य्यं विनानेषामुपदेशाधिकारिता ।८
एवं च क्षौरकर्मांगं स्नानञ्च कथमीदृशाम् ।
इति विज्ञापयस्वामिन्संशयं छेत्तुमर्हसि ।९
इति श्रुत्वा कार्तिकेयो वामदेववच: स्मरन् ।
शिवं शिवां च मनसा व्याचष्टुमुपचक्रमे ।१०
योगपट्टं प्रवक्ष्यामि गुरुत्वं येन जायते ।
तव स्नेहाद्वामवेव महद्गोप्यं विमुक्तिदम् ।११

वैशाखे श्रावणे मासी तथाश्वयुजि कार्तिके ।
मार्गशीर्षे च माघे वा शुक्लपक्षे शुभे दिने ।१२
पञ्चम्यां पौर्णमास्यां वा कृतप्राभातिकक्रियः ।
लब्भानुज्ञसुतु गुरुणास्नात्वा नियतमानसः ।१३
पर्यंकशौचं कृत्वा तद्वाससांगं प्रमृज्य च ।
द्विगुणं दोरमाबध्य वाससी परिधाय च ।१४

और प्राणियों की भोग, मोक्ष आदि की सिद्धि जिसके द्वारा होती है उनके उपदेश का अधिकार सम्प्रदान के ज्ञान बिना नहीं होती ।८। इनके क्षौरकर्म और स्नानादिका यह प्रकार किस कारण है, यह समाधान करके मेरे सन्देह मिटाइये ।९। वामदेव जी का प्रश्नसुनकरस्कन्दजीने शिवाशिव को प्रणाम किया और कहना प्रारम्भ किया ।१०। स्कन्दजीने कहा—अब मैं योग-पद को कहता हूँ, उससे गुरुत्व प्राप्त होता है। यह अत्यन्त गुप्त वार्ता है, तुम्हारी प्रीतिके कारण ही कहताहूँ ।११।वैशाख,श्रावण,आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष तथा माघके शुक्लपक्ष एवं शुभ दिवस में ।१२। पञ्चमी अथवा पूर्णमासीको प्रातःकालीन कर्म से निवृत होकर गुरु आज्ञा प्राप्त कर नियम पूर्वक स्नानकरे ।१३। पर्यंक शौचकर वस्त्रों से शरीर को पोंछकर दुगुने धागे बाँध कपड़े पहिने ।१४।

क्षालितांघ्रिर्द्विराचम्य भस्म सद्यादिमन्त्रतः ।
धारयेद्धि समादाय समुद्धुलनमार्गतः ।१५
गृहीतहस्तो गुरुणा सानुकूलेन वै मुने ।
साशिष्यः सांजलिः स्वाभ्यां हस्याभ्यां प्राङ्मुखोयथा ।१६
तथोपवेष्टितस्तिष्ठेन्मण्डले समलंकृते ।
गुर्वासदवरे शुद्धे चैलाजिनकुशोत्तरे ।१७
अथ देशिक आदाय शंखं साधारमस्त्रतः ।
विशोध्यतस्य पुरतः स्थापयेत्सानुकूलतः ।१८
साधारं शंखमपि च सम्ज्य कुसुमोदिभिः ।
निःक्षिपेदस्त्रवर्मभ्यां शोधितं तत्र सज्जलम् ।१९

आपूर्य पूर्ववत्पूज्ये षडंगोक्तक्रमेण च ।
प्रणवेन पुनस्तद्वै सप्तधैवाभिमन्त्रयेत् ।२०।
अभ्यर्च्य गन्धपुष्पाद्यैर्धूपदीपौ प्रदर्श्य च ।
संरक्षास्त्रेण तं शंखं वर्मणाऽयावगुण्ठयेत् ।२१।

फिर चरण धोकर दो बार आचमन करे और सद्योजातादि मन्त्रोंसे मस्तक में भस्म लगाकर, फिर पूरे देह में लगावे ।१५। हे मुने! पूर्वाभिमुख होकर योग्य गुरु के हाथमें हाथ देकर फिर हाथ जोड़कर ।१६।सुन्दर अलंकारयुक्त मन्दिरमें गुरुप्रदत्तमृगचर्मके आसनपर बैठ ।१७।फिर आचार्य आधारसहित शंखको अस्त्र मन्त्रसे लावे और उसे शुद्धकर आगे स्थापित करे।१८। और पुष्पों द्वारा पूजन करे तथा कवच मन्त्रों से शुद्ध जल से आधारसहित शंख को।१९।भरकर षडङ्ग विधि से उसका पूजन करे और प्रणवसे उसे सात वार अभिमन्त्रित करे ।२०। फिर गन्धपुष्पादि से पूजन कर धूप-दीप दिखावे और मुद्रा रक्षा कर कवच मन्त्रसे ढके ।।२१।।

धेनुशंखाख्यमुद्रे च दर्शयेदथ देशिकः ।
पुनः स्वपुरतः शंखदक्षिणे देश उत्तमे ।२२।
पूजाध्योक्तविधानेन सुन्दरं मण्डलं शुभम् ।
कुर्यात्सम्पूजयेत्तं च सुगन्धकुमादिभिः ।२३।
साधारं शोधितं शुद्धं घटं तन्तुपरिष्कृतम् ।
धूपितं स्थापितं शुद्धवासितोदप्रपूरितम् ।२४।
पञ्चत्वक्पञ्चपत्रैश्च मृत्तिकाभिश्च पञ्चभिः ।
मिलितं च सुगन्धेन लेपयत्तं मुनीश्वर ।२५।
वस्त्राम्रदलदूर्वाग्रनारिकेलसुमैस्ततः ।
तं घटं वस्तुभिश्चान्यैः संस्कुर्तिममलंकृतम् ।२६।
नृम्लस्कमिति सम्प्रोच्य ग्लूमित्यन्तेऽथ देशिकः ।
सम्यग्विधानतः प्रीत्या सानुकूलः समर्चयेत् ।२७।
आधारशक्तिमारभ्य यजनोक्तविधानतः ।
पञ्चावरणमार्गेण देवमावाह्य पूजयेत् ।२८।

आचार्य धेनु और शंखमुद्रादि दिखाकर आगे क्रमश शंख के दक्षिण और पूजन और अर्घ्यके विधानसे अष्टमंडल करके, उसका सुगन्धित पुष्पोंसे पूजन करे।२२।२३। आधार को शुद्ध कर उसपर शुद्ध घटरखकर सूत्रलपेटे तथा धूप देकर शुद्ध सुगन्धितजलसे परिपूर्ण करे। २४। पीपल, पिलखन, आम्र जामुन और बड़ ये पंचछाल तथा पंचपल्लव,हाथी, घोड़े रथ, बाँबो तथा नदीके सङ्गमकी मिट्टी,इनमें सुगन्धित द्रव्य मिलाकर कलशपरलेपे।।२५।। वस्त्र, आम्रपत्र, कुशाग्र, नारियल और पुष्पादि से उसे अलंकृत करे।२६। नृम्लस्क उच्चारण कर अन्त में ग्लूम कहे और विधिवत् पूजनकरे ।।२७।। आधार शक्तिसे आरम्भ करके यज्ञविधि से देवाह्वानकर पंचावरण विधि से पूजन करे ।।२८।।

निवेद्य पायसान्नज तांबूलादि यथा तुरा ।
नामाष्टकार्चनान्त च कृत्वा तमभिमन्त्रयेद् ।।२९
प्रणवाष्ठोत्तरशतं ब्रह्माभिः पंचभिः क्रमात् ।
सद्यदीशान्तमप्यस्त्रं रक्षितं वर्मणा पुनः ।।३०
अवगुण्ठय प्रदर्श्याथ धूपदीपौ च भक्तितः ।
धेनुयोन्याख्यमुद्रे च सम्यक्तत्र प्रदर्शयेत् ।।३१
ततश्च देशिकस्तस्य दर्भैराच्छाद्य मस्तके ।
मण्डलस्थेशदिग्भागे चतुरस्त्रं प्रकल्पयेत् ।।३२
तदुपर्य्यासनं रम्यं कल्पयित्वा विधानतः ।
तत्र संस्थापयेच्छिष्यं त शिशुं सानुकूलतः ।।३३
ततः कुम्भं समुत्थाप्य स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ।
शभिषिंचेद् गुरुः शिष्य प्रादक्षिण्येन मस्तके ।।३४
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य्य सप्तधा ब्रह्मभिस्ततः ।
पंचभिश्चाभिषेकांते शंखोदेनाभिवेष्टयेत् ।।३५

पूर्वोक्त प्रकार से खीर,ताम्बूलआदि भेट कर आठ नामों से पूजनकरने तक उसको अभिमंत्रितकरे। २९। एक सौ आठ ओंकार और ईशानादि पंच-

व्रह्मसद्योजातादि से ईशानतक मन्त्रोंसे कलशका पूजनकरे ।३०।अस्त्रऔर कवचके मन्त्रोंसे ढककर वस्त्र और धूप-दीप दिखावे तथा धेनुऔर योनि मुद्रादिखावे ।३१। मस्तकको कुशोंसे ढककर उसके शिरोभाग ईशान की ओर चौकोण मण्डल बनावे ।३२।उसपर मनोहर आसन बिछा कर उसपर योग्य शिष्य को बटावे ।३३। स्वस्तिवाचन कर कुम्भ को उठा कर ।क्षिण हाथ से शिष्य के मस्तक पर अभिषेक करे ।३४। प्रथम प्रणव का उच्चारणकर शंखके जलसे पंचव्रह्म और सप्तव्रह्मसे सम्पन्नकरे ।३५।

चारुदीप प्रदर्श्याथ वापसां परिमृज्य च ।
नूतनं दोरकौपीनं वाससी परिधापयेत् ॥३६
क्षालितांघ्रिर्द्विराचम्य धृतभस्मगुरुः शिशुम् ।
सस्ताभ्यामवलब्याथ हस्तौ मंडपमध्यतः ॥३७
तदंगेषु समालिप्य तद्भस्म विधिना गुरुः ।
आसने संप्रवेश्याथ कल्पिते स्थापयेत्सुखम् ।३८।
पूर्वाभिमुखमात्मीयतत्वज्ञानाभिलाषिणम् ।
स्वासनस्थो गुरुर्ब्रूयादमलात्मा भवेति तम् ॥३९
गुरुश्च परिपूर्णोऽस्मि शिव इत्यचलस्थितिः ।
समाधिमाचरेत्सम्यङ्मूहूर्तं गूढमानसः ॥४०
पश्चादुन्मील्य नयने सानुकलेन चेतसा ।
सांजलिं संस्थितं शुद्धं पश्येच्छिष्यमनाकुलः ॥४१
स्वसस्तं भासितालिप्तं विन्यस्यशिशुमस्तके ।
दक्षश्रुतावुपदिशेद्धंसः सोऽहमिति स्फुटम् ॥४२
तत्राद्याहंपदस्यार्थः शक्त्यात्मा स शिवः स्वयम् ।
स एवाहं शिवोस्मीति स्वात्मानं सम्विभावय ॥४३
य इत्यणोरर्थं तत्वमुपदिश्य ततोदेत् ।
अवांतराणाँ वाक्यानामर्थतात्पर्यमादरात् ॥४४
वाक्यानि वच्मि ते व्रह्मन्सावधानमतिः श्रृणु ।
तानि धारय चित्ते हि स वूयादिति संस्फुटम् ॥४५

दीपक दिखाकर नवीन डोरे, वस्त्र और कोपीनधारणकरावे ॥३६

चरण धोकर दोबार आचमन करे और भस्म लगाकर गुरु अपने हाथ से शिष्य का हाथ पकड़कर मण्डप के बीच में ॥३७॥ आसन पर बैठावे वह आसन शिष्य के लिए ही बनाया जाता है, उस पर सुख पूर्वक उसे बैठाना चाहिए, फिर उसके शरीर में भस्म लगाकर।३८। पूर्वाभिमुख किये तत्व ज्ञान के आकांक्षी अपने बन्धु के समान शिष्यसे, अपने आसन पर स्थित हुआ गुरु कहे कितू निर्मल आत्मा हो ।३९।फिर मैं परिपूर्णशिवहूँ इस भाव से गुरु दो घड़ी पर्यन्त अचल भाव से समाधिस्थ हो ।४०। फिर नेत्र खोल कर सावधान चित्त से हाथ जोड़कर बैठे हुए शिष्यकी ओर प्रेमपूर्वक देखे ।४१।और शिष्य के मस्तक पर अपने भस्म लगे हुए हाथ को रखकर उसके दक्षिण श्रोत्रमें हंस:सोहं मन्त्रका उपदेश करे ।४२।उसमें आदि हंसके अर्थ शक्ति आत्मा स्वयं शिवही है, मैं वही शिव हूँ अपने को ऐसा माने ।४३। तत्वका उपदेश करे, ब्रह्मके परोक्षज्ञान के प्रदर्शक महावाक्यों के तात्पर्य को आदर सहित बतावे ।४४।हे ब्रह्मान् ! अब उन महावाक्यों को कहता हूँ, ऐसा कहे कि तू चित्त में धारण कर ।४५।

॥ महावाक्यों का अर्थ और योगपद वर्णन ॥

अथ महावाक्यानि (१) प्रज्ञानं ब्रह्म (२) अह ब्रह्मास्मि (३) तत्वमसि (४) अयमात्मा ब्रह्म (५) ईशावस्यमिद सर्वम् (६) प्राणोऽस्मि (७) प्रज्ञानात्मा (८) यवेह तदमुत्र यद्मुत्र तदन्विह (९) अन्यदेव तद्विदितादयो अविदितादपि (१०) एष त आत्मान्तर्माम्यमृतः (११) स यश्चायं पुरुषो यश्चामावादित्ये स एकः (१२) अहमस्मि परं ब्रह्म परंपरपरात्परम् १३ वेदशास्त्रगुरुत्वातु स्वपमानन्दलक्षणम् (१४) सर्वभूतस्थित ब्रह्मतदेदाहं न संशाय। (१५) तत्वस्य प्राणोऽहमस्मि (१६) अपां च प्राणोऽहमस्मि (१७) वायोश्च प्राणोऽहमस्मि आकाशस्य प्राणोऽहमस्मि (१८) त्रिगुणस्य प्राणोऽहमस्मि (१९) सर्वोऽह सर्वात्मकोऽह संसारो यद्भूत यच्च भव्यँ यद्वर्तमानं सर्वात्मकत्वाद्द्वितीयोऽहम् (२०) सर्वं खल्विद ब्रह्म (२१) सर्वोऽह विमुक्तोऽहम् (२२) योऽसौ सोऽहँ हन्सः सोऽहमस्मि । इत्येव सर्वत्र सदा ध्यायेदिति ॥

स्कन्धजी ने कहा— अब महावाक्य कहता हूँ- (प्रज्ञान ही ब्रह्म है, (२) में ब्रह्म हूँ, वह तू है, (यह आत्मा ब्रह्म है, (५) यह सम्पूर्ण विश्व ईश्वर से अधिष्ठित है, (६) मैंही प्राणहूं (७) आत्मा ज्ञान है,(८) जो वहाँ है सो यहाँ है, जो यहाँ है सो वहाँ है, (९) वह विदित अविदित से परे हैं, (१०) वह तुम्हारा आत्मा ही अन्तर्यामी एवं अमृत है, (११)इस पुरुष में और आदित्यमेजोहै, यह एक है, (१२) मैंहीपरब्रह्महूँ, (१३ वेदशास्त्र का ज्ञाता गुरु,परेसे परे एवं आनन्दस्वरूपमैं ही हूँ (१४) सर्वभूतोंमें स्थित ब्रह्म मैंहीहूँ,इसमें शव नहीं है।(१५)मैंहीतत्वकाप्राण तथा पृथ्वी का प्राण हूँ (१६ मैंहीजलोंका प्राणहूँऔरमैंहीतेज काप्राणहूँ,(१७)मैंही वायु का प्राण तथा आकाश का प्राण हूं, (१८) तीनों गुणों का प्राण मैं ही हूं, (१९) मैंहीसर्वात्मक हूँ, भूत, भविष्यत्, वर्तमान सर्वात्मक होने से मैं एक अद्वितीय हूँ, (२०) यह सभी ब्रह्म रूप है, (२१) मैं सर्व रूप एवं मुक्त स्वरूप हूँ, (२२) जो यह है सो मैं हूँ, मैं हंस हूँ।

प्रज्ञानं ब्रह्मवाक्यार्थः पूर्वमेव प्रवोधितः।
अहंपदस्यार्थभूतः शक्तयात्मा परमेश्वरः ॥१

अकारः सर्ववर्णाग्रयः प्रकाशः परमः शिवः।
हकारो व्योमरूपः स्याच्छक्तयात्मा संप्रकीर्त्तितः ॥२

शिवशक्तयोस्तु संयोगादानन्दः सततोदितः।
ब्रह्मेति शिवशक्तियोस्तु सर्वात्मत्वमिति स्फुटम् ।३

पूर्वमेवोपदिष्टं तत्सोऽदमस्मीत भावयेत्।
तत्वमित्यत्र तदिति तच्छब्दार्थः प्रवोधितः ॥४

अन्यथा सो हमित्यत्र विपरीतार्थभावना।
अहंशब्दस्तु पुरुषस्तदिति स्यान्नपुंसकम्।

एवमन्योन्यवैरुध्यादन्वयो न भवेत्तयोः ॥५
स्त्री पुंरूपस्य जगतः कारण चान्यथा भवेत्।

स तत्वमसि इत्येवमुपदेशार्थभावना ॥६
अयमात्मेति वाक्ये च पूरूपं पदयुग्मकम् ।
ईशेन रक्षणीयत्वादीशावास्यामिद जगत् ॥७

इस प्रकार सर्वत्र सदैव ध्यान करना चाहिए । इसका अर्थप्रज्ञान ब्रह्म है । ऐतरेय उपनिषद् के अनुसार प्रज्ञान शब्द चैतन्यकावाची है।यह प्रज्ञानरूपआत्मा ब्रह्मही यही इन्द्रहै, प्रज्ञानरूप ब्रह्ममेंसृष्टि, स्थितिऔरलय भी स्थितहै, प्रज्ञारूप नेत्रवाला लोकहोने से प्रज्ञा (ब्रह्म) सम्पूर्ण विश्व का आश्रयहै । अब अहंब्रह्मास्मिका अर्थकहताहूँ—अहं पदकाअर्थहैशक्त्यात्मा ईश्वर ।१। अकारसब वर्णोंमैंअग्र प्रकाशित परम शिव स्वरूप है, हकार व्योमरूप शक्तत्यात्मक कहाहै ।२। शिवशक्ति के संयोग से आनन्द स्थित रहताहै, ब्रह्मेतिसे शिव और शक्ति की सर्वात्मकता स्पष्ट होती है । ३ । फिर पूर्व उपदिष्ट 'सोहमस्मि' अर्थात् वहमैंहूँकी भावना करे, 'तत्वमसि' में तत्पद का अर्थ शक्तत्यात्मक समझो इसी प्रकार ब्रह्मास्मिकाअर्थ भीब्रह्म शब्दसे ग्रहणकरे ।४। अन्यथा अह ब्रह्मास्मितिमें शुद्धब्रह्मका अभेद प्रतीत होता है उसके विवरण वाक्यमे शक्त्यात्मक अभेदकी भावनाका उपदेश है । यदि कहेंकि शुद्धब्रह्मकी अभेदभावनाके निमित्त अहमस्मिका तात्पर्य हो परन्तुशक्त्यात्मक अभेदनहींहै, उसका समाधानहैंकि अहंपदका अर्थ-भूत शक्त्यात्मक ईश्वरहै, ऐसा पहले कहा होनेसे अलिंग भेदके विरोधीमत होनेसे अहं पदार्थका अभेदान्वयनहींहो सकता: क्योंकि 'अह' पुल्लिगऔर 'तत्'नपुन्सकहै इसप्रकारपरस्पर विरोधी होनेसे दोनोंका अन्वय नहीं हो सकता ।५। नहीं तो स्त्री पुरुषरूप विश्वका कारण भी अन्यथा होजायगा। इसलिए यहां तत्पद से शक्त्यात्मक का ही ग्रहण होगा । 'तत्वमसि' से और स आत्मा' से 'स' की अनुवृत्तिकर सशक्त्यात्मा यह ब्रह्मही है, इस प्रकार 'त ब्रह्मरूप त्वमसि श्वेतकेतो' श्रुतिका अर्थ है । उद्दकलकऋषि ने छान्दोग्यके छठे अध्यायमैं श्वेतकेतुके प्रति यह कहा है।६। 'अयमात्मा ब्रह्म' में दोनों पद पुंल्लिग हैं । आत्मा ओंकारही है, शिवजीसे रक्षित होने के कारण सम्पूर्ण विश्व 'ईशावास्यम्' कहा गया है ।७।

प्रज्ञानात्मा यदेवेह तदमुत्रेति चिन्तयेत् ।
यः स एवेति विद्वद्भिः सिद्धान्तिभिरिहोच्यते ॥८
उपरिस्थितवाक्ये च योऽमुत्र स इह स्थितः ।
इति पूर्ववदेवार्थः पुरुषो विदुषां मतः ॥९
अन्यदेव तद्विदितादथो अविदितादपि ।
अस्मिन्वाक्ये फलस्यापि वैपरीत्यविभावना ॥१०
यथा स्यात्तद्वदेवात्र वक्ष्यामि श्रूयतां मुने ।
अयथाविदिताच्छब्दो पूर्वगद्विदितादिति ॥११
प्रवृत्तः स्यात्तद्विदितात्तथैवाविदितात्परम् ।
अन्यदेव हि ससिद्धयै न भवेदिति निश्चितम् ॥१२
एष त आत्मांतर्यामी योऽमृतश्च शिवः स्वयम् ।
यश्चायं पुरुषे शभुर्यश्चादित्ये व्यवस्थितः ॥१३
स चासो सेति पार्थक्यं नैकं सर्वं स ईरितः ।
सोपाधिद्वयमस्यार्थं उसचारात्तथोच्यते ॥१४

'प्राणोस्मि प्रज्ञानात्मा' का तात्पर्य प्रज्ञानात्मकस्वरूप और प्राणपदार्थ हैं होहूँ। कौषीतकी ब्राह्मणके उपनिषदका वाक्य है जो प्रतर्दनने दिवोदास के पुत्र से कहा था। यहाँ 'प्राण' शब्द परब्रह्मका वाचक ही है, कार्य कारण उपाधिसे मुक्त चैतन्य जगत्धर्मके समान भासमान है, अज्ञानियों को वही अपने आत्मा में स्थित तथा अन्यलोकमें जगत् के कारणतत्वमात्र से प्राप्त है।८। कारणोपाधि ईश्वर है वही कार्योपाधि जीव है सिद्धान्तवेत्ताओं का यही मत है। 'यदमुत्र तदन्विह' में कारणोपाधि युक्त है वही कार्योपाधि में जीवरूप से स्थित है, विद्वानों का यही मत है। जो कार्य कारणरूप उपाधि युक्त ससारधर्म के समान दिखाई देता है, ज्ञानीजनोंको अपनी आत्मा में वही इष्ट है तथा जो परलोक में है वह नित्य, विज्ञानघनस्वभाव तथा विश्व धर्म से रहित ब्रह्म है। जो वहाँ इस आत्मा में है, वही नामरूप, कार्य कारण युक्त समझो ।९। 'अन्यदेवेति' इस वाक्य में मोक्षफलकी जैसे विपरीत भावना होती है, उसे कहता हूं सुनो ।१०। ,अन्यदेवेति इसवाक्य इतिशब्दअर्थ में अयथा-

र्थता से कारण ।११। ज्ञातादित' अर्थ में प्रयुक्त होती है। इसी प्रकार वाक्यान्तर में अविदितादिति शब्द:अपूर्व विदितादिति अर्थमें पूर्वमविज्ञातादिति अर्थ में प्रवृत्त होती है। इसी प्रकार भेद बुद्धिकी निवृत्ति से विपरीत फलकी भावना हो सकती है तथा जो विदित और अविदित से परे कोई अन्य सिद्धि हो तो उसकी सिद्धि में सम्यक् फलकी प्राप्ति सम्भव नहीं हैं। इस कारण वस्तु में कार्य-कारणात्मक ब्रह्म ही है। उपाधिसे भेद व्यवहृत होता है परन्तु बुद्धि के न होने से फलकी प्राप्ति नहीं हो सकती ।१२। एष ते आत्मेति' यह वृहदारण्यक का वाक्य है इसका अर्थहै–यह तेरा अन्तर्यामी आत्मा नित्य एवस्वय शिवस्वरूप है, जो पृथिवी में स्थित एवं पृथिवी के अन्तर में हैं,परन्तु पृथिवी उसे नहीं जानती, वही तेरा अन्तरात्मा अमृत रूप है अमृत और अन्तर्यामीसे परमात्मा ही है। तैतरीय ब्रह्म वल्ली के अनुसार जो आनन्दमय शिवअदित्य के देह में स्थित हैं।१३। जो प्रत्यक्ष होकर भी परोक्ष है वह एक ही है, उसमें अनेकत्व या पृथक्तव नहीं। यदि कहें कि सबके अधिष्ठान शिव पुरुषादिका अधिष्ठान नहीं हो सकती तो पुरुष से अधिष्ठित और आदित्त से अधिष्ठितरूप दो उपाधि वाला होने से इस वाक्य का अर्थ आरोप से कहा है ।।१४।।

त शम्भुनाथ श्रुतयो वदन्ति हि हिरण्ययम् ।
हिरण्यबाहव इति सर्वाङ्गस्योपलक्षणम् ।१५।
अन्यथा तत्पतित्वं तु न भवेदिति यत्नतः ।
य एषोन्तरिति शंभुश्छन्दोग्ये श्रूयते शिवः ।१६।
हिरण्यश्मश्रु वांस्तद्वद्धिरण्यमयकेशवान् ।
नखमारभ्य केशान्त सर्वत्रापि हिरण्मयः ।१७।
अहमस्मि पर ब्रह्म परापरपरात्परम् ।
इति वाक्यस्य तात्पर्यं वदामि श्रूयतामिदम् ।१८।
अहपदस्यार्थभूतः शक्त्यात्मा शिव ईरितः ।
स एवास्मीति वाक्यार्थयोजना भवतिध्रुवम् ।१९।
सर्वोत्कृष्टश्च सर्वात्मा परब्रह्म स ईरितः ।
परश्चाथापरश्चेति परात्परमिति त्रिधा ।२०।

रुद्रो ब्रह्मा च विष्णुश्च प्रोक्ताः श्रुत्यैव नान्यथा ।
तेभ्यश्च परमो देवः परशब्देन वोधितः ।२१।

श्रुति उन शिवको हिरण्यमय कहती हैं,यथार्थ में निर्गुण शिव हरिण्यमय नहीं हो सकता । यदि कहें कि 'हिरण्यबाहवे' से वाहमात्र के लिए हिरण्य कहा है यह सर्वाङ्ग का उपलक्षण है ।१५। फिर हिरण्यपति किस प्रकार होगया ?तो सुनो,यदि सर्वांगका लक्षण न होता तो पतित्व उपचारादि से भी न गनता,इससे हिरण्यवर्णय ही ठीक है, छान्दोग्य सम्मत यही है ।१६।ईश्वर में सुवर्णरूप विकार नहीं हो सकता, सुवर्ण प्रचेतन है,अचेतन पाप रहित होता है,फिर निषेध कैसा ? चक्षु के ग्रहणन होने से उसका अर्थ ज्तोतिर्मय हो सकताहै । सबके देह में शयन करने अथवा अपने से सम्पूर्ण विश्वको परिपूर्ण करनेसे उसे सावधान चित वालों को ही दिखाई पड़ने वाला समझे ।१७। नखसे केशके अग्र भ ग तक ज्योति स्वरूप, तुरीय ब्रह्म एवं परात्पर मैं हूं । इसका तात्पर्य कहता हूँ।१८।' अहं पदका अर्थ शक्ति सम्पन्न शिव है,वही मैं हूँ,इससे वाक्यार्थ होगया ।१९।पर ब्रह्म सबसे श्रेष्ठ तथा सबकी आत्मा होने से कहा है,वह पर, अपर और परात्पर इन तीन भेदों वाला है ।२०। श्रुति ने उन्हीं को रुद्र, ब्रह्मा और विष्णु कहा है, इन रुद्रादि तुरीय पर शब्द के द्वारा पर ब्रह्म जाना है ।।२१।।

वेदशास्त्रगुरूणं च वाक्याभ्यासवशाच्छिशोः ।
पूर्णानन्दमयः शंभुः प्रादुर्भूतो भवेद्धृदि ।२२।
सर्वभूतस्थितः शंभुः स एवाहं न संशयः ।
तत्वजातस्य सर्वस्य प्राणोऽस्म्यह महं शिवः ।२३।
इत्युक्त्वा पुनरप्याह शिवस्तत्वत्रयस्य च ।
प्राणोऽस्मीत्यत्र पृथ्व्यादिगुणान्तग्रहणान्मुने ।२४।
आत्मतत्वानि सर्वाणिग्रहीतानीति भावय ।
पुनश्च सर्वग्रहणं विद्यातत्वे शिवात्मनोः ।२५।
तत्वयोश्चास्म्यह प्राणः सर्वः सर्वात्मको ह्यहम् ।
जीवस्य चान्तर्यामित्वाज्जीवोऽह तस्य सर्वदा ।२६।

यद्भूतं यच्च भाव्यं यद् भविष्यत्सर्वमेव च ।
मन्मयत्वादहं सर्वः सर्वो वै रुद्र इत्यपि ।२७
श्रुतिराह मुने सा हि साक्षाच्छिवमखोद्गता ।
सर्वात्मा परमैरेभिगुर्णैर्नित्यसमन्वयात् ।२८

वेद, शास्त्र तथा गुरुवाणी के, अभ्याससे शिष्य के हृदय में पूर्णानन्द वाले शिवजी प्रादुर्भूत होते हैं ।२२। वह सब प्राणियोंमें स्थित शिवमैंही हूँ, सम्पूर्ण तत्वोंका प्राण एक मैं ही शिव हूं ।२३। इसप्रकारकहकर आत्मविद शिवाख्य तीनतत्वोंका वर्णनकरे । 'प्राणोऽस्मि' इस अर्थ के प्रतिपादन करने वाले वाक्यमें ।२४। पृथिवी आदि गुणों के अन्तर्ग्रहणसे पृथिवीका प्राण मैं हूँसे आरम्भकर त्रिगुणका प्राण मैंहूँ, कहने से सभी आत्मतत्त्वों का ग्रहण हो जाता है,ऐसी भावनाकरेफिरआत्मविद्या और शिवतत्वका भली प्रकार ग्रहण करके ।२५। भावना करे कि सब तत्वोंका प्राण मैं ही हूँ, सर्वात्मक होने से मैं ही सबहूँ,अय संसारीका अर्थ कहतेहैं-जीवरूप से अन्तर में घुसा हुआ होने से मैं जीव तथा संरक्षणशीलहूँ ।२६। 'यद्भूत' उस जीव का भूत, वर्तमान, भविष्य मैं हीहूँ ।२७। स्वयंशिवके मुखसे उद्भूत श्रुतिकहती है कि यह सम्पूर्ण जगत् आदिरुद्रही है, इस प्रकारमन्मय होनेके कारण सब कुछ मेराही स्वरूप है । सर्वात्म होने के कारण मैं अद्वितीय हूँ ।२८।

स्वस्मात्परात्मविरहादद्वितीयोऽहमेव हि ।
सर्वं खल्विदं ब्रह्मेति वाक्यार्थः पूर्वमीरितः।२९
पूर्णोऽहं भावरूपत्वान्नित्यमुक्तोहमेव हि ।
पशवोमत्प्रसादेन मुक्ताः मदभावमाश्रिताः ।३०
योऽसौ सर्वात्मकः शम्भुःसोऽह सन्स शिवोऽस्म्यहम् ।
इति वै सर्ववाक्यार्थो वामदेव शिवोदितः ।३१
इतीशश्रुतिवाक्यामुपदिष्टाथमादरात् ।
साक्षाच्छिवैक्यदं पुन्सां शिशोगुरुपादिशेत् ।३२
आदाय शख साधारमस्त्रमन्त्रेण भस्मना ।
शोध्य तत्पुरतः स्थाप्य चतुरस्रे समर्चिते ।३३

ओमित्यभ्यर्च्य गन्धाद्यै रस्त्रं वस्त्रोपशोभितम् ।
वासितं जलमापूर्य सम्पूज्योमिति मंत्रतः ।३४
सप्तधवाभिमन्त्र्यार्थं प्रणवेन पुनश्च तम् ।
यस्त्वन्तरं किंचिदपि कुरुते सोऽतिभीतिभाक् ।३५

सर्वोत्कृष्ट तथा अन्तर्यामी आदि गुणों वाला होने से मैं अद्वितीय हूँ 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' का अर्थ पहिलेही कहाजाचुका है । उसब्रह्मसेतेज, जल आदिकी उत्पत्ति हुईहै, इसीलिये यहतज्जकहे गयेहैं तथा प्रतिलोम से लीन होजाते हैं ।२९। इस प्रकार इस विश्वका ब्रह्मरूप प्रतिपादन किया है तथा सब पदार्थरूप होने से पूर्ण हैं, पेरी कृपा से पशु भी मोक्ष को प्राप्त होकर मेरे पदको पागये ।३०। यह जो कुछ है, सो मैं हूँ, इसका अर्थ सुनो । जो शक्त्यात्मा शिवहैं वहमैं हूँ, हंस शिव मैं हूँ, यह ईशावास्यकीश्रुतिहै ।३१। इसप्रकारआदर पूर्वकगुरु श्रुतिकेअर्थोंका शिवपरत्वउपदेश अपने शिष्य के प्रतिकरे ।३२। तथा आधार सहित शंखको ग्रहण कर अस्त्रमंत्रात्मक भस्म से शोधकर उसके समक्ष चौकोर मण्डल में स्थापित करे ।३३। प्रणव के उच्चारणपूर्वक गन्धादिसे पूजनकरे तथा अस्त्रमंत्र और वस्त्रसे मार्जन कर सुगन्धितजल भरकर ॐका उच्चारण करे ।३४। फिर प्रणव से ही सात वारअभिमन्त्रितकरे,इसमें अन्तरकरने वाले कोभय उपस्थित होता है ।३५।

इत्याह श्रुतिसत्तत्वं दृढ़ात्मा गतभीर्भव ।
इत्याभाष्य स्वयं शिष्यं देवं ध्यायन्समर्चयेत् ।३६
शिष्यासनं सम्पूज्य षडुत्थापनमार्गतः ।
शिवासने च संकल्प्य शिवमूर्ति प्रकल्पयेत् ।३७
पञ्च ब्रह्माणि विन्यस्य शिरःपादावसानकम् ।
मुण्डवक्त्रकलाभेदैः प्रणवस्य कला अपि ।३८
शष्टत्रिंशन्मंत्ररूपाः शिष्यदेहेऽथ मस्तके ।
समावाह्य शिवं मुद्राः स्थापनीयाः प्रदर्शयेत् ।३९
ततश्चाङ्गनि विन्यस्य सर्वज्ञानीत्यनुक्रमात् ।
कल्पयेदुपचारांश्च षोडशासनपूर्वकान् ।४०

पायसान्नञ्च नैवेद्यं समर्प्योमग्निजायया ।
गंडूषाचमनार्घ्यादि धूपदीपादिकं क्रमात् ।४१
नाभाष्टकेन सम्पूज्य ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ।
जपेद्ब्रह्मविदाप्नोति भृगुर्वै वारुणिस्ततः ।४२

श्रुत के इस आशय के विपरीत न करे, हे शिष्य ! इसलिए तू दृढ़ात्मा और भयविहीन हो इस प्रकार शिष्यसे कहकर शिवजी का ध्यान करता हुआ शिष्यका देवरूप से पूजन करे ।३६। षडध्व विधिसे शिष्य के आसन को पूजकर शिवके आसन और स्वरूपकी कल्पनाकरो ।३७। शिर, मुख, हृदय, गुह्य, पाद पर्यन्त पञ्चब्रह्म को स्थिति करे और मुंड तथा मुख विषयक प्रणव की ।३८। अड़तालीस ब्रहम रूप कलाशिष्य के शरीर में स्थितकरे, उसकेमस्तकमेंशिवजीकाआहवानकरउनकलाओंकोस्थापितकरे औरमुद्रादिखाकर ।३९। षडङ्गन्यास पूर्वकषोडशउपचारको कल्पना करे । ।। ४० ।। खीर अर्पण कर, कुल्ला, आचमन, धूप, दीप आदि क्रम पूर्वक दे ।। ४१ ।। आठ नामों से पूजन करे, वेदपाठी ब्राह्मणों के सहित जप करे ।४२।

यो देवानामुपक्रभ्य यः परः स महेश्वरः ।
इत्येतैं तस्य पुरतः कह्लारादिविनिर्मितान् ।४३
आदाय मालामुत्याय श्रीविरूपाक्ष निर्मिते ।
शास्त्रे पञ्चाशिकेरूपेसिद्धिस्कन्धं जपेच्छनैः ।४४
ख्यातिः पूर्णोऽहमित्येतं सानुकुलेन चेतसा ।
देशिकस्तस्य शिष्यस्य कंठदेशे समर्पयेत् ।४५
तिलकं चन्दनेनाथ सर्वाङ्गालेपनं पुनः ।
स्वसम्प्रदायानुगुंण कारयेच्च यथाविधि ।४६
ततश्च देशिकः प्रीत्या नामश्रीपादसंज्ञितम् ।
छत्रञ्च पादुकां दद्याद् दूर्वाकल्पविकल्पनम् ।
व्याख्यातृत्वञ्च कर्मादि गुर्वासनपरिग्रहम ।
अनुगृह्य गुरुस्तस्यै शिष्याय शिवरूपिणे ।४८
शिवोऽहमस्मीति सदासमाधिस्थो भवेति तम्।
संप्रोचथ स्वयं तस्मै नमस्कारं समाचरेत् ।४९

'यो देवानां प्रथमं पुरस्तात्' से आरम्भ कर 'प्रकृतिलीनो यः परः स महेश्वरः' तकजपे और श्वेत कमल आदि से निर्मित ।४३। माला लेकर शिवोक्त पंचमुख स्वरूप प्रतिपादक शास्त्र से स्थित सिद्धाख्य स्कन्ध ।४४। ख्याति पूर्णाहुतिके अन्ततक धीरे-धीरे जपे और मनोहर गंधादि से सम्पन्न जाँघ तक लम्बी उस मालाको कण्ठ में धारण करावे ।४५। शिष्य तिलक और सर्वांग में चन्दन लगावे, सम्प्रदाय की विधि के अनुसार ।४६। गुरु श्रीपादादि नाम करण शिष्य का करे छत्र और पादुका देकर तूर्वाचन का प्रकार ।४७। अर्थात् उसका विशेष व्यवस्थापन कर्मारम्भ में गुरु आसन का परिग्रह है, गुरु उसशिवरूपशिष्य से अनुग्रह पूर्वक कहे ४८। मैं सदा शिव हूँ, इस प्रकार कहकर स्वयं उसे नमस्कार करे ।४९।

शिष्यस्तदा समुत्थाय नमस्कुर्याद् गुरुं तथा ।
गुरोरपि गुरुं तस्य शिष्यांश्च स्वगुरोरपि ।५०
एवं कृतनमस्कारं शिष्यं दद्याद् गुरुः स्वयम् ।
सुशीलं यतवाचं त विनयावनतं स्थितम् ।५१
अद्यप्रभृति लोकानामनुग्रहपरो भव ।
परीक्ष्यवत्सरं शिष्यमंगीकुरु विधानतः ।५२
रागादिदोषान्सन्त्यज्य शिवध्यानपरो भव ।
सत्सम्प्रदायससिद्धैः संगं कुरु न चेतरैः ।५३

नमस्कार अपने सम्प्रदाय के अनुरूपकरे और शिष्यभी उठकर गुरु को नमस्कार करे ।५०। इस प्रकार नमस्कार करने पर, वाणी को रोक कर विनम्र हुए सुशील शिष्यको ।५१। गुरु स्वयं जप करावे और कहे कि तुम आजसे प्राणियों पर अनुग्रह करते रहना, इस प्रकार उसकी एक वर्ष तक परीक्षा करे, फिर कहे कि मेरे वाक्योंको स्वीकर करते रहना ।।५२।। रागादि दोषों का त्याग कर शिव के ध्यानमें तत्पर रहना तथा सत्सम्प्रदाय के मनुष्यों की सङ्गति करना ही सर्वोत्तम है ।५३।

श्रीशिवमहापुराणम्
अथ श्रीशिवमहापुराणे सप्तमी वायवीयसंहिता प्रारभ्यते
श्रीगणेशाय नमः
श्रीगौरीशंकराभ्यां नमः
अथ सप्तमी वायवीयसंहिता प्रारभ्यते

अध्याय १

व्यास उवाच
नमश्शिवाय सोमाय सगणाय ससूनवे
प्रधानपुरुषेशाय सर्गस्थित्यंतहेतवे १
शक्तिरप्रतिमा यस्य ह्यैश्वर्य्यं चापि सर्वगम्
स्वामित्वं च विभुत्वं च स्वभावं संप्रचक्षते २
तमजं विश्वकर्माणं शाश्वतं शिवमव्ययम्
महादेवं महात्मानं व्रजामि शरणं शिवम् ३
धर्मक्षेत्रे महातीर्थे गंगाकालिंदिसंगमे
प्रयागे नैमिषारण्ये ब्रह्मलोकस्य वर्त्मनि ४
मुनयश्शंसितात्मानः सत्यव्रतपरायणाः
महौजसो महाभागा महासत्रं वितेनिरे ५
तत्र सत्रं समाकर्ण्य तेषामक्लिष्टकर्मणाम्
साक्षात्सत्यवतीसूनोर्वेदव्यासस्य धीमतः ६
शिष्यो महात्मा मेधावी त्रिषु लोकेषु विश्रुतः
पंचावयवयुक्तस्य वाक्यस्य गुणदोषवित् ७
उत्तरोत्तरवक्ता च ब्रुवतोऽपि बृहस्पतेः
मधुरः श्रवणानां च मनोज्ञपदपर्वणाम् ८
कथानां निपुणो वक्ता कालविन्नयवित्कविः

आजगाम स तं देशं सूतः पौराणिकोत्तमः ९
तं दृष्ट्वा सूतमायांतं मुनयो हृष्टमानसाः
तस्मै साम च पूजां च यथावत्प्रत्यपादयन् १०
प्रतिगृह्य सतां पूजां मुनिभिः प्रतिपादिताम्
उद्दिष्टमानसं भेजे नियुक्तो युक्तमात्मनः ११
ततस्तत्संगमादेव मुनीनां भावितात्मनाम्
सोत्कंठमभवच्चितं श्रोतुं पौराणिकीं कथाम् १२
तदा तमनुकूलाभिर्वाग्भिः पूज्य १ महर्षयः
अतीवाभिमुखं कृत्वा वचनं चेदमब्रुवन् १३
ऋषय ऊचुः
रोमहर्षण सर्वज्ञ भवान्नो भाग्यगौरवात्
संप्राप्तोद्य महाभाग शैवराज महामते १४
पुराणविद्यामखिलां व्यासात्प्रत्यक्षमीयिवान्
तस्मादाश्चर्यभूतानां कथानां त्वं हि भाजनम् १५
रत्नानामुरुसाराणां रत्नाकर इवार्णवः
यच्च भूतं यच्च भव्यं यच्चान्यद्वस्तु वर्तते १६
न तवाविदितं किञ्चित्त्रिषु लोकेषु विद्यते
त्वमदृष्टवशादस्मद्दर्शनार्थमिहागतः
अकुर्वन्किमपि श्रेयो न वृथा गन्तुमर्हसि १७
तस्माच्छ्राव्यतरं पुण्यं सत्कथाज्ञानसंहितम्
वेदांतसारसर्वस्वं पुराणं श्रावयाशु नः १८
एवमभ्यर्थितस्सूतो मुनिभिर्वेदवादिभिः
श्लक्ष्णां च न्यायसंयुक्तां प्रत्युवाच शुभां गिरम् १९
सूत उवाच
पूजितोऽनुगृहीतश्च भवद्भिरिति चोदितः

कस्मात्सम्यगन विब्रूयां पुराणमृषिपूजितम् २०
अभिवंद्य महादेवं देवीं स्कंदं विनायकम्
नंदिनं च तथा व्यासं साक्षात्सत्यवतीसुतम् २१
वक्ष्यामि परमं पुण्यं पुराणं वेदसंमितम्
शिवज्ञानार्णवं साक्षाद्भक्तिमुक्तिफलप्रदम् २२
शब्दार्थन्यायसंयुक्तै रागमार्थैर्विभूषितम्
श्वेतकल्पप्रसंगेन वायुना कथितं पुरा २३
विद्यास्थानानि सर्वाणि पुराणानुक्रमं तथा
तत्पुराणस्य चोत्पत्तिं ब्रुवतो मे निबोधत २४
अंगानि वेदाश्चत्वारो मीमांसान्यायविस्तरः
पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्याश्चेताश्चतुर्दश २५
आयुर्वेदो धनुर्वेदो गांधर्वश्चेत्यनुक्रमात्
अर्थशास्त्रं परं तस्माद्विद्या ह्यष्टादश स्मृताः २६
अष्टादशानां विद्यानामेतासां भिन्नवर्त्मनाम्
आदिकर्त्ता कविस्साक्षाच्छूलपाणिरिति श्रुतिः २७
स हि सर्वजगन्नाथः सिसृक्षुरखिलं जगत्
ब्रह्माणं विदधे साक्षात्पुत्रमग्रे सनातनम् २८
तस्मै प्रथमपुत्राय ब्रह्मणे विश्वयोनये
विद्याश्चेमा ददौ पूर्वं विश्वसृष्ट्यर्थमीश्वरः २९
पालनाय हरिं देवं रक्षाशक्तिं ददौ ततः
मध्यमं तनयं विष्णुं पातारं ब्रह्मणोऽपि हि ३०
लब्धविद्येन विधिना प्रजासृष्टिं वितन्वता
प्रथमं सर्वशास्त्राणां पुराणं ब्रह्मणा स्मृतम् ३१
अनंतरं तु वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिर्गताः
प्रवृत्तिस्सर्वशास्त्राणां तन्मुखादभवत्ततः ३२

यदास्य विस्तरं शक्ता नाधिगंतुं प्रजा भुवि
तदा विद्यासमासार्थं विश्वेश्वरनियोगतः ३३
द्वापरांतेषु विश्वात्मा विष्णुर्विश्वंभरः प्रभुः
व्यासनाम्ना चरत्यस्मिन्नवतीर्य महीतले ३४
एवं व्यस्ताश्च वेदाश्च द्वापरेद्वापरे द्विजाः
निर्मितानि पुराणानि अन्यानि च ततः परम् ३५
स पुनर्द्वापरे चास्मिन्कृष्णद्वैपायनाख्यया
अरण्यामिव हव्याशी सत्यवत्यामजायत ३६
संक्षिप्य स पुनर्वेदांश्चतुर्द्धा कृतवान्मुनिः
व्यस्तवेदतया लोके वेदव्यास इति श्रुतः ३७
पुराणानाञ्च संक्षिप्तं चतुर्लक्षप्रमाणतः
अद्यापि देवलोके तच्छतकोटिप्रविस्तरम् ३८
यो विद्याच्चतुरो वेदान् सांगोपणिषदान्द्विजः
न चेत्पुराणं संविद्यान्नैव स स्याद्विचक्षणः ३९
इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्
बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रतरिष्यति ४०
सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वंतराणि च
वंशानुचरितं चैव पुराणं पंचलक्षणम् ४१
दशधा चाष्टधा चैतत्पुराणमुपदिश्यते
बृहत्सूक्ष्मप्रभेदेन मुनिभिस्तत्त्ववित्तमैः ४२
ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवं च शैवं भागवतं तथा
भविष्यं नारदीयं च मार्कंडेयमतः परम् ४३
आग्नेयं ब्रह्मवैवर्तं लैंगं वाराहमेव च
स्कान्दं च वामनं चैव कौर्म्यं मात्स्यं च गारुडम् ४४
ब्रह्मांडं चेति पुण्योऽयं पुराणानामनुक्रमः

तत्र शैवं तुरीयं यच्छार्वं सर्वार्थसाधकम् ४५
ग्रंथो लक्षप्रमाणं तद्व्यस्तं द्वादशसंहितम्
निर्मितं तच्छिवेनैव तत्र धर्मः प्रतिष्ठितः ४६
तदुक्तेनैव धर्मेण शैवास्त्रैवर्णिका नराः
तस्माद्विमुकुतिमन्विच्छञ्छिवमेव समाश्रयेत् ४७
तमाश्रित्यैव देवानामपि मुक्तिर्न चान्यथा ४८
यदिदं शैवमाख्यातं पुराणं वेदसंमितम्
तस्य भेदान्समासेन ब्रुवतो मे निबोधत ४९
विद्येश्वरं तथा रौद्रं वैनायकमनुत्तमम्
श्रौमं मातृपुराणं च रुद्रैकादशकं तथा ५०
कैलासं शतरुद्रं च शतरुद्राख्यमेव च
सहस्रकोटिरुद्राख्यं वायवीयं ततःपरम् ५१
धर्मसंज्ञं पुराणं चेत्येवं द्वादश संहिताः
विद्येशं दशसाहस्रमुदितं ग्रंथसंख्यया ५२
रौद्रं वैनायकं चौमं मातृकाख्यं ततः परम्
प्रत्येकमष्टसाहस्रं त्रयोदशसहस्रकम् ५३
रौद्रकादशकाख्यं यत्कैलासं षट्सहस्रकम्
शतरुद्रं त्रिसाहस्रं कोटिरुद्रं ततः परम् ५४
सहस्रैर्नवभिर्युक्तं सर्वार्थज्ञानसंयुतम्
सहस्रकोटिरुद्राख्यमेकादशसहस्रकम् ५५
चतुस्सहस्रसंख्येयं वायवीयमनुत्तमम्
धर्मसंज्ञं पुराणं यत्तद्द्वादशसहस्रकम् ५६
तदेवं लक्षमुद्दिष्टं शैवं शाखाविभेदतः
पुराणं वेदसारं तद्भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ५७
व्यासेन तत्तु संक्षिप्तं चतुर्विंशत्सहस्रकम्

शैवन्तत्र पुराणं वै चतुर्थं सप्तसंहितम् ५८
विद्येश्वराख्या तत्राद्या द्वितीया रुद्रसंहिता
तृतीया शतरुद्राख्या कोटिरुद्रा चतुर्थिका ५९
पंचमी कथिता चोमा षष्ठी कैलाससंहिता
सप्तमी वायवीयाख्या सप्तैवं संहिता इह ६०
विद्येश्वरं द्विसाहस्रं रौद्रं पंचशतायुतम्
त्रिंशत्तथा द्विसाहस्रं सार्द्धैकशतमीरितम् ६१
शतरुद्रन्तथा कोटिरुद्रं व्योमयुगाधिकम्
द्विसाहस्रं च द्विशतं तथोमं भूसहस्रकम् ६२
चत्वारिंशत्साष्टशतं कैलासं भूसहस्रकम्
चत्वारिंशच्च द्विशतं वायवीयमतः परम् ६३
चतुस्साहस्रसंख्याकमेवं संख्याविभेदतः
श्रुतम्परमपुण्यन्तु पुराणं शिवसंज्ञकम् ६४
चतुःसाहस्रकं यत्तु वायवीयमुदीरितम्
तदिदं वर्त्तयिष्यामि भागद्वयसमन्वितम् ६५
नावेदविदुषे वाच्यमिदं शास्त्रमनुत्तमम्
न चैवाश्रद्धधानाय नापुराणविदे तथा ६६
परीक्षिताय शिष्याय धार्मिकायानसूयवे
प्रदेयं शिवभक्ताय शिवधर्मानुसारिणे ६७
पुराणसंहिता यस्य प्रसादान्मयि वर्त्तते
नमो भगवते तस्मै व्यासायामिततेजसे ६८

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
विद्यावतारकथनं नामप्रथमोऽध्यायः १

अध्याय २

सूत उवाच
पुरा कालेन महता कल्पेतीते पुनःपुनः
अस्मिन्नुपस्थिते कल्पे प्रवृत्ते सृष्टिकर्मणि १
प्रतिष्ठितायां वार्तायां प्रबुद्धासु प्रजासु च
मुनीनां षट्कुलीयानां ब्रुवतामितरेतरम् २
इदं परमिदं नेति विवादस्सुमहानभूत्
परस्य दुर्निरूपत्वान्न जातस्तत्र निश्चयः ३
तेऽभिजग्मुर्विधातारं द्रष्टुं ब्रह्माणमव्ययम्
यत्रास्ते भगवान् ब्रह्मा स्तूयमानस्सुरासुरैः ४
मेरुशृंगे शुभे रम्ये देवदानवसंकुले
सिद्धचारणसंवादे यक्षगंधर्वसेविते ५
विहंगसंघसंघुष्टे मणिविद्रुमभूषिते
निकुंजकंदरदरीगृहानिर्झरशोभिते ६
तत्र ब्रह्मवनं नाम नानामृगसमाकुलम्
दशयोजनविस्तीर्णं शतयोजनमायतम् ७
सुरसामलपानीयपूर्णरम्यसरोवरम्
मत्तभ्रमरसंछन्नरम्यपुष्पितपादपम् ८
तरुणादित्यसंकाशं तत्र चारु महत्पुरम्
दुर्द्धर्षबलदृप्तानां दैत्यदानवरक्षसाम् ९
तप्तजांबूनदमयं प्रांशुप्राकारतोरणम्
निर्व्यूहवलभीकूटप्रतोलीशतमंडितम् १०
महार्हमणिचित्राभिर्लेलिहानमिवांबरम्
महाभवनकोटीभिरनेकाभिरलंकृतम् ११
तस्मिन्निवसति ब्रह्मा सभ्यैः सार्द्धं प्रजापतिः

तत्र गत्वा महात्मानं साक्षाल्लोकपितामहम् १२
ददृशुर्मुनयो देवा देवर्षिगणसेवितम्
शुद्धचामीकरप्रख्यं सर्वाभरणभूषितम् १३
प्रसन्नवदनं सौम्यं पद्मपत्रायतेक्षणम्
दिव्यकांतिसमायुक्तं दिव्यगंधानुलेपनम् १४
दिव्यशुक्लांबरधरं दिव्यमालाविभूषितम्
सुरासुरेन्द्रयोगींद्रवंद्यमानपदांबुजम् १५
सर्वलक्षणयुक्तांग्या लब्धचामरहस्तया
भ्राजमानं सरस्वत्या प्रभयेव दिवाकरम् १६
तं दृष्ट्वा मुनयस्सर्वे प्रसन्नवदनेक्षणाः
शिरस्यंजलिमाधाय तुष्टुवुस्सुरपुंगवम् १७
मुनय ऊचुः
नमस्त्रिमूर्तये तुभ्यं सर्गस्थित्यंतहेतवे
पुरुषाय पुराणाय ब्रह्मणे परमात्मने १८
नमः प्रधानदेहाय प्रधानक्षोभकारिणे
त्रयोविंशतिभेदेन विकृतायाविकारिणे १९
नमो ब्रह्माण्डदेहाय ब्रह्मांडोदरवर्तिने
तत्र संसिद्धकार्याय संसिद्धकरणाय च २०
नमोस्तु सर्वलोकाय सर्वलोकविधायिने
सर्वात्मदेहसंयोग वियोगविधिहेतवे २१
त्वयैव निखिलं सृष्टं संहृतं पालितं जगत्
तथापि मायया नाथ न विद्मस्त्वां पितामह २२
सूत उवाच
एवं ब्रह्मा महाभागैर्महर्षिभिरभिष्टुतः
प्राह गंभीरया वाचा मुनीन् प्रह्लादयन्निव २३

ब्रह्मोवाच
ऋषयो हे महाभागा महासत्त्वा महौजसः
किमर्थं सहितास्सर्वे यूयमत्र समागताः २४
तमेवंवादिनं देवं ब्रह्माणं ब्रह्मवित्तमाः
वाग्भिर्विनयगर्भाभिस्सर्वे प्रांजलयोऽब्रुवन् २५
मुनय ऊचुः
भगवन्नंधकारेण महता वयमावृताः
खिन्ना विवदमानाश्च न पश्यामोऽत्र यत्परम् २६
त्वं हि सर्वजगद्धाता सर्वकारणकारणम्
त्वया ह्यविदितं नाथ नेह किंचन विद्यते २७
कः पुमान् सर्वसत्त्वेभ्यः पुराणः पुरुषः परः
विशुद्धः परिपूर्णश्च शाश्वतः परमेश्वरः २८
केनैव चित्रकृत्येन प्रथमं सृज्यते जगत्
तत्त्वं वद महाप्राज्ञ स्वसंदेहापनुत्तये २९
एवं पृष्टस्तदा ब्रह्मा विस्मयस्मेरवीक्षणः
देवानां दानवानां च मुनीनामपि सन्निधौ ३०
उत्थाय सुचिरं ध्यात्वा रुद्र इत्युद्धरन् गिरिम्
आनंदक्लिन्नसर्वांगः कृतांजलिरभाषत ३१
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
मुनिप्रस्ताववर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः २

अध्याय ३

ब्रहमोवाच
यतो वाचो निवर्तंते अप्राप्य मनसा सह
आनंदं यस्य वै विद्वान्न बिभेति कुतश्चन १

यस्मात्सर्वमिदं ब्रह्मविष्णुरुद्रेन्द्रपूर्वकम्
सह भूतेन्द्रियैः सर्वैः प्रथमं संप्रसूयते २
कारणानां च यो धाता ध्याता परमकारणम्
न संप्रसूयतेऽन्यस्मात्कुतश्चन कदाचन ३
सर्वैश्वर्येण संपन्नो नाम्ना सर्वेश्वरः स्वयम्
सर्वैर्मुमुक्षुभिर्ध्येयश्शंभुराकाशमध्यगः ४
योऽग्रे मां विदधे पुत्रं ज्ञानं च प्रहिणोति मे
तत्प्रसादान्मयालब्धं प्राजापत्यमिदं पदम् ५
ईशो वृक्ष इव स्तब्धो य एको दिवि तिष्ठति
येनेदमखिलं पूर्णं पुरुषेण महात्मना ६
एको बहूनां जंतूनां निष्क्रियाणां च सक्रियः
य एको बहुधा बीजं करोति स महेश्वरः ७
जीवैरेभिरिमाँल्लोकान्सर्वानीशो य ईशते १
य एको भागवान्रुद्रो न द्वितीयोऽस्ति कश्चन ८
सदा जनानां हृदये संनिविष्टोऽपि यः परैः
अलक्ष्यो लक्षयन्विश्वमधितिष्ठति सर्वदा ९
यस्तु कालात्प्रमुक्तानि कारणान्यखिलान्यपि
अनन्तशक्तिरेवैको भगवानधितिष्ठति १०
न यस्य दिवसो रात्रिर्न समानो न चाधिकः
स्वभाविकी पराशक्तिर्नित्या ज्ञानक्रिये अपि ११
यदिदं क्षरमव्यक्तं यदप्यमृतमक्षरम्
तावुभावक्षरात्मानावेको देवः स्वयं हरः १२
ईशते तदभिध्यानाद्योजनासत्त्वभावनः
भूयो ह्यस्य पशोरन्ते विश्वमाया निवर्त्तते १३
यस्मिन्न भासते विद्युन्न सूर्यो न च चन्द्रमाः

यस्य भासा विभातीदमित्येषा शाश्वती श्रुतिः १४
एको देवो महादेवो विज्ञेयस्तु महेश्वरः
न तस्य परमं किंचित्पदं समधिगम्यते १५
अयमादिरनाद्यन्तस्स्वभावादेव निर्मलः
स्वतन्त्रः परिपूर्णश्च स्वेच्छाधीनश्चराचरः १६
अप्राकृतवपुः श्रीमाँल्लक्ष्यलक्षणवर्जितः
अयं मुक्तो मोचकश्च ह्यकालः कालचोदकः १७
सर्वोपरिकृतावासस्सर्वावासश्च सर्ववित्
षड्विधाध्वमयस्यास्य सर्वस्य जगतः पतिः १८
उत्तरोत्तरभूतानामुत्तरश्च निरुत्तरः
अनन्तानन्तसन्दोहमकरंदमधुव्रतः १९
अखंडजगदंडानां पिंडीकरणपंडितः
औदार्यवीर्यगांभीर्य्यमाधुर्य्यमकरालयः २०
नैवास्य सदृशं वस्तु नाधिकं चापि किंचन
अतुलः सर्वभूतानां राजराजश्च तिष्ठति २१
अनेन चित्रकृत्येन प्रथमं सृज्यते जगत्
अंतकाले पुनश्चेदं तस्मिन्प्रलयमेष्यते २२
अस्य भूतानि वश्यानि अयं सर्वनियोजकः
अयं तु परया भक्त्या दृश्यते नान्यथा क्वचित् २३
व्रतानि सर्वदानानि तपांसि नियमास्तथा
कथितानि पुरा सद्भिर्भावार्थं नात्र संशयः २४
हरिश्चाहं च रुद्रश्च तथान्ये च सुरासुराः
तपोभिरुग्रैरद्यापि तस्य दर्शनकांक्षिणः २५
अदृश्यः पतितैर्मूढैर्दुर्जनैरपि कुत्सितैः
भक्तैरन्तर्बहिश्चापि पूज्यः संभाष्य एव च २६

तदिदं त्रिविधं रूपं स्थूलं सूक्ष्मं ततः परम्
अस्मदाद्यमरैर्दृश्यं स्थूलं सूक्ष्मं तु योगिभिः २७
ततः परं तु यन्नित्यं ज्ञानमानंदमव्ययम्
तन्निष्ठैस्तत्परैर्भक्तैर्दृश्यं तद्व्रतमाश्रितैः २८
बहुनात्र किमुक्तेन गुह्याद्गुह्यतरं परम्
शिवे भक्तिर्न सन्देहस्तया युक्तो विमुच्यते २९
प्रसादादेव सा भक्तिः प्रसादो भक्तिसंभवः
यथा चांकुरतो बीजं बीजतो वा यथांकुरः ३०
प्रसादपूर्विका एव पशोस्सर्वत्र सिद्धयः
स एव साधनैरन्ते सर्वैरपि च साध्यते ३१
प्रसादसाधनं धर्मस्स च वेदेन दर्शितः
तदभ्यासवशात्साम्यं पूर्वयोः पुण्यपापयोः ३२
साम्यात्प्रसादसंपर्को धर्मस्यातिशयस्ततः
धर्मातिशयमासाद्य पशोः पापपरिक्षयः ३३
एवं प्रक्षीणपापस्य बहुभिर्जन्मभिः क्रमात्
सांबे सर्वेश्वरे भक्तिर्ज्ञानपूर्वा प्रजायते ३४
भावानुगुणमीशस्य प्रसादो व्यतिरिच्यते
प्रसादात्कर्मसंत्यागः फलतो न स्वरूपतः ३५
तस्मात्कर्मफलत्यागाच्छिवधर्मान्वयः शुभः
स च गुर्वनपेक्षश्च तदपेक्ष इति द्विधा ३६
तत्रानपेक्षात्सापेक्षो मुख्यः शतगुणाधिकः
शिवधर्मान्वयस्यास्य शिवज्ञानसमन्वयः ३७
ज्ञानान्वयवशात्पुंसः संसारे दोषदर्शनम्
ततो विषयवैराग्यं वैराग्याद्भावसाधनम् ३८
भावसिद्ध्युपपन्नस्य ध्याने निष्ठा न कर्मणि

ज्ञानध्यानाभियुक्तस्य पुंसो योगः प्रवर्तते ३९
योगेन तु परा भक्तिः प्रसादस्तदनंतरम्
प्रसादान्मुच्यते जंतुर्मुक्तः शिवसमो भवेत् ४०
अनुग्रहप्रकारस्य क्रमोऽयमविवक्षितः
यादृशी योग्यता पुंसस्तस्य तादृगनुग्रहः ४१
गर्भस्थो मुच्यते कश्चिज्जायमानस्तथापरः
बालो वा तरुणो वाथ वृद्धो वा मुच्यते परः ४२
तिर्यग्योनिगतः कश्चिन्मुच्यते नारकोऽपरः
अपरस्तु पदं प्राप्तो मुच्यते स्वपदक्षये ४३
कश्चित्क्षीणपदो भूत्वा पुनरावर्त्य मुच्यते
कश्चिदध्वगतस्तस्मिन् स्थित्वास्थित्वा विमुच्यते ४४
तस्मान्नैकप्रकारेण नराणां मुक्तिरिष्यते
ज्ञानभावानुरूपेण प्रसादेनैव निर्वृतिः ४५
तस्मादस्य प्रसादार्थं वाग्मनोदोषवर्जिताः
ध्यायंतश्शिवमेवैकं सदारतनयाग्नयः ४६
तन्निष्ठास्तत्परास्सर्वे तद्युक्तास्तदुपाश्रयाः
सर्वक्रियाः प्रकुर्वाणास्तमेव मनसागताः ४७
दीर्घसूत्रसमारब्धं दिव्यवर्षसहस्रकम्
सत्रांते मंत्रयोगेन वायुस्तत्र गमिष्यति ४८
स एव भवतः श्रेयः सोपायं कथयिष्यति
ततो वाराणसी पुण्या पुरी परमशोभना ४९
गंतव्या यत्र विश्वेशो देव्या सह पिनाकधृक्
सदा विहरति श्रीमान् भक्तानुग्रहकारणात् ५०
तत्राश्चर्यं महद्दृष्ट्वा मत्समीपं गमिष्यथ
ततो वः कथयिष्यामि मोक्षोपाय द्विजोत्तमाः ५१

येनैकजन्मना मुक्तिर्युष्मत्करतले स्थिता
अनेकजन्मसंसारबंधनिर्मोक्षकारिणी ५२
एतन्मनोमयं चक्रं मया सृष्टं विसृज्यते
यत्रास्य शीर्यते नेमिः स देशस्तपसश्शुभः ५३
इत्युक्त्वा सूर्यसंकाशं चक्रं दृष्ट्वा मनोमयम्
प्रणिपत्य महादेवं विससर्ज पितामहः ५४
तेऽपि हृष्टतरा विप्राः प्रणम्य जगतां प्रभुम्
प्रययुस्तस्य चक्रस्य यत्र नेमिरशीर्यत ५५
चक्रं तदपि संक्षिप्तं श्लक्ष्णं चारुशिलातले
विमलस्वादुपानीये निजपात वने क्वचित् ५६
तद्वनं तेन विख्यातं नैमिषं मुनिपूजितम्
अनेकयक्षगंधर्वविद्याधरसमाकुलम् ५७
अष्टादश समुद्रस्य द्वीपानश्नन्पुरूरवाः
विलासवशमुर्वश्या यातो दैवेन चोदितः ५८
अक्रमेण हरन्मोहाद्यज्ञवाटं हिरण्मयम्
मुनिभिर्यत्र संक्रुद्धैः कुशवज्रैर्निपातितः ५९
विश्वं सिसृक्षमाणा वै यत्र विश्वसृजः पुरा
सत्रमारेभिरे दिव्यं ब्रह्मज्ञा गार्हपत्यगाः ६०
ऋषिभिर्यत्र विद्वद्भिः शब्दार्थन्यायकोविदैः
शक्तिप्रज्ञाक्रियायोगैर्विधिरासीदनुष्ठितः ६१
यत्र वेदविदो नित्यं वेदवादबहिष्कृतान्
वादजल्पबलैर्घ्नंति वचोभिरतिवादिनः ६२
स्फटिकमयमहीभृत्पादजाभ्यश्शिलाभ्यः
प्रसरदमृतकल्पस्स्वच्छपानीयरम्यम्
अतिरसफलवृक्षप्रायमव्यालसत्त्वं तपस उचितमासीन्नैमिषं

तन्मुनीनाम् ६३
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
नैमिषोपाख्यानं नाम तृतीयोऽध्यायः ३

अध्याय ४

सूत उवाच
तस्मिन्देशे महाभागा मुनयश्शंसितव्रताः
अर्चयंतो महादेवं सत्रमारेभिरे तदा १
तच्च सत्रं प्रववृते सर्वाश्चर्यं महर्षिणाम् १
विश्वं सिसृक्षमाणानां पुरा विश्वसृजामिव २
अथ काले गते सत्रे समाप्ते भूरिदक्षिणे
पितामहनियोगेन वायुस्तत्रागमत्स्वयम् ३
शिष्यस्स्वयंभुवो देवस्सर्वप्रत्यक्षदृग्वशी
आज्ञायां मरुतो यस्य संस्थितास्सप्तसप्तकाः ४
प्रेरयञ्छश्वदंगानि प्राणाद्याभिः स्ववृत्तिभिः
सर्वभूतशरीराणां कुरुते यश्च धारणम् ५
अणिमादिभिरष्टाभिरैश्वर्यैश्च समन्वितः
तिर्यक्कालादिभिर्मेध्यैर्भुवनानि बिभर्ति यः ६
आकाशयोनिर्द्विगुणः स्पर्शशब्दसमन्वयात्
तेजसां प्रकृतिश्चेति यमाहुस्तत्त्वचिंतकाः ७
तमाश्रमगतं दृष्ट्वा मुनयो दीर्घसत्रिणः
पितामहवचः स्मृत्वा प्रहर्षमतुलं ययुः ८
अभ्युत्थाय ततस्सर्वे प्रणम्यांबरसंभवम्
चामीकरमयं तस्मै विष्टरं समकल्पयन् ९
सोपि तत्र समासीनो मुनिभिस्सम्यगर्चितः

प्रतिनंद्य च तान् सर्वान् पप्रच्छ कुशलं ततः १०
वायुरुवाच
अत्र वः कुशलं विप्राः कच्चिद्वृत्ते महाक्रतौ
कच्चिद्यज्ञहनो दैत्या न बाधेरन्सुरद्विषः ११
प्रायश्चित्तं दुरिष्टं वा न कच्चित्समजायत
स्तोत्रशस्त्रगृहैर्देवान् पितृ-न् पित्र्यैश्च कर्मभिः १२
कच्चिदभ्यर्च्य युष्माभिर्विधिरासीत्स्वनुष्ठितः
निवृत्ते च महासत्रे पश्चात्किं वश्चिकीर्षितम् १३
इत्युक्ता मुनयः सर्वे वायुना शिवभाविना
प्रहृष्टमनसः पूताः प्रत्यूचुर्विनयान्विताः १४
मुनय ऊचुः
अद्य नः कुशलं सर्वमद्य साधु भवेत्तपः
अस्मच्छ्रेयोभिवृद्ध्यर्थं भवानत्रागतो यतः १५
शृणु चेदं पुरावृत्तं तमसाक्रांतमानसैः
उपासितः पुरास्माभिर्विज्ञानार्थं प्रजापतिः १६
सोप्यस्माननुगृह्याह शरण्यश्शरणागतान्
सर्वस्मादधिको रुद्रो विप्राः परमकारणम् १७
तमप्रतर्क्यं याथात्म्यं भक्तिमानेव पश्यति
भक्तिश्चास्य प्रसादेन प्रसादादेव निर्वृतिः १८
तस्मादस्य प्रसादार्थं नैमिषे सत्रयोगतः
यजध्वं दीर्घसत्रेण रुद्रं परमकारणम् १९
तत्प्रसादेन सत्रांते वायुस्तत्रागमिष्यति
तन्मुखाज्ज्ञानलाभो वस्तत्र श्रेयो भविष्यति २०
इत्यादिश्य वयं सर्वे प्रेषिता परमेष्ठिना
अस्मिन्देशे महाभाग तवागमनकांक्षिणः २१

दीर्घसत्रं समासीना दिव्यवर्षसहस्रकम्
अतस्तवागमादन्यत्प्रार्थ्यं नो नास्ति किंचन २२
इत्याकर्ण्य पुरावृत्तमृषीणां दीर्घसत्रिणाम्
वायुः प्रीतमना भूत्वा तत्रासीन्मुनिसंवृतः २३
ततस्तैर्मुनिभिः पृष्टस्तेषां भावविवृद्धये
सर्गादि शार्वमैश्वर्यं समासाद वदद्विभुः २४
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
वायुसमागमो नाम चतुर्थोऽध्यायः ४

अध्याय ५

सूत उवाच
तत्र पूर्वं महाभागा नैमिषारण्यवासिनः
प्रणिपत्य यथान्यायं पप्रच्छुः पवनं प्रभुम् १
नैमिषीया ऊचुः
भवान् कथमनुप्राप्तो ज्ञानमीश्वरगोचरम्
कथं च शिवभावस्ते ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः २
वायुरुवाच
एकोनविंशतिः कल्पो विज्ञेयः श्वेतलोहितः
तस्मिन्कल्पे चतुर्वक्त्रस्स्रष्टुकामोऽतपत्तपः ३
तपसा तेन तीव्रेण तुष्टस्तस्य पिता स्वयम्
दिव्यं कौमारमास्थाय रूपं रूपवतां वरः ४
श्वेतो नाम मुनिर्भूत्वा दिव्यां वाचमुदीरयन्
दर्शनं प्रददौ तस्मै देवदेवो महेश्वरः ५
तं दृष्ट्वा पितरं ब्रह्मा ब्रह्मणोऽधिपतिं पतिम्
प्रणम्य परमज्ञानं गायत्र्या सह लब्धवान् ६

ततस्स लब्धविज्ञानो विश्वकर्मा चतुर्मुखः
असृजत्सर्वभूतानि स्थावराणि चराणि च ७
यतश्श्रुत्वामृतं लब्धं ब्रह्मणा परमेश्वरात्
ततस्तद्वदनादेव मया लब्धं तपोबलात् ८
मुनय ऊचुः
किं तज्ज्ञानं त्वया लब्धं तथ्यात्तथ्यंतरं शुभम्
यत्र कृत्वा परां निष्ठां पुरुषस्सुखमृच्छति ९
वयुरुवाच
पशुपाशपतिज्ञानं यल्लब्धं तु मया पुरा
तत्र निष्ठा परा कार्या पुरुषेण सुखार्थिना १०
अज्ञानप्रभवं दुःखं ज्ञानेनैव निवर्त्तते
ज्ञानं वस्तुपरिच्छेदो वस्तु च द्विविधं स्मृतम् ११
अजडं च जडं चैव नियंतृ च तयोरपि
पशुः पाशः पतिश्चेति कथ्यते तत्त्रयं क्रमात् १२
अक्षरं च क्षरं चैव क्षराक्षरपरं तथा
तदेतत्त्रितयं भूम्ना कथ्यते तत्त्ववेदिभिः १३
अक्षरं पशुरित्युक्तः क्षरं पाश उदाहृतः
क्षराक्षरपरं यत्तत्पतिरित्यभिधीयते १४
मुनय ऊचुः
किं तदक्षरमित्युक्तं किं च क्षरमुदाहृतम्
तयोश्च परमं किं वा तदेतद् ब्रूहि मारुत १५
वायुरुवाच
प्रकृतिः क्षरमित्युक्तं पुरुषोऽक्षर उच्यते
ताविमौ प्रेरयत्यन्यस्स परा परमेश्वरः १६
मुनय ऊचुः

कैषा प्रकृतिरित्युक्ता क एष पुरुषो मतः
अनयोः केन सम्बन्धः कोयं प्रेरक ईश्वरः १७
वायुरुवाच
माया प्रकृतिरुद्दिष्टा पुरुषो मायया वृतः
संबन्धो मूलकर्मभ्यां शिवः प्रेरक ईश्वरः १८
मुनय ऊचुः
केयं माया समाख्याता किंरूपो मायया वृतः
मूलं कीदृक् कुतो वास्य किं शिवत्वं कुतश्शिवः १९
वायुरुवाच
माया माहेश्वरी शक्तिश्चिद्रूपो मायया वृतः
मलश्चिच्छादको नैजो विशुद्धिश्शिवता स्वतः २०
मुनय ऊचुः
आवृणोति कथं माया व्यापिनं केन हेतुना
किमर्थं चावृतिः पुंसः केन वा विनिवर्तते २१
वायुरुवाच
आवृतिर्व्यपिनोऽपि स्याद्व्यापि यस्मात्कलाद्यपि
हेतुः कर्मैव भोगार्थं निवर्तेत मलक्षयात् २२
मुनय ऊचुः
कलादि कथ्यते किं तत्कर्म वा किमुदाहृतम्
तत्किमादि किमन्तं वा किं फलं वा किमाश्रयम् २३
कस्य भोगेन किं भोग्यं किं वा तद्भोगसाधनम्
मलक्षयस्य को हेतुः कीदृक् क्षीणमलः पुमान् २४
वायुरुवाच
कला विद्या च रागश्च कालो नियतिरेव च
कलादयस्समाख्याता यो भोक्ता पुरुषो भवेत् २५

पुण्यपापात्मकं कर्म सुखदुःखफलं तु यत्
अनादिमलभोगान्तमज्ञानात्मसमाश्रयम् २६
भोगः कर्मविनाशाय भोगमव्यक्तमुच्यते
बाह्यांतःकरणद्वारं शरीरं भोगसाधनम् २७
भावातिशयलब्धेन प्रसादेन मलक्षयः
क्षीणे चात्ममले तस्मिन् पुमाञ्छिवसमो भवेत् २८
मुनय ऊचुः
कलादिपंचतत्त्वानां किं कर्म पृथगुच्यते
भोक्तेति पुरुषश्चेति येनात्मा व्यपदिश्यते २९
किमात्मकं तदव्यक्तं केनाकारेण भुज्यते
किं तस्य शरणं भुक्तौ शरीरं च किमुच्यते ३०
वायुरुवाच
दिक्क्रियाव्यंजका विद्या कालो रागः प्रवर्तकः
कालोऽवच्छेदकस्तत्र नियतिस्तु नियामिका ३१
अव्यक्तं कारणं यत्तत्त्रिगुणं प्रभवाप्ययम्
प्रधानं प्रकृतिश्चेति यदाहुस्तत्त्वचिंतकाः ३२
कलातस्तदभिव्यक्तमनभिव्यक्तलक्षणम्
सुखदुःखविमोहात्मा भुज्यते गुणवांस्त्रिधा ३३
सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसंभवाः
प्रकृतौ सूक्ष्मरूपेण तिले तैलमिव स्थिताः ३४
सुखं च सुखहेतुश्च समासात्सात्त्विकं स्मृतम्
राजसं तद्विपर्यासात्स्तंभमोहौ तु तामसौ ३५
सात्त्विक्यूर्ध्वगतिः प्रोक्ता तामसी स्यादधोगतिः
मध्यमा तु गतिर्या सा राजसी परिपठ्यते ३६
तन्मात्रापञ्चकं चैव भूतपंचकमेव च

ज्ञानेंद्रियाणि पंचैक्यं पंच कर्मेन्द्रियाणि च ३७
प्रधानबुद्ध्यहंकारमनांसि च चतुष्टयम्
समासादेवमव्यक्तं सविकारमुदाहृतम् ३८
तत्कारणदशापन्नमव्यक्तमिति कथ्यते
व्यक्तं कार्यदशापन्नं शरीरादिघटादिवत् ३९
यथा घटादिकं कार्यं मृदादेर्नातिभिद्यते
शरीरादि तथा व्यक्तमव्यक्तान्नातिभिद्यते ४०
तस्मादव्यक्तमेवैक्यकारणं करणानि च
शरीरं च तदाधारं तद्भोग्यं चापि नेतरत् ४१
मुनय ऊचुः
बुद्धीन्द्रियशरीरेभ्यो व्यतिरेकस्य कस्यचित्
आत्मशब्दाभिधेयस्य वस्तुतोऽपि कुतः स्थितिः ४२
वायुरुवाच
बुद्धीन्द्रियशरीरेभ्यो व्यतिरेको विभोर्ध्रुवम्
अस्त्येव कश्चिदात्मेति हेतुस्तत्र सुदुर्गमः ४३
बुद्धीन्द्रियशरीराणां नात्मता सद्भिरिष्यते
स्मृतेरनियतज्ञानादयावद्देहवेदनात् ४४
अतः स्मर्तानुभूतानामशेषज्ञेयगोचरः
अन्तर्य्यामीति वेदेषु वेदांतेषु च गीयते ४५
सर्वं तत्र स सर्वत्र व्याप्य तिष्ठति शाश्वतः
तथापि क्वापि केनापि व्यक्तमेष न दृश्यते ४६
नैवायं चक्षुषा ग्राह्यो नापरैरिन्द्रियैरपि
मनसैव प्रदीप्तेन महानात्मावसीयते १ ४७
न च स्त्री न पुमानेष नैव चापि नपुंसकः
नैवोर्द्ध्वं नापि तिर्यक् नाधस्तान्न कुतश्चन ४८

अशरीरं शरीरेषु चलेषु स्थाणुमव्ययम्
सदा पश्यति तं धीरो नरः प्रत्यवमर्शनात् ४६
किमत्र बहुनोक्तेन पुरुषो देहतः पृथक्
अपृथग्ये तु पश्यंति ह्यसम्यक्तेषु दर्शनम् ५०
यच्छरीरमिदं प्रोक्तं पुरुषस्य ततः परम्
अशुद्धमवशं दुःखमध्रुवं न च विद्यते ५१
विपदां वीजभूतेन पुरुषस्तेन संयुतः
सुखी दुःखी च मूढश्च भवति स्वेन कर्मणा ५२
अद्भिराप्लवितं क्षेत्रं जनयत्यंकुरं यथा
आज्ञानात्प्लावितं कर्म देहं जनयते तथा ५३
अत्यंतमसुखावासास्स्मृताश्चैकांतमृत्यवः
अनागता अतीताश्च तनवोऽस्य सहस्रशः ५४
आगत्यागत्य शीर्णेषु शरीरेषु शरीरिणः
अत्यंतवसतिः क्वापि न केनापि च लभ्यते ५५
छादितश्च वियुक्तश्च शरीरैरेषु लक्ष्यते
चंद्रबिंबवदाकाशे तरलैरभ्रसंचयैः ५६
अनेकदेहभेदेन भिन्ना वृत्तिरिहात्मनः
अष्टापदपरिक्षेपे ह्यक्षमुद्रेव लक्ष्यते ५७
नैवास्य भविता कश्चिन्नासौ भवति कस्यचित्
पथि संगम एवायं दारैः पुत्रैश्च बंधुभिः ५८
यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महोदधौ
समेत्य च व्यपेयातां तद्वद्भूतसमागमः ५९
स पश्यति शरीरं तच्छरीरं तन्न पश्यति
तौ पश्यति परः कश्चित्तावुभौ तं न पश्यतः ६०
ब्रह्माद्याः स्थावरांतश्च पशवः परिकीर्तिताः

पशूनामेव सर्वेषां प्रोक्तमेतन्निदर्शनम् ६१
स एष बध्यते पाशैः सुखदुःखाशनः पशुः
लीलासाधनभूतो य ईश्वरस्येति सूरयः ६२
अज्ञो जंतुरनीशोऽयमात्मनस्सुखदुःखयोः
ईश्वरप्रेरितो गच्छेत्स्वर्गं वा श्वभ्रमेव वा ६३
सूत उवाच
इत्याकर्ण्यानिलवचो मुनयः प्रीतमानसाः
प्रोचुः प्रणम्य तं वायुं शैवागमविचक्षणम् ६४
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
शिवतत्त्वज्ञानवर्णनं नाम पंचमोऽध्यायः ५

अध्याय ६

मुनय ऊचुः
योऽयं पशुरिति प्रोक्तो यश्च पाश उदाहृतः
अभ्यां विलक्षणः कश्चित्कोयमस्ति तयोः पतिः १
वायुरुवाच
अस्ति कश्चिदपर्यंतरमणीयगुणाश्रयः
पतिर्विश्वस्य निर्माता पशुपाशविमोचनः २
अभावे तस्य विश्वस्य सृष्टिरेषा कथं भवेत्
अचेतनत्वादज्ञानादनयोः पशुपाशयोः ३
प्रधानपरमाण्वादि यावत्किंचिदचेतनम्
तत्कर्तृकं स्वयं दृष्टं बुद्धिमत्कारणं विना ४
जगच्च कर्तृसापेक्षं कार्यं सावयवं यतः
तस्मात्कार्यस्य कर्तृत्वं पत्युर्न पशुपाशयोः ५
पशोरपि च कर्तृत्वं पत्युः प्रेरणपूर्वकम्

अयथाकरणज्ञानमंधस्य गमनं यथा ६
आत्मानं च पृथग्मत्वा प्रेरितारं ततः पृथक्
असौ जुष्टस्ततस्तेन ह्यमृतत्वाय कल्पते ७
पशोः पाशस्य पत्युश्च तत्त्वतोऽस्ति पदं परम्
ब्रह्मवित्तद्विदित्वैव योनिमुक्तो भविष्यति ८
संयुक्तमेतद्द्वितयं क्षरमक्षरमेव च
व्यक्ताव्यक्तं बिभर्तीशो विश्वं विश्वविमोचकः ९
भोक्ता भोग्यं प्रेरयिता मंतव्यं त्रिविधं स्मृतम्
नातः परं विजानद्भिर्वेदितव्यं हि किंचनः १०
तिलेषु वा यथा तैलं दध्नि वा सर्पिरर्पितम्
यथापः स्रोतसि व्याप्ता यथारण्यां हुताशनः ११
एवमेव महात्मानमात्मन्यात्मविलक्षणम्
सत्येन तपसा चैव नित्ययुक्तोऽनुपश्यति १२
य एको जालवानीश ईशानीभिस्स्वशक्तिभिः
सर्वांल्लोकानिमान् कृत्वा एक एव स ईशते १ १३
एक एव तदा रुद्रो न द्वितीयोऽस्ति कश्चन
संसृज्य विश्वभुवनं गोप्ता ते संचुकोच यः १४
विश्वतश्चक्षुरेवायमुतायं विश्वतोमुखः
तथैव विश्वतोबाहुविश्वतः पादसंयुतः १५
द्यावाभूमी च जनयन् देव एको महेश्वरः
स एव सर्वदेवानां प्रभवश्चोद्भवस्तथा १६
हिरण्यगर्भं देवानां प्रथमं जनयेदयम्
विश्वस्मादधिको रुद्रो महर्षिरिति हि श्रुतिः १७
वेदाहमेतं पुरुषं महांतममृतं ध्रुवम्
आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्संस्थितं प्रभुम् १८

अस्मान्नास्ति परं किंचिदपरं परमात्मनः
नाणीयोऽस्ति न च ज्यायस्तेन पूर्णमिदं जगत् १९
सर्वाननशिरोग्रीवः सर्वभूतगुहाशयः
सर्वव्यापी च भगवांस्तस्मात्सर्वगतश्शिवः २०
सर्वतः पाणिपादोऽयं सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः
सर्वतः श्रुतिमाँल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति २१
सर्वेन्द्रियगुणाभासस्सर्वेन्द्रियविवर्जितः
सर्वस्य प्रभुरीशानः सर्वस्य शरणं सुहृत् २२
अचक्षुरपि यः पश्यत्यकर्णोऽपि शृणोति यः
सर्वं वेत्ति न वेत्तास्य तमाहुः पुरुषं परम् २३
अणोरणीयान्महतो महीयानयमव्ययः
गुहायां निहितश्चापि जंतोरस्य महेश्वरः २४
तमक्रतुं क्रतुप्रायं महिमातिशयान्वितम्
धातुः प्रसादादीशानं वीतशोकः प्रपश्यति २५
वेदाहमेनमजरं पुराणं सर्वगं विभुम्
निरोधं जन्मनो यस्य वदंति ब्रह्मवादिनः २६
एकोऽपि त्रीनिमाँल्लोकान् बहुधा शक्तियोगतः
विदधाति विचेत्यंते १ विश्वमादौ महेश्वरः २७
विश्वधात्रीत्यजाख्या च शैवी चित्रा कृतिः परा
तामजां लोहितां शुक्लां कृष्णामेकां त्वजः प्रजाम् २८
जनित्रीमनुशेतेऽन्योजुषमाणस्स्वरूपिणीम्
तामेवाजामजोऽन्यस्तु भक्तभोगा जहाति च २९
द्वौ सुपर्णौ च सयुजौ समानं वृक्षमास्थितौ
एकोऽत्ति पिप्पलं स्वादु परोऽनश्नन् प्रपश्यति ३०
वृक्षेस्मिन् पुरुषो मग्नो गुह्यमानश्च शोचति

जुष्टमन्यं यदा पश्येदीशं परमकारणम् ३१
तदास्य महिमानं च वीतशोकस्सुखी भवेत्
छंदांसि यज्ञाः ऋतवो यद्भूतं भव्यमेव च ३२
मायी विश्वं सृजत्यस्मिन्निविष्टो मायया परः
मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम् ३३
तस्यास्त्ववयवैरेव व्याप्तं सर्वमिदं जगत्
सूक्ष्मातिसूक्ष्ममीशानं कललस्यापि मध्यतः ३४
स्रष्टारमपि विश्वस्य वेष्टितारं च तस्य तु
शिवमेवेश्वरं ज्ञात्वा शांतिमत्यंतमृच्छति ३५
स एव कालो गोप्ता च विश्वस्याधिपतिः प्रभुः
तं विश्वाधिपतिं ज्ञात्वा मृत्युपाशात्प्रमुच्यते ३६
घृतात्परं मंडमिव सूक्ष्मं ज्ञात्वा स्थितं प्रभुम्
सर्वभूतेषु गूढं च सर्वपापैः प्रमुच्यते ३७
एष एव परो देवो विश्वकर्मा महेश्वरः
हृदये संनिविष्टं तं ज्ञात्वैवामृतमश्नुते ३८
यदा समस्तं न दिवा न रात्रिर्न सदप्यसत्
केवलश्शिव एवैको यतः प्रज्ञा पुरातनी ३९
नैनमूर्द्ध्वं न तिर्यक्च न मध्यं पर्यजिग्रहत्
न तस्य प्रतिमा चास्ति यस्य नाम महद्यशः ४०
अजातमिममेवैके बुद्ध्वा जन्मनि भीरवः
रुद्रस्यास्य प्रपद्यंते रक्षार्थं दक्षिणं सुखम् ४१
द्वे अक्षरे ब्रह्मपरे त्वनंते समुदाहृते
विद्याविद्ये समाख्याते निहिते यत्र गूढवत् ४२
क्षरं त्वविद्या ह्यमृतं विद्येति परिगीयते
ते उभे ईशते यस्तु सोऽन्यः खलु महेश्वरः ४३

एकैकं बहुधा जालं विकुर्वन्नेकवच्च यः
सर्वाधिपत्यं कुरुते सृष्ट्वा सर्वान् प्रतापवान् ४४
दिश ऊर्ध्वमधस्तिर्यक् भासयन् भ्राजते स्वयम्
यो निःस्वभावादप्येको वरेण्यस्त्वधितिष्ठति ४५
स्वभाववाचकान् सर्वान् वाच्यांश्च परिणामयन्
गुणांश्च भोग्यभोक्तृत्वे तद्विश्वमधितिष्ठति ४६
ते वै गुह्योपणिषदि गूढं ब्रह्म परात्परम्
ब्रह्मयोनिं जगत्पूर्वं विदुर्देवा महर्षयः ४७
भावग्राह्यमनीहाख्यं भावाभावकरं शिवम्
कलासर्गकरं देवं ये विदुस्ते जहुस्तनुम् ४८
स्वभावमेके मन्यंते कालमेके विमोहिताः
देवस्य महिमा ह्येष येनेदं भ्राम्यते जगत् ४९
येनेदमावृतं नित्यं कालकालात्मना यतः
तेनेरितमिदं कर्म भूतैः सह विवर्तते ५०
तत्कर्म भूयशः कृत्वा विनिवृत्य च भूयशः
तत्त्वस्य सह तत्त्वेन योगं चापि समेत्य वै ५१
अष्टाभिश्च त्रिभिश्चैवं द्वाभ्यां चैकेन वा पुनः
कालेनात्मगुणैश्चापि कृत्स्नमेव जगत् स्वयम् ५२
गुणैरारभ्य कर्माणि स्वभावादीनि योजयेत्
तेषामभावे नाशः स्यात्कृतस्यापि च कर्मणः ५३
कर्मक्षये पुनश्चान्यत्ततो याति स तत्त्वतः
स एवादिस्स्वयं योगनिमित्तं भोक्तृभोगयोः ५४
परस्त्रिकालादकलस्स एव परमेश्वरः
सर्ववित् त्रिगुणाधीशो ब्रह्मसाक्षात्परात्परः ५५
तं विश्वरूपमभवं भवमीड्यं प्रजापतिम्

देवदेवं जगत्पूज्यं स्वचित्तस्थमुपास्महे ५६
कालादिभिः परो यस्मात्प्रपंचः परिवर्तते
धर्मावहं पापनुदं भोगेशं विश्वधाम च ५७
तमीश्वराणां परमं महेश्वरं तं देवतानां परमं च दैवतम्
पतिं पतीनां परमं परस्ताद्विदाम देवं भुवनेश्वरेश्वरम् ५८
न तस्य विद्येत कार्यं कारणं च न विद्यते
न तत्समोऽधिकश्चापि क्वचिज्जगति दृश्यते ५९
परास्य विविधा शक्तिः श्रुतौ स्वाभाविकी श्रुता
ज्ञानं बलं क्रिया चैव याभ्यो विश्वमिदं कृतम् ६०
तस्यास्ति पतिः कश्चिन्नैव लिंगं न चेशिता
कारणं कारणानां च स तेषामधिपाधिपः ६१
न चास्य जनिता कश्चिन्न च जन्म कुतश्चन
न जन्महेतवस्तद्वन्मलमायादिसंज्ञकाः ६२
स एकस्सर्वभूतेषु गूढो व्याप्तश्च विश्वतः
सर्वभूतांतरात्मा च धर्माध्यक्षस्स कथ्यते ६३
सर्वभूताधिवासश्च साक्षी चेता च निर्गुणः
एको वशी निष्क्रियाणां बहूनां विवशात्मनाम् ६४
नित्यानामप्यसौ नित्यश्चेतनानां च चेतनः
एको बहूनां चाकामः कामानीशः प्रयच्छति ६५
सांख्ययोगाधिगम्यं यत्कारणं जगतां पतिम्
ज्ञात्वा देवं पशुः पाशैस्सर्वैरेव विमुच्यते ६६
विश्वकृद्विश्ववित्स्वात्मयोनिज्ञः कालकृद्गुणी
प्रधानः क्षेत्रज्ञपतिर्गुणेशः पाशमोचकः ६७
ब्रह्माणं विदधे पूर्वं वेदांश्चोपादिशत्स्वयम्
यो देवस्तमहं बुद्ध्वास्वात्मबुद्धिप्रसादतः ६८

मुमुक्षुरस्मात्संसारात्प्रपद्ये शरणं शिवम्
निष्फलं निष्क्रियं शांतं निरवद्यं निरंजनम् ६९
अमृतस्य परं सेतुं दग्धेंधनमिवानिलम्
यदा चर्मवदाकाशं वेष्टयिष्यंति मानवाः ७०
तदा शिवमविज्ञाय दुःखस्यांतो भविष्यति ७१
तपःप्रभावाद्देवस्य प्रसादाच्च महर्षयः
अत्याश्रमोचितज्ञानं पवित्रं पापनाशनम् ७२
वेदांते परमं गुह्यं पुराकल्पप्रचोदितम्
ब्रह्मणो वदनाल्लब्धं मयेदं भाग्यगौरवात् ७३
नाप्रशांताय दातव्यमेतज्ज्ञानमनुत्तमम्
न पुत्रायाशुवृत्ताय नाशिष्याय च सर्वथा ७४
यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ
तस्यैते कथिताह्यर्थाः प्रकाशंते महात्मनः ७५
अतश्च संक्षेपमिदं शृणुध्वं शिवः परस्तात्प्रकृतेश्च पुंसः
स सर्गकाले च करोति सर्वं संहारकाले पुनराददाति ७६
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
शिवतत्त्ववर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ६

अध्याय ७

मुनय ऊचुः
कालादुत्पद्यते सर्वं कालदेव विपद्यते
न कालनिरपेक्षं हि क्वचित्किंचन विद्यते १
यदास्यांतर्गतं विश्वं शश्वत्संसारमण्डलम्
सर्गसंहृतिमुद्राभ्यां चक्रवत्परिवर्तते २
ब्रह्मा हरिश्च रुद्रश्च तथान्ये च सुरासुराः

यत्कृतां नियतिं प्राप्य प्रभवो नातिवर्तितुम् ३
भूतभव्यभविष्याद्यैर्विभज्य जरयन् प्रजाः
अतिप्रभुरिति स्वैरं वर्ततेऽतिभयंकरः ४
क एष भगवान् कालः कस्य वा वशवर्त्ययम्
क एवास्य वशे न स्यात्कथयैतद्विचक्षण ५
वायुरुवाच
कालकाष्ठानिमेषादिकलाकलितविग्रहम्
कालात्मेति समाख्यातं तेजो माहेश्वरं परम् ६
यदलंघ्यमशेषस्य स्थावरस्य चरस्य च
नियोगरूपमीशस्य बलं विश्वनियामकम् ७
तस्यांशांशमयी मुक्तिः कालात्मनि महात्मनि
ततो निष्क्रम्य संक्रांता विसृष्टाग्रेरिवायसी ८
तस्मात्कालवशे विश्वं न स विश्ववशे स्थितः
शिवस्य तु वशे कालो न कालस्य वशे शिवः ९
यतोऽप्रतिहतं शार्वं तेजः काले प्रतिष्ठितम्
महती तेन कालस्य मर्यादा हि दुरत्यया १०
कालं प्रज्ञाविशेषेण कोऽतिवर्तितुमर्हति
कालेन तु कृतं कर्म न कश्चिदतिवर्तते ११
एकच्छत्रां महीं कृत्स्नां ये पराक्रम्य शासति
तेऽपि नैवातिवर्तंते कालवेलामिवाब्धयः १२
ये निगृह्येंद्रियग्रामं जयंति सकलं जगत्
न जयंत्यपि ते कालं कालो जयति तानपि १३
आयुर्वेदविदो वैद्यास्त्वनुष्ठितरसायनाः
न मृत्युमतिवर्तंते कालो हि दुरतिक्रमः १४
श्रिया रूपेण शीलेन बलेन च कुलेन च

अन्यच्चिंतयते जंतुः कालोऽन्यत्कुरुते बलात् १५
अप्रियैश्च प्रियैश्चैव ह्यचिंतितगमागमैः
संयोजयति भूतानि वियोजयति चेश्वरः १६
यदैव दुःखितः कश्चित्तदैव सुखितः परः
दुर्विज्ञेयस्वभावस्य कालास्याहो विचित्रता १७
यो युवा स भवेद्वृद्धो यो बलीयान्स दुर्बलः
यः श्रीमान्सोऽपि निःश्रीकः कालश्चित्रगतिर्द्विजा १८
नाभिजात्यं न वै शीलं न बलं न च नैपुणम्
भवेत्कार्याय पर्याप्तं कालश्च ह्यनिरोधकः १९
ये सनाथाश्च दातारो गीतवाद्यैरुपस्थिताः
ये चानाथाः परान्नादाः कालस्तेषु समक्रियः २०
फलंत्यकाले न रसायनानि सम्यक्प्रयुक्तान्यपि चौषधानि
तान्येव कालेन समाहृतानि सिद्धिं प्रयांत्याशु सुखं दिशंति २१
नाकालतोऽयं म्रियते जायते वा नाकालतः पुष्टिमग्र्यामुपैति
नाकालतः सुखितं दुःखितं वा नाकालिकं वस्तु समस्ति किंचित्
२२
कालेन शीतः प्रतिवाति वातःकालेन वृष्टिर्जलदानुपैति
कालेन चोष्मा प्रशमं प्रयाति कालेन सर्वं सफलत्वमेति २३
कालश्च सर्वस्य भवस्य हेतुः कालेन सस्यानि भवंति नित्यम्
कालेन सस्यानि लयं प्रयांति कालेन संजीवति जीवलोकः २४
इत्थं कालात्मनस्तत्त्वं यो विजानाति तत्त्वतः
कालात्मानमतिक्रम्य कालातीतं स पश्यति २५
न यस्य कालो न च बंधमुक्ती न यः पुमान्न प्रकृतिर्न विश्वम्
विचित्ररूपाय शिवाय तस्मै नमःपरस्मै परमेश्वराय २६
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे

कालमहिमवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ७

अध्याय ८

ऋषय ऊचुः
केन मानेन कालेस्मिन्नायुस्संख्या प्रकल्प्यते
संख्यारूपस्य कालस्य कः पुनः परमोऽवधिः १
वायुरुवाच
आयुषोऽत्र निमेषाख्यमाद्यमानं प्रचक्षते
संख्यारूपस्य कालस्य शांत्त्वतीतकलावधि २
अक्षिपक्ष्मपरिक्षेपो निमेषः परिकल्पितः
तादृशानां निमेषाणां काष्ठा दश च पंच च ३
काष्ठांस्त्रिंशत्कला नाम कलांस्त्रिंशन्मुहूर्तकः
मुहूर्त्तानामपि त्रिंशदहोरात्रं प्रचक्षते ४
त्रिंशत्संख्यैरहोरात्रैर्मासः पक्षद्वयात्मकः ५
ज्ञेयं पित्र्यमहोरात्रं मासः कृष्णसितात्मकः ६
मासैस्तैरयनं षड्भिर्वर्षं द्वे चायनं मतम्
लौकिकेनैव मानेन अब्दो यो मानुषः स्मृतः ७
एतद्दिव्यमहोरात्रमिति शास्त्रस्य निश्चयः
दक्षिणं चायनं रात्रिस्तथोदगयनं दिनम् ८
मासस्त्रिंशदहोरात्रैर्दिव्यो मानुषवत्स्मृतः
संवत्सरोऽपि देवानां मासैर्द्वादशभिस्तथा ९
त्रीणि वर्षशतान्येव षष्टिवर्षयुतान्यपि
दिव्यस्संवत्सरो ज्ञेयो मानुषेण प्रकीर्तितः १०
दिव्येनैव प्रमाणेन युगसंख्या प्रवर्तते
चत्वारि भारते वर्षे युगानि कवयो विदुः ११

पूर्वं कृतयुगं नाम ततस्त्रेता विधीयते
द्वापरं च कलिश्चैव युगान्येतानि कृत्स्नशः १२
चत्वारि तु सहस्राणि वर्षाणां तत्कृतं युगम्
तस्य तावच्छतीसंध्या संध्यांशश्च तथाविधः १३
इतरेषु ससंध्येषु ससंध्यांशेषु च त्रिषु
एकापायेन वर्तंते सहस्राणि शतानि च १४
एतद्द्वादशसाहस्रं साधिकं च चतुर्युगम्
चतुर्युगसहस्रं यत्संकल्प इति कथ्यते १५
चतुर्युगैकसप्तत्या मनोरंतरमुच्यते
कल्पे चतुर्दशैकस्मिन्मनूनां परिवृत्तयः १६
एतेन क्रमयोगेन कल्पमन्वंतराणि च
सप्रजानि व्यतीतानि शतशोऽथ सहस्रशः १७
अज्ञेयत्वाच्च सर्वेषामसंख्येयतया पुनः
शक्यो नैवानुपूर्व्याद्वि तेषां वक्तुं सुविस्तरः १८
कल्पो नाम दिवा प्रोक्तो ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः
कल्पानां वै सहस्रं च ब्राह्मं वर्षमिहोच्यते १९
वर्षाणामष्टसाहस्रं यच्च तद्ब्रह्मणो युगम्
सवनं युगसाहस्रं ब्रह्मणः पद्मजन्मनः २०
सवनानां सहस्रं च त्रिगुणं त्रिवृतं तथा
कल्प्यते सकलः कालो ब्रह्मणः परमेष्ठिनः २१
तस्य वै दिवसे यांति चतुर्दश पुरंदराः
शतानि मासे चत्वारि विंशत्या सहितानि च २२
अब्दे पंच सहस्राणि चत्वारिंशद्युतानि च
चत्वारिंशत्सहस्राणि पंच लक्षाणि चायुषि २३
ब्रह्मा विष्णोर्दिने चैको विष्णू रुद्रदिने तथा

ईश्वरस्य दिने रुद्रस्सदाख्यस्य तथेश्वरः २४
साक्षाच्छिवस्य तत्संख्यस्तथा सोऽपि सदाशिवः
चत्वारिंशत्सहस्राणि पंचलक्षाणि चायुषि २५
तस्मिन्साक्षाच्छिवेनैष कालात्मा सम्प्रवर्तते
यत्तत्सृष्टेस्समाख्यातं कालान्तरमिह द्विजाः
एतत्कालान्तरं ज्ञेयमहर्वै पारमेश्वरम् २६
रात्रिश्च तावती ज्ञेया परमेशस्य कृत्स्नशः २६ २६घ्
अहस्तस्य तु या सृष्टी रात्रिश्च प्रलयः स्मृतः
अहर्न विद्यते तस्य न रात्रिरिति धारयेत् २७
एषोपचारः क्रियते लोकानां हितकाम्यया
प्रजाः प्रजानां पतयो मूर्त्तयश्च सुरासुराः २८
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थाश्च महाभूतानि पंच च
तन्मात्राण्यथ भूतादिर्बुद्धिश्च सह दैवतः २९
अहस्तिष्ठंति सर्वाणि पारमेशस्य धीमतः
अहरंते प्रलीयन्ते रात्र्यन्ते विश्वसंभवः ३०
यो विश्वात्मा कर्मकालस्वभावाद्यर्थे शक्तिर्यस्य नोल्लंघनीया
यस्यैवाज्ञाधीनमेतत्समस्तं नमस्तस्मै महते शंकराय ३१
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वभागे
कालप्रभावे त्रिदेवायुर्वर्णनं नामाष्टमोऽध्यायः ८

अध्याय ९

मुनय ऊचुः
कथं जगदिदं कृत्स्नं विधाय च निधाय च
आज्ञया परमां क्रीडां करोति परमेश्वरः १
किं तत्प्रथमसंभूतं केनेदमखिलं ततम्

केना वा पुनरेवेदं ग्रस्यते पृथुकुक्षिणा २
वायुरुवाच
शक्तिः प्रथमसम्भूता शांत्यतीतपदोत्तरा
ततो माया ततोऽव्यक्तं शिवाच्छक्तिमतः प्रभोः ३
शान्त्यतीतपदं शक्तेस्ततः शान्तिपदक्रमात्
ततो विद्यापदं तस्मात्प्रतिष्ठापदसंभवः ४
निवृत्तिपदमुत्पन्नं प्रतिष्ठापदतः क्रमात्
एवमुक्ता समासेन सृष्टिरीश्वरचोदिता ५
आनुलोम्यात्तथैतेषां प्रतिलोम्येन संहृतिः
अस्मात्पञ्चपदोद्दिष्टात्परस्स्रष्टा समिष्यते ६
कलाभिः पंचभिर्व्याप्तं तस्माद्विश्वमिदं जगत्
अव्यक्तं कारणं यत्तदात्मना समनुष्ठितम् ७
महदादिविशेषांतं सृजतीत्यपि संमतम्
किं तु तत्रापि कर्तृत्वं नाव्यक्तस्य न चात्मनः ८
अचेतनत्वात्प्रकृतेरज्ञत्वात्पुरुषस्य च
प्रधानपरमाणवादि यावत्किञ्चिदचेतनम् ९
तत्कर्तृकं स्वयं दृष्टं बुद्धिमत्कारणं विना
जगच्च कर्तृसापेक्षं कार्यं सावयवं यतः १०
तस्माच्छक्तस्स्वतन्त्रो यः सर्वशक्तिश्च सर्ववित्
अनादिनिधनश्चायं महदैश्वर्यसंयुतः ११
स एव जगतः कर्ता महादेवो महेश्वराः
पाता हर्ता च सर्वस्य ततः पृथगनन्वयः १२
परिणामः प्रधानस्य प्रवृत्तिः पुरुषस्य च
सर्वं सत्यव्रतस्यैव शासनेन प्रवर्तते १३
इतीयं शाश्वती निष्ठा सतां मनसि वर्तते

न चैनं पक्षमाश्रित्य वर्तते स्वल्पचेतनः १४
यावदादिसमारंभो यावद्यः प्रलयो महान्
तावदप्येति सकलं ब्रह्मणः शारदां शतम् १५
परमित्यायुषो नाम ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः
तत्पराख्यं तदर्द्धं च परार्द्धमभिधीयते १६
परार्द्धद्वयकालांते प्रलये समुपस्थिते
अव्यक्तमात्मनः कार्यमादायात्मनि तिष्ठति १७
आत्मन्यवस्थितेऽव्यक्ते विकारे प्रतिसंहृते
साधर्म्येणाधितिष्ठेते प्रधानपुरुषावुभौ १८
तमः सत्त्वगुणावेतौ समत्वेन व्यवस्थितौ
अनुद्रिक्तावनन्तौ तावोतप्रोतौ परस्परम् १९
गुणसाम्ये तदा तस्मिन्नविभागे तमोदये
शांतवातैकनीरे च न प्राज्ञायत किंचन २०
अप्रज्ञाते जगत्यस्मिन्नेक एव महेश्वरः
उपास्य रजनीं कृत्स्नां परां माहेश्वरीं ततः २१
प्रभातायां तु शर्वर्यां प्रधानपुरुषावुभौ
प्रविश्य क्षोभयामास मायायोगान्महेश्वरः २२
ततः पुनरशेषाणां भूतानां प्रभवाप्ययात्
अव्यक्तादभवत्सृष्टिराज्ञया परमेष्ठिनः २३
विश्वोत्तरोत्तरविचित्रमनोरथस्य यस्यैकशक्तिशकले सकलस्समाप्तः
आत्मानमध्वपतिमध्वविदो वदंति तस्मै नमः सकल-
लोकविलक्षणाय २४

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वभागे
सृष्टिपालनप्रलयकर्तृत्ववर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ९

अध्याय १०

वायुरुवाच
पुरुषाधिष्ठितात्पूर्वमव्यक्तादीश्वराज्ञया
बुद्ध्यादयो विशेषांता विकाराश्चाभवन् क्रमात् १
ततस्तेभ्यो विकारेभ्यो रुद्रो विष्णुः पितामहः
कारणत्वेन सर्वेषां त्रयो देवाः प्रजज्ञिरे २
सर्वतो भुवनव्याप्तिशक्तिमव्याहतां क्वचित्
ज्ञानमप्रतिमं शश्वदैश्वर्यं चाणिमादिकम् ३
सृष्टिस्थितिलयाख्येषु कर्मसु त्रिषु हेतुताम्
प्रभुत्वेन सहैतेषां प्रसीददति महेश्वरः ४
कल्पान्तरे पुनस्तेषामस्पर्द्धा बुद्धिमोहिनाम्
सर्गरक्षालयाचारं प्रत्येकं प्रददौ च सः ५
एते परस्परोत्पन्ना धारयन्ति परस्परम्
परस्परेण वर्धंते परस्परमनुव्रताः ६
क्वचिद्ब्रह्मा क्वचिद्विष्णुः क्वचिद्रुद्रः प्रशस्यते
नानेन तेषामाधिक्यमैश्वर्यं चातिरिच्यते ७
मूर्खा निंदंति तान्वाग्भिः संरंभाभिनिवेशिनः
यातुधाना भवंत्येव पिशाचाश्च न संशयः ८
देवो गुणत्रयातीतश्चतुर्व्यूहो महेश्वरः
सकलस्सकलाधारशक्तेरुत्पत्तिकारणम् ९
सोयमात्मा त्रयस्यास्य प्रकृतेः पुरुषस्य च
लीलाकृतजगत्सृष्टिरीश्वरत्वे व्यवस्थितः १०
यस्सर्वस्मात्परो नित्यो निष्कलः परमेश्वरः
स एव च तदाधारस्तदात्मा तदधिष्ठितः ११
तस्मान्महेश्वरश्चैव प्रकृतिः पुरुषस्तथा

सदाशिवभवो विष्णुर्ब्रह्मा सर्वशिवात्मकम् १२
प्रधानात्प्रथमं जज्ञे वृद्धिः ख्यातिर्मतिर्महान्
महत्तत्त्वस्य संक्षोभादहंकारस्त्रिधाऽभवत् १३
अहंकारश्च भूतानि तन्मात्रानींद्रियाणि च
वैकारिकादहंकारात्सत्त्वोद्रिक्तात्तु सात्त्विकः १४
वैकारिकः स सर्गस्तु युगपत्संप्रवर्तते
बुद्धीन्द्रियाणि पंचैव पंचकर्मेंद्रियाणि च १५
एकादशं मनस्तत्र स्वगुणेनोभयात्मकम्
तमोयुक्तादहंकाराद्भूततन्मात्रसंभवः १६
भूतानामादिभूतत्वाद्भूतादिः कथ्यते तु सः
भूतादेश्शब्दमात्रं स्यात्तत्र चाकाशसंभवः १७
आकाशात्स्पर्श उत्पन्नः स्पर्शाद्वायुसमुद्भवः
वायो रूपं ततस्तेजस्तेजसो रससंभवः १८
रसादापस्समुत्पन्नास्तेभ्यो गन्धसमुद्भवः
गन्धाच्च पृथिवी जाता भूतेभ्योन्यच्चराचरम् १९
पुरुषाधिष्ठितत्वाच्च अव्यक्तानुग्रहेण च
महदादिविशेषान्ता ह्यण्डमुत्पादयन्ति ते २०
तत्र कार्यं च करणं संसिद्धं ब्रह्मणो यदा
तदंडे सुप्रवृद्धोऽभूत् क्षेत्रज्ञो ब्रह्मसंज्ञितः २१
स वै शरीरी प्रथमः स वै पुरुष उच्यते
आदिकर्ता स भूतानां ब्रह्माग्रे समवर्तत २२
तस्येश्वरस्य प्रतिमा ज्ञानवैराग्यलक्षणा
धर्मैश्वर्यकरी बुद्धिर्ब्राह्मी यज्ञेऽभिमानिनः २३
अव्यक्ताज्जायते तस्य मनसा यद्यदीप्सितम्
वशी विकृत्वात्त्रैगुण्यात्सापेक्षत्वात्स्वभावतः २४

त्रिधा विभज्य चात्मानं त्रैलोक्ये संप्रवर्त्तते
सृजते ग्रसते चैव वीक्षते च त्रिभिस्स्वयम् २५
चतुर्मुखस्तु ब्रह्मत्वे कालत्वे चांतकस्स्मृतः
सहस्रमूर्द्धा पुरुषस्तिस्रोवस्थास्स्वयंभुवः २६
सत्त्वं रजश्च ब्रह्मा च कालत्वे च तमो रजः
विष्णुत्वे केवलं सत्त्वं गुणवृद्धिस्त्रिधा विभौ २७
ब्रह्मत्वे सृजते लोकान् कालत्वे संक्षिपत्यपि
पुरुषत्वेऽत्युदासीनः कर्म च त्रिविधं विभोः २८
एवं त्रिधा विभिन्नत्वाद्ब्रह्मा त्रिगुण उच्यते
चतुर्द्धा प्रविभक्तत्वाच्चातुर्व्यूहः प्रकीर्तितः २९
आदित्वादादिदेवोऽसावजातत्वादजः स्मृतः
पाति यस्मात्प्रजाः सर्वाः प्रजापतिरिति स्मृतः ३०
हिरण्मयस्तु यो मेरुस्तस्योल्बं सुमहात्मनः
गर्भोदकं समुद्राश्च जरायुश्चाऽपि पर्वताः ३१
तस्मिन्नंडे त्विमे लोका अंतर्विश्वमिदं जगत्
चंद्रादित्यौ सनक्षत्रौ सग्रहौ सह वायुना ३२
अद्भिर्दशगुणाभिस्तु बाह्यतोण्डं समावृतम्
आपो दशगुणेनैव तेजसा बहिरावृताः ३३
तेजो दशगुणेनैव वायुना बहिरावृतम्
आकाशेनावृतो वायुः खं च भूतादिनावृतम् ३४
भूतादिर्महता तद्वदव्यक्तेनावृतो महान्
एतैरावरणैरण्डं सप्तभिर्बहिरावृतम् ३५
एतदावृत्त्य चान्योन्यमष्टौ प्रकृतयः स्थिताः
सृष्टिपालनविध्वंसकर्मकर्त्र्यो द्विजोत्तमाः ३६
एवं परस्परोत्पन्ना धारयंति परस्परम्

आधाराधेयभावेन विकारास्तु विकारिषु ३७
कूर्मोंगानि यथा पूर्वं प्रसार्य्य विनियच्छति
विकारांश्च तथाऽव्यक्तं सृष्ट्वा भूयो नियच्छति ३८
अव्यक्तप्रभवं सर्वमानुलोम्येन जायते
प्राप्ते प्रलयकाले तु प्रतिलोम्येनुलीयते ३९
गुणाः कालवशादेव भवंति विषमाः समाः
गुणसाम्ये लयो ज्ञेयो वैषम्ये सृष्टिरुच्यते ४०
तदिदं ब्रह्मणो योनिरेतदंडं घनं महत्
ब्रह्मणः क्षेत्रमुद्दिष्टं ब्रह्मा क्षेत्रज्ञ उच्यते ४१
इतीदृशानामण्डानां कोट्यो ज्ञेयाः सहस्रशः
सर्वगत्वात्प्रधानस्य तिर्य्यगूर्ध्वमधः स्थिताः ४२
तत्र तत्र चतुर्वक्त्रा ब्रह्माणो हरयो भवाः
सृष्टा प्रधानेन तथा लब्ध्वा शंभोस्तु सन्निधिम् ४३
महेश्वरः परोव्यक्तादंडमव्यक्तसंभवम्
अण्डाज्जज्ञे विभुर्ब्रह्मा लोकास्तेन कृतास्त्विमे ४४
अबुद्धिपूर्वः कथितो मयैष प्रधानसर्गः प्रथमः प्रवृतः
आत्यंतिकश्च प्रलयोन्तकाले लीलाकृतः केवलमीश्वरस्य ४५
यत्तत्स्मृतं कारणमप्रमेयं ब्रह्मा प्रधानं प्रकृतेः प्रसूतिः
अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यं शुक्लं सुरक्तं पुरुषेण युक्तम् ४६
उत्पादकत्वाद्रजसोतिरेकाल्लोकस्य संतानविवृद्धिहेतून्
अष्टौ विकारानपि चादिकाले सृष्ट्वा समश्नाति तथांतकाले ४७
प्रकृत्यवस्थापितकारणानां या च स्थितिर्या च पुनः प्रवृत्तिः
तत्सर्वमप्राकृतवैभवस्य संकल्पमात्रेण महेश्वरस्य ४८

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां
ब्रह्मांडस्थितिवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः १०

अध्याय ११

मुनय ऊचुः
मन्वंतराणि सर्वाणि कल्पभेदांश्च सर्वशः
तेष्वेवांतरसर्गं च प्रतिसर्गं च नो वद १
वायुरुवाच
कालसंख्याविवृत्तस्य परार्द्धो ब्रह्मणस्स्मृतः
तावांश्चैवास्य कालोन्यस्तस्यांते प्रतिसृज्यते २
दिवसे दिवसे तस्य ब्रह्मणः पूर्वजन्मनः
चतुर्दशमहाभागा मनूनां परिवृत्तयः ३
अनादित्वादनंतत्वादज्ञेयत्वाच्च कृत्स्नशः
मन्वंतराणि कल्पाश्च न शक्या वचनात्पृथक् ४
उक्तेष्वपि च सर्वेषु शृणवतां वो वचो मम
किमिहास्ति फलं तस्मान्न पृथक् वक्तुमुत्सहे ५
य एव खलु कल्पेषु कल्पः संप्रति वर्तते
तत्र संक्षिप्य वर्तंते सृष्टयः प्रतिसृष्टयः ६
यस्त्वयं वर्तते कल्पो वाराहो नाम नामतः
अस्मिन्नपि द्विजश्रेष्ठा मनवस्तु चतुर्दश ७
स्वायंभुवादयस्सप्त सप्त सावर्णिकादयः
तेषु वैवस्वतो नाम सप्तमो वर्तते मनुः ८
मन्वंतरेषु सर्वेषु सर्गसंहारवृत्तयः
प्रायः समाभवंतीति तर्कः कार्यो विजानता ९
पूर्वकल्पे परावृत्ते प्रवृत्ते कालमारुते
समुन्मूलितमूलेषु वृक्षेषु च वनेषु च १०
जगंति तृणवक्त्रीणि देवे दहति पावके
वृष्ट्या भुवि निषिक्तायां विवेलेष्वर्णवेषु च ११

दिक्षु सर्वासु मग्नासु वारिपूरे महीयसि
तदद्भिश्चटुलाक्षेपैस्तरंगभुजमण्डलैः १२
प्रारब्धचण्डनृत्येषु ततः प्रलयवारिषु
ब्रह्मा नारायणो भूत्वा सुष्वाप सलिले सुखम् १३
इमं चोदाहरन्मंत्रं श्लोकं नारायणं प्रति
तं शृणुध्वं मुनिश्रेष्ठास्तदर्थं चाक्षराश्रयम् १४
आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः
अयनं तस्य ता यस्मात्तेन नारायणः स्मृतः १५
शिवयोगमयीं निद्रां कुर्वन्तं त्रिदशेश्वरम्
बद्धांजलि पुटास्सिद्धा जनलोकनिवासिनः १६
स्तोत्रैः प्रबोधयामासुः प्रभातसमये सुराः
यथा सृष्ट्यादिसमये ईश्वरं श्रुतयः पुरा १७
ततः प्रबुद्ध उत्थाय शयनात्तोयमध्यगात्
उदैक्षत दिशः सर्वा योगनिद्रालसेक्षणः १८
नापश्यत्स तदा किंचित्स्वात्मनो व्यतिरेकि यत्
सविस्मय इवासीनः परां चिंतामुपागमत् १९
क्व सा भगवती या तु मनोज्ञा महती मही
नानाविधमहाशैलनदीनगरकानना २०
एवं संचिंतयन्ब्रह्मा बुबुधे नैव भूस्थितिम्
तदा सस्मार पितरं भगवंतं त्रिलोचनम् २१
स्मरणाद्देवदेवस्य भवस्यामिततेजसः
ज्ञातवान्सलिले मग्नां धरणीं धरणीपतिः २२
ततो भूमेस्समुद्धारं कर्तुकामः प्रजापतिः
जलक्रीडोचितं दिव्यं वाराहं रूपमस्मरत् २३
महापर्वतवर्ष्माणं महाजलदनिःस्वनम्

नीलमेघप्रतीकाशं दीप्तशब्दं भयानकम् २४
पीनवृत्तघनस्कंधपीनोन्नतकटीतटम्
ह्रस्ववृत्तोरुजंघाग्रं सुतीक्ष्णपुरमण्डलम् २५
पद्मरागमणिप्रख्यं वृत्तभीषणलोचनम्
वृत्तदीर्घमहागात्रं स्तब्धकर्णस्थलोज्ज्वलम् २६
उदीर्णोच्छ्वासनिश्वासघूर्णितप्रलयार्णवम्
विस्फुरत्सुसटाच्छन्नकपोलस्कंधबंधुरम् २७
मणिभिर्भूषणैश्चित्रैर्महारत्नैःपरिष्कृतम्
विराजमानं विद्युद्भिर्मेघसंघमिवोन्नतम् २८
आस्थाय विपुलं रूपं वाराहममितं विधिः
पृथिव्युद्धरणार्थाय प्रविवेश रसातलम् २९
स तदा शुशुभेऽतीव सूकरो गिरिसंनिभः
लिंगाकृतेर्महेशस्य पादमूलं गतो यथा ३०
ततस्स सलिले मग्नां पृथिवीं पृथिवींधरः
उद्धृत्यालिंग्य दंष्ट्राभ्यामुन्ममज्ज रसातलात् ३१
तं दृष्ट्वा मुनयस्सिद्धा जनलोकनिवासिनः
मुमुदुर्ननृतुर्मूर्ध्नि तस्य पुष्पैरवाकिरन् ३२
वपुर्महावराहस्य शुशुभे पुष्पसंवृतम्
पतद्भिरिव खद्योतैः प्राशुरंजनपर्वतः ३३
ततः संस्थानमानीय वराहो महतीं महीम्
स्वमेव रूपमास्थाय स्थापयामास वै विभुः ३४
पृथिवीं च समीकृत्य पृथिव्यां स्थापयन्गिरीन्
भूराद्यांश्चतुरो लोकान् कल्पयामास पूर्ववत् ३५
इति सह महतीं महीं महीध्रैः प्रलयमहाजलधेरधःस्थमध्यात्
उपरि च विनिवेश्य विश्वकर्मा चरमचरं च जगत्ससर्ज भूयः ३६

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां सृष्ट्यादिवर्णनं नामैकादशोऽध्यायः ११

अध्याय १२

वायुरुवाच
सर्गं चिंतयतस्तस्य तदा वै बुद्धिपूर्वकम्
प्रध्यानकाले मोहस्तु प्रादुर्भूतस्तमोमयः १
तमोमोहो महामोहस्तामिस्रश्चान्धसंज्ञितः
अविद्या पञ्चमी चैषा प्रादुर्भूता महात्मनः २
पंचधाऽवस्थितः सर्गो ध्यायतस्त्वभिमानिनः
सर्व्वतस्तमसातीव बीजकुम्भवदावृतः ३
बहिरन्तश्चाप्रकाशः स्तब्धो निःसंज्ञ एव च
तस्मात्तेषां वृता बुद्धिर्मुखानि करणानि च ४
तस्मात्ते संवृतात्मानो नगा मुख्याः प्रकीर्तिताः
तं दृष्ट्वाऽसाधकं ब्रह्मा प्रथमं सर्गमीदृशम् ५
अप्रसन्नमना भूत्वा द्वितीयं सोऽभ्यमन्यत
तस्याभिधायतः सर्गं तिर्य्यक्स्त्रोतोऽभ्यवर्त्तत ६
अन्तःप्रकाशास्तिर्य्यंच आवृताश्च बहिः पुनः
पश्वात्मानस्ततो जाता उत्पथग्राहिणश्च ते ७
तमप्यसाधकं ज्ञात्वा सर्गमन्यममन्यत
तदोद्ध्वर्वस्त्रोतसो वृत्तो देवसर्गस्तु सात्त्विकः ८
ते सुखप्रीतिबहुला बहिरन्तश्च नावृताः
प्रकाशा बहिरन्तश्चस्वभावादेव संज्ञिताः ९
ततोऽभिध्यायतोव्यक्तादर्व्वाक्स्त्रोतस्तु साधकः
मनुष्यनामा सञ्जातः सर्गो दुःखसमुत्कटः १०

प्रकाशाबहिरन्तस्ते तमोद्रिक्ता रजोऽधिकाः
पंचमोनुग्रहः सर्गश्चतुर्धा संव्यवस्थितः ११
विपर्य्ययेण शक्त्या च तुष्ट्यासिद्ध्या तथैव च
तेऽपरिग्राहिणः सर्व्वे संविभागरताः पुनः १२
खादनाश्चाप्यशीलाश्च भूताद्याः परिकीर्त्तिताः
प्रथमो महतः सर्गो ब्रह्मणः परमेष्ठिनः १३
तन्मात्राणां द्वितीयस्तु भूतसर्गः स उच्यते
वैकारिकस्तृतीयस्तु सर्ग ऐन्द्रियकः स्मृतः १४
इत्येष प्रकृतेः सर्गः सम्भृतोऽबुद्धिपूर्वकः
मुख्यसर्गश्चतुर्थस्तु मुख्या वै स्थावराः स्मृताः १५
तिर्य्यक्स्त्रोतस्तु यः प्रोक्तस्तिर्यग्योनिः स पचमः
तदूर्द्ध्वस्त्रोतसः षष्ठो देवसर्गस्तु स स्मृतः १६
ततोऽर्वाक् स्त्रोतसां सर्गः सप्तमः स तु मानुषः
अष्टमोऽनुग्रहः सर्गः कौमारो नवमः स्मृतः १७
प्राकृताश्च त्रयः पूर्व्वे सर्गास्तेऽबुद्धिपूर्वकाः
बुद्धिपूर्व्वं प्रवर्त्तन्ते मुख्याद्याः पञ्च वैकृताः १८
अग्रे ससर्ज्ज वै ब्रह्मा मानसानात्मनः समान्
सनन्दं सनकञ्चैव विद्वांसञ्च सनातनम् १९
ऋभुं सनत्कुमारञ्च पूर्व्वमेव प्रजापतिः
सर्व्वे ते योगिनो ज्ञेया वीतरागा विमत्सराः २०
इश्वरासक्तमनसो न चक्रुः सृष्टये मतिम्
तेषु सृष्ट्यनपेक्षेषु गतेषु सनकादिषु २१
स्त्रष्टुकामः पुनर्ब्रह्मा तताप परमं तपः
तस्यैवं तप्यमानस्य न किंचित्समवर्त्तत २२
ततो दीर्घेण कालेन दुःखात्क्रोधो व्यजायत

क्रोधाविष्टस्य नेत्राभ्यां प्रापतन्नश्रुबिन्दवः २३
ततस्तेभ्योऽश्रुबिन्दुभ्यो भूताः प्रेतास्तदाभवन्
सर्वांस्तानश्रुजान्दृष्ट्वा ब्रह्मात्मानमनिंदत २४
तस्य तीव्राऽभवन्मूर्च्छा क्रोधामर्षसमुद्भवा
मूर्च्छितस्तु जहौ प्राणान्क्रोधाविष्टः प्रजापतिः २५
ततः प्राणेश्वरो रुद्रो भगवान्नीललोहितः
प्रसादमतुलं कर्त्तुं प्रादुरासीत्प्रभोर्मुखात् २६
दशधा चैकधा चक्रे स्वात्मानं प्रभुरीश्वरः
ते तेनोक्ता महात्मानो दशधा चैकधा कृताः २७
यूयं सृष्टा मया वत्सा लोकानुग्रहकारणात्
तस्मात्सर्व्वस्य लोकस्य स्थापनाय हिताय च २८
प्रजासन्तानहेतोश्च प्रयतध्वमतन्द्रिताः
एवमुक्ताश्च रुरुदुर्दुद्रुवुश्च समन्ततः २९
रोदनाद्द्रावणाच्चैव ते रुद्रा नामतः स्मृताः
ये रुद्रास्ते खलु प्राणा ये प्राणास्ते महात्मकाः ३०
ततो मृतस्य देवस्य ब्रह्मणः परमेष्ठिनः
घृणी ददौ पुनः प्राणान्ब्रह्मपुत्रो महेश्वरः ३१
प्रहृष्टवदनो रुद्रः प्राणप्रत्यागमाद्विभोः
अभ्यभाषत विश्वेशो ब्रह्माणं परमं वचः ३२
माभैर्माभैर्महाभाग विरिंच जगतां गुरो
मया ते प्राणिताः प्राणाः सुखमुत्तिष्ठ सुव्रत ३३
स्वप्नानुभूतमिव तच्छ्रुत्वा वाक्यं मनोहरम्
हरं निरीक्ष्य शनकैर्नेत्रैः फुल्लाम्बुजप्रभैः ३४
तथा प्रत्यागतप्राणः स्निग्धगम्भीरया गिरा
उवाच वचनं ब्रह्मा तमुद्दिश्य कृताञ्जलिः ३५

त्वं हि दर्शनमात्रेण चानन्दयसि मे मनः
को भवान् विश्वमूर्त्या वा स्थित एकादशात्मकः ३६
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा व्याजहार महेश्वरः
स्पृशन् काराभ्यां ब्रह्माणं सुसुखाभ्यां सुरेश्वरः ३७
मां विद्धि परमात्मानं तव पुत्रत्वमागतम्
एते चैकादश रुद्रास्त्वां सुरक्षितुमागताः ३८
तस्मात्तीव्रामिमाम्मूर्च्छां विधूय मदनुग्रहात्
प्रबुद्धस्व यथापूर्वं प्रजा वै स्त्रष्टुमर्हसि ३९
एवं भगवता प्रोक्तो ब्रह्मा प्रीतमना ह्यभूत्
नानाष्टकेन विश्वात्मा तुष्टाव परमेश्वरम् ४०
ब्रह्मोवाच
नमस्ते भगवन् रुद्र भास्करामिततेजसे
नमो भवाय देवाय रसायाम्बुमयात्मने
शर्वाय क्षितिरूपाय नन्दीसुरभये नमः ४१
ईशाय वसवे तुभ्यं नमस्स्पर्शमयात्मने
पशूनां पतये चैव पावकायातितेजसे
भीमाय व्योमरूपाय शब्दमात्राय ते नमः ४२
उग्रायोग्रस्वरूपाय यजमानात्मने नमः
महादेवाय सोमाय नमोस्त्वमृतमूर्तये ४३
एवं स्तुत्वा महादेवं ब्रह्मा लोकपितामहः
प्रार्थयामास विश्वेशं गिरा प्रणतिपूर्वया ४४
भगवन् भूतभव्येश मम पुत्र महेश्वर
सृष्टिहेतोस्त्वमुत्पन्नो ममांगेऽनंगनाशनः ४५
तस्मान्महति कार्येस्मिन् व्यापृतस्य जगत्प्रभो
सहायं कुरु सर्वत्र स्त्रष्टुमर्हसि स प्रजाः ४६

तेनैषां पावितो देवो रुद्रस्त्रिपुरमर्दनः
बाढमित्येव तां वाणीं प्रतिजग्राह शंकरः ४७
ततस्स भगवान् ब्रह्मा हृष्टं तमभिनंद्य च
स्रष्टुं तेनाभ्यनुज्ञातस्तथान्याश्चासृजत्प्रजाः ४८
मरीचिभृग्वंगिरसः पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम्
दक्षमत्रिं वसिष्ठं च सोऽसृजन्मनसैव च
पुरस्तादसृजद्ब्रह्मा धर्मं संकल्पमेव च ४९
इत्येते ब्रह्मणः पुत्रा द्वादशादौ प्रकीर्तिताः
सह रुद्रेण संभूताः पुराणा गृहमेधिनः ५०
तेषां द्वादश वंशाः स्युर्दिव्या देवगणान्विताः
प्रजावन्तः क्रियावन्तो महर्षिभिरलंकृताः ५१
अथ देवासुरपितॄन् मनुष्यांश्च चतुष्टयम्
सह रुद्रेण सिसृक्षुरंभस्येतानि वै विधिः ५२
स सृष्ट्यर्थं समाधाय ब्रह्मात्मानमयूयुजत्
मुखादजनयद्देवान् पितॄंश्चैवोपपक्षतः ५३
जघनादसुरान् सर्वान् प्रजनादपि मानुषान्
अवस्करे क्षुधाविष्टा राक्षसास्तस्य जज्ञिरे ५४
पुत्रास्तमोरजःप्राया बलिनस्ते निशाचराः
सर्पा यक्षास्तथा भूता गंधर्वाः संप्रजज्ञिरे ५५
वयांसि पक्षतः सृष्टाः पक्षिणो वक्षसोऽसृजत्
मुखतोजांस्तथा पार्श्वादुरगांश्च विनिर्ममे ५६
पद्भ्यां चाश्वान्समातंगान् शरभान् गवयान् मृगान्
उष्ट्रानश्वतरांश्चैव न्यंकूनन्याश्च जातयः १ ५७
औषध्यः फलमूलानि रोमभ्यस्तस्य जज्ञिरे
गायत्रीं च ऋचं चैव त्रिवृत्साम रथंतरम् ५८

अग्निष्टोमं च यज्ञानां निर्ममे प्रथमान्मुखात्
यजूंषि त्रैष्टुभं छंदःस्तोमं पंचदशं तथा ५९
बृहत्साम तथोक्थं च दक्षिणादसृजन्मुखात्
सामानि जगतीछंदः स्तोमं सप्तदशं तथा ६०
वैरूप्यमतिरात्रं च पश्चिमादसृजन् मुखात्
एकविंशमथर्वाणमाप्तोर्यामाणमेव च ६१
अनुष्टुभं स वैराजमुत्तरादसृजन्मुखात्
उच्चावचानि भूतानि गात्रेभ्यस्तस्य जज्ञिरे ६२
यक्षाः पिशाचा गंधर्वास्तथैवाप्सरसां गणाः
नरकिन्नररक्षांसि वयःपशुमृगोरगाः ६३
अव्ययं चैव यदिदं स्थाणुस्थावरजंगमम्
तेषां वै यानि कर्माणि प्राक्सृष्टानि प्रपेदिरे ६४
तान्येव ते प्रपद्यंते सृज्यमानाः पुनः पुनः
हिंस्राहिंस्रे मृदुक्रूरे धर्माधर्मावृतानृते ६५
तद्भाविताः प्रपद्यंते तस्मात्तत्तस्य रोचते
महाभूतेषु नानात्वमिंद्रियार्थेषु मुक्तिषु ६६
विनियोगं च भूतानां धातैव व्यदधत्स्वयम्
नाम रूपं च भूतानां प्राकृतानां प्रपंचनम् ६७
वेदशब्देभ्य एवादौ निर्ममेऽसौ पितामहः
आर्षाणि चैव नामानि याश्च वेदेषु वृत्तयः ६८
शर्वर्य्यंते प्रसूतानां तान्येवैभ्यो ददावजः
यथर्तावृतुलिंगानि नानारूपाणि पर्य्यये ६९
दृश्यंते तानि तान्येव तथा भावा युगादिषु
इत्येष करणोद्भूतो लोकसर्गस्स्वयंभुवः ७०
महदाद्योविशेषांतो विकारः प्रकृतेः स्वयम्

चंद्रसूर्यप्रभाजुष्टो ग्रहनक्षत्रमंडितः ७१
नदीभिश्च समुद्रैश्च पर्वतैश्च स मंडितः
पुरैश्च विविधैरम्यैस्स्फीतैर्जनपदैस्तथा ७२
तस्मिन् ब्रह्मवनेऽव्यक्तो ब्रह्मा चरति सर्ववित्
अव्यक्तबीजप्रभव ईश्वरानुग्रहे स्थितः ७३
बुद्धिस्कंधमहाशाख इन्द्रियांतरकोटरः
महाभूतप्रमाणश्च विशेषामलपल्लवः ७४
धर्माधर्मसुपुष्पाढ्यः सुखदुःखफलोदयः
आजीव्यः सर्वभूतानां ब्रह्मवृक्षः सनातनः ७५
द्यां मूर्द्धानं तस्य विप्रा वदंति खं वै नाभिं चंद्रसूर्यौ च नेत्रे
दिशः श्रोत्रे चरणौ च क्षितिं च सोऽचिन्त्यात्मा सर्वभूतप्रणेता ७६
वक्त्रात्तस्य ब्रह्मणास्संप्रसूतास्तद्वक्षसः क्षत्रियाः पूर्वभागात्
वैश्या उरुभ्यां तस्य पद्भ्यां च शूद्राः सर्वे वर्णा गात्रतः संप्रसूताः
७७

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
सृष्टिवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः १२

अध्याय १३

ऋषय ऊचुः
भवता कथिता सृष्टिर्भवस्य परमात्मनः
चतुर्मुखमुखात्तस्य संशयो नः प्रजायते १
देवश्रेष्ठो विरूपाक्षो दीप्तश्शूलधरो हरः
कालात्मा भगवान् रुद्रः कपर्दी नीललोहितः २
सब्रह्मकमिमं लोकं सविष्णुमपि पावकम्
यः संहरति संक्रुद्धो युगांते समुपस्थिते ३

यस्य ब्रह्मा च विष्णुश्च प्रणामं कुरुतो भयात्
लोकसंकोचकस्यास्य यस्य तौ वशवर्तिनौ ४
योऽयं देवः स्वकादंगाद्ब्रह्मविष्णू पुरासृजत्
स एव हि तयोर्नित्यं योगक्षेमकरः प्रभुः ५
स कथं भगवान् रुद्र आदिदेवः पुरातनः
पुत्रत्वमगमच्छंभुर्ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ६
प्रजापतिश्च विष्णुश्च रुद्रस्यैतौ परस्परम्
सृष्टौ परस्परस्यांगादिति प्रागपि शुश्रुम ७
कथं पुनरशेषाणां भूतानां हेतुभूतयोः
गुणप्रधानभावेन प्रादुर्भावः परस्परात् ८
नापृष्टं भवता किंचिन्नाश्रुतं च कथंचन
भगवच्छिष्यभूतेन भवता सकलं स्मृतम् ९
तत्त्वं वद यथा ब्रह्मा मुनीनामवदद्विभुः
वयं श्रद्धालवस्तात श्रोतुमीश्वरसद्यशः १०
वायुरुवाच
स्थाने पृष्टमिदं विप्रा भवद्भिः प्रश्नकोविदैः
इदमेव पुरा पृष्टो मम प्राह पितामहः ११
तदहं सम्प्रवक्ष्यामि यथा रुद्रसमुद्भवः
यथा च पुनरुत्पत्तिर्ब्रह्मविष्णवोः परस्परम् १२
त्रयस्ते कारणात्मानो जतास्साक्षान्महेश्वरात्
चराचरस्य विश्वस्य सर्गस्थित्यंतहेतवः १३
परमैश्वर्यसंयुक्ताः परमेश्वरभाविताः
तच्छक्त्याधिष्ठिता नित्यं तत्कार्यकरणक्षमाः १४
पित्रा नियमिताः पूर्वं त्रयोपि त्रिषु कर्मसु
ब्रह्मा सर्गे हरिस्त्राणे रुद्रः संहरणे तथा १५

तथाप्यन्योन्यमात्सर्यादन्योन्यातिशयाशिनः
तपसा तोषयित्वा स्वं पितरं परमेश्वरम् १६
लब्ध्वा सर्वात्मना तस्य प्रसादात्परमेष्ठिनः
ब्रह्मनारायणौ पूर्वं रुद्रः कल्पान्तरेऽसृजत् १७
कल्पान्तरे पुनर्ब्रह्मा रुद्रविष्णू जगन्मयः
विष्णुश्च भगवान्रुद्रं ब्रह्माणमसृजत्पुनः १८
नारायणं पुनर्ब्रह्मा ब्रह्माणमसृजत्पुनः
एवं कल्पेषु कल्पेषु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः १९
परस्परेण जायंते परस्परहितैषिणः
तत्तत्कल्पान्तवृत्तान्तमधिकृत्य महर्षिभिः २०
प्रभावः कथ्यते तेषां परस्परसमुद्भवात्
शृणु तेषां कथां चित्रां पुण्यां पापप्रमोचिनीम् २१
कल्पे तत्पुरुषे वृत्तां ब्रह्मणः परमेष्ठिनः
पुरा नारायणो नाम कल्पे वै मेघवाहने २२
दिव्यं वर्षसहस्रं तु मेघो भूत्वावहद्धराम्
तस्य भावं समालक्ष्य विष्णोर्विश्वजगद्गुरुः २३
सर्वस्सर्वात्मभावेन प्रददौ शक्तिमव्ययाम्
शक्तिं लब्ध्वा तु सर्वात्मा शिवात्सर्वेश्वरात्तदा २४
ससर्ज भगावन् विष्णुर्विश्वं विश्वसृजा सह
विष्णोस्तद्वैभवं दृष्ट्वा सृष्टस्तेन पितामहः २५
ईर्ष्यया परया ग्रस्तः प्रहसन्निदमब्रवीत्
गच्छ विष्णो मया ज्ञातं तव सर्गस्य कारणम्
आवयोरधिकश्चास्ति स रुद्रो नात्र संशयः २६
तस्य देवाधिदेवस्य प्रसादात्परमेष्ठिनः
स्रष्टा त्वं भगवानाद्यः पालकः परमार्थतः २७

अहं च तपसाराध्य रुद्रं त्रिदशनायकम्
त्वया सह जगत्सर्वं स्रक्ष्याम्यत्र न संशयः २८
एवं विष्णुमुपालभ्य भगवानब्जसम्भवः
एवं विज्ञापयामास तपसा प्राप्य शंकरम् २९
भगवन् देवदेवेश विश्वेश्वर महेश्वर
तव वामांगजो विष्णुर्दक्षिणांगभवो ह्यहम् ३०
मया सह जगत्सर्वं तथाप्यसृजदच्युतः
स मत्सरादुपालब्धस्त्वदाश्रयबलान्मया ३१
मद्भावान्नाधिकस्तेति भावस्त्वयि महेश्वरे
त्वत्त एव समुत्पत्तिरावयोस्सदृशी यतः ३२
तस्य भक्त्या यथापूर्वं प्रसादं कृतवानसि
तथा ममापि तत्सर्वं दातुमर्हसि शंकर ३३
इति विज्ञापितस्तेन भगवान् भगनेत्रहा
न्यायेन वै ददौ सर्वं तस्यापि स घृणानिधिः ३४
लब्ध्वैवमीश्वरादेव ब्रह्मा सर्वात्मतां क्षणात्
त्वरमाणोथ संगम्य ददर्श पुरुषोत्तमम् ३५
क्षीरार्णवालये शुभ्रे विमाने सूर्यसंनिभे
हेमरत्नान्विते दिव्ये मनसा तेन निर्मिते ३६
अनंतभोगशय्यायां शयानं पंकजेक्षणम्
चतुर्भुजमुदारांगं सर्वाभरणभूषितम् ३७
शंखचक्रधरं सौम्यं चन्द्रबिंबसमाननम्
श्रीवत्सवक्षसं देवं प्रसन्नमधुरस्मितम् ३८
धरामृदुकरांभोजस्पर्शरक्तपदांबुजम्
क्षीरार्णवामृतमिव शयानं योगनिद्रया ३९
तमसा कालरुद्राख्यं रजसा कनकांडजम्

सत्त्वेन सर्वगं विष्णुं निर्गुणत्वे महेश्वरम् ४०
तं दृष्ट्वा पुरुषं ब्रह्मा प्रगल्भमिदमब्रवीत्
ग्रसामि त्वामहं विष्णो त्वमात्मानं यथा पुरा ४१
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा प्रतिबुद्ध्य पितामहम्
उदैक्षत महाबाहुस्स्मितमीषच्चकार च ४२
तस्मिन्नवसरे विष्णुर्ग्रस्तस्तेन महात्मना
सृष्टश्च ब्रह्मणा सद्यो भ्रुवोर्मध्यादयत्नतः ४३
तस्मिन्नवसरे साक्षाद्भगवानिन्दुभूषणः
शक्तिं तयोरपि द्रष्टुमरूपो रूपमास्थितः ४४
प्रसादमतुलं कर्तुं पुरा दत्तवरस्तयोः
आगच्छत्तत्र यत्रेमौ ब्रह्मनारायणौ स्थितौ ४५
अथ तुष्टुवतुर्देवं प्रीतौ भीतौ च कौतुकात्
प्रणेमतुश्च बहुशो बहुमानेन दूरतः ४६
भवोपि भगवानेतावनुगृह्य पिनाकधृक्
सादरं पश्यतोरेव तयोरंतरधीयत ४७

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
ब्रह्मविष्णुसृष्टिकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः १३

अध्याय १४

वायुरुवाच
प्रतिकल्पं प्रवक्ष्यामि रुद्राविर्भावकारणम्
यतो विच्छिन्नसंताना ब्रह्मसृष्टिः प्रवर्तते १
कल्पेकल्पे प्रजाः सृष्ट्वा ब्रह्मा ब्रह्मांडसंभवः
अवृद्धिहेतोर्भूतानां मुमोह भृशदुःखितः २
तस्य दुःखप्रशांत्यर्थं प्रजानां च विवृद्धये

तत्तत्कल्पेषु कालात्मा रुद्रो रुद्रगणाधिपः ३
निर्दिष्टः पममेशेन महेशो नीललोहितः
पुत्रो भूत्वानुगृह्णाति ब्रह्माणं ब्रह्मणोनुजः ४
स एव भगवानीशस्तेजोराशिरनामयः
अनादिनिधनोधाता भूतसंकोचको विभुः ५
परमैश्वर्यसंयुक्तः परमेश्वरभावितः
तच्छक्त्याधिष्ठितश्शश्वत्तच्चिह्नैरपि चिह्नितः ६
तन्नामनामा तद्रूपस्तत्कार्यकरणक्षमः
तत्तुल्यव्यवहारश्च तदाज्ञापरिपालकः ७
सहस्रादित्यसंकाशश्चन्द्रावयवभूषणः
भुजंगहारकेयूरवलयो मुंजमेखलः ८
जलंधरविरिंचेन्द्रकपालशकलोज्ज्वलः
गङ्गातुंगतरंगार्द्धपिंगलाननमूर्द्धजः ९
भग्नदंष्ट्रांकुराक्रान्तप्रान्तकान्तधराधरः
सव्यश्रवणपार्श्वांतमंडलीकृतकुण्डलः १०
महावृषभनिर्याणो महाजलदनिःस्वनः
महानलसमप्रख्यो महाबलपराक्रमः ११
एवं घोरमहारूपो ब्रह्मपुत्रीं महेश्वरः
विज्ञानं ब्रह्मणे दत्त्वा सर्गे सहकरोति च १२
तस्माद्रुद्रप्रसादेन प्रतिकल्पं प्रजापतेः
प्रवाहरूपतो नित्या प्रजासृष्टिः प्रवर्तते १३
कदाचित्प्रार्थितः स्रष्टुं ब्रह्मणा नीललोहितः
स्वात्मना सदृशान् सर्वान् ससर्ज मनसा विभुः १४
कपर्द्दिनो निरातंकान्नीलग्रीवाँस्त्रिलोचनान्
जरामरणनिर्मुक्तान् दीप्तशूलवरायुधान् १५

तैस्तु संच्छादितं सर्वं चतुर्दशविधं जगत्
तान्दृष्टा विविधान्रुद्रान् रुद्रमाह पितामहः १६
नमस्ते देवदेवेश मास्राक्षीरीदृशीः प्रजाः
अन्याः सृज त्वं भद्रं ते प्रजा मृत्युसमन्विताः १७
इत्युक्तः प्रहसन्प्राह ब्रह्माणं परमेश्वरः
नास्ति मे तादृशस्सर्गस्सृज त्वमशुभाः प्रजाः १८
ये त्विमे मनसा सृष्टा महात्मानो महाबलाः
चरिष्यंति मया सार्द्धं सर्व एव हि याज्ञिकाः १९
इत्युक्त्वा विश्वकर्माणं विश्वभूतेश्वरो हरः
सह रुद्रैः प्रजासर्गान्निवृत्तात्मा व्यतिष्ठत २०
ततः प्रभृति देवोऽसौ न प्रसूते प्रजाः शुभाः
ऊर्द्ध्वरेताः स्थितः स्थाणुर्यावदाभूतसंप्लवम् २१

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
रुद्राविर्भाववर्णनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः १४

अध्याय १५

वायुरुवाच
यदा पुनः प्रजाः सृष्टा न व्यवर्द्धन्त वेधसः
तदा मैथुनजां सृष्टिं ब्रह्मा कर्तुममन्यत १
न निर्गतं पुरा यस्मान्नारीणां कुलमीश्वरात्
तेन मैथुनजां सृष्टिं न शशाक पितामहः २
ततस्स विदधे बुद्धिमर्थनिश्चयगामिनीम्
प्रजानमेव वृद्ध्यर्थं प्रष्टव्यः परमेश्वर ३
प्रसादेन विना तस्य न वर्द्धेरन्निमाः प्रजाः
एवं संचिन्त्य विश्वात्मा तपः कर्तुं प्रचक्रमे ४

तदाद्या परमा शक्तिरनंता लोकभाविनी
आद्या सूक्ष्मतरा शुद्धा भावगम्या मनोहरा ५
निर्गुणा निष्प्रपंचा च निष्कला निरुपप्लवा
निरंतरतरा नित्या नित्यमीश्वरपार्श्वगा ६
तया परमया शक्त्या भगवंतं त्रियम्बकम्
संचिन्त्य हृदये ब्रह्मा ततापः परमं तपः ७
तीव्रेण तपसा तस्य युक्तस्य परमेष्ठिनः
अचिरेणैव कालेन पिता संप्रतुतोष ह ८
ततः केनचिदंशेन मूर्तिमाविश्य कामपि
अर्द्धनारीश्वरो भूत्वा ययौ देवस्स्वयं हरः ९
तं दृष्ट्वा परमं देवं तमसः परमव्ययम्
अद्वितीयमनिर्देश्यमदृश्यमकृतात्मभिः १०
सर्वलोकविधातारं सर्वलोकेश्वरेश्वरम्
सर्वलोकविधायिन्या शक्त्या परमया युतम् ११
अप्रतर्क्यमनाभासममेयमजरं ध्रुवम्
अचलं निर्गुणं शांतमनंतमहिमास्पदम् १२
सर्वगं सर्वदं सर्वसदसद्व्यक्तिवर्जितम्
सर्वोपमाननिर्मुक्तं शरण्यं शाश्वतं शिवम् १३
प्रणम्य दंडवद्ब्रह्मा समुत्थाय कृतांजलिः
श्रद्धाविनयसंपन्नैः श्राव्यैः संस्करसंयुतैः १४
यथार्थयुक्तसर्वार्थैर्वेदार्थपरिबृंहितैः
तुष्टाव देवं देवीं च सूक्तैः सूक्ष्मार्थगोचरैः १५
ब्रह्मोवाच
जय देव महादेव जयेश्वर महेश्वर
जय सर्वगुण श्रेष्ठ जय सर्वसुराधिप १६

जय प्रकृति कल्याणि जय प्रकृतिनायिके
जय प्रकृतिदूरे त्वं जय प्रकृतिसुन्दरि १७
जयामोघमहामाय जयामोघ मनोरथ
जयामोघमहालील जयामोघमहाबल १८
जय विश्वजगन्मातर्जय विश्वजगन्मये
जय विश्वजगद्धात्रि जय विश्वजगत्सखि १९
जय शाश्वतिकैश्वर्ये जय शाश्वतिकालय
जय शाश्वतिकाकार जय शाश्वतिकानुग २०
जयात्मत्रयनिर्मात्रि जयात्मत्रयपालिनि
जयात्मत्रयसंहर्त्रि जयात्मत्रयनायिके २१
जयावलोकनायत्तजगत्कारणबृंहण
जयोपेक्षाकटाक्षोत्थहुतभुग्भुक्तभौतिक २२
जय देवाद्यविज्ञेये स्वात्मसूक्ष्मदृशोज्ज्वले
जय स्थूलात्मशक्त्येशेजय व्याप्तचराचरे २३
जय नामैकविन्यस्तविश्वतत्त्वसमुच्चय
जयासुरशिरोनिष्ठश्रेष्ठानुगकदंबक २४
जयोपाश्रितसंरक्षासंविधानपटीयसि
जयोन्मूलितसंसारविषवृक्षांकुरोद्गमे २५
जय प्रादेशिकैश्वर्यवीर्यशौर्यविजृंभण
जय विश्वबहिर्भूत निरस्तपरवैभव २६
जय प्रणीतपंचार्थप्रयोगपरमामृत
जय पंचार्थविज्ञानसुधास्तोत्रस्वरूपिणि २७
जयति घोरसंसारमहारोगभिषग्वर
जयानादिमलाज्ञानतमःपटलचंद्रिके २८
जय त्रिपुरकालाग्ने जय त्रिपुरभैरवि

जय त्रिगुणनिर्मुक्ते जय त्रिगुणमर्दिनि २९
जय प्रथमसर्वज्ञ जय सर्वप्रबोधिक
जय प्रचुरदिव्यांग जय प्रार्थितदायिनि ३०
क्व देव ते परं धाम क्व च तुच्छं च नो वचः
तथापि भगवन् भक्त्या प्रलपंतं क्षमस्व माम् ३१
विज्ञाप्यैवंविधैः सूक्तैर्विश्वकर्मा चतुर्मुखः
नमश्चकार रुद्राय रुद्राण्यै च मुहुर्मुहुः ३२
इदं स्तोत्रवरं पुण्यं ब्रह्मणा समुदीरितम्
अर्द्धनारीश्वरं नाम शिवयोर्हर्षवर्द्धनम् ३३
य इदं कीर्त्तयेद्भक्त्या यस्य कस्यापि शिक्षया
स तत्फलमवाप्नोति शिवयोः प्रीतिकारणात् ३४
सकलभुवनभूतभावनाभ्यां जननविनाशविहीनविग्रहाभ्याम्
नरवरयुवतीवपुर्द्धराभ्यां सततमहं प्रणतोस्मि शंकराभ्याम् ३५

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पू॥॥
शिवशिवास्तुतिवर्णनं नाम पंचदशोऽध्यायः १५

अध्याय १६

वायुरुवाच
अथ देवो महादेवो महाजलदनादया
वाचा मधुरगंभीरशिवदश्लक्ष्णवर्णया १
अर्थसंपन्नपदया राजलक्षणयुक्तया
अशेषविषयारंभरक्षाविमलदक्षया २
मनोहरतरोदारमधुरस्मितपूर्वया
संबभाषे सुसंपीतो विश्वकर्माणमीश्वरः ३
ईश्वर उवाच

वत्स वत्स महाभाग मम पुत्र पितामह
ज्ञातमेव मया सर्वं तव वाक्यस्य गौरवम् ४
प्रजानामेव बृद्ध्यर्थं तपस्तप्तं त्वयाधुना
तपसाऽनेन तुष्टोस्मि ददामि च तवेप्सितम् ५
इत्युक्त्वा परमोदारं स्वभावमधुरं वचः
ससर्ज वपुषो भागाद्देवीं देववरो हरः ६
यामाहुर्ब्रह्मविद्वांसो देवीं दिव्यगुणान्विताम्
परस्य परमां शक्तिं भवस्य परमात्मनः ७
यस्यां न खलु विद्यंते जन्म मृत्युजरादयः
या भवानी भवस्यांगात्समाविरभवत्किल ८
यस्या वाचो निवर्तन्ते मनसा चेंद्रियैः सह
सा भर्तुर्वपुषो भागाज्ञातेव समदृश्यत ९
या सा जगदिदं कृत्स्नं महिम्ना व्याप्य तिष्ठति
शरीरिणीव स देवी विचित्रं समलक्ष्यत १०
सर्वं जगदिदं चैषा संमोहयति मायया
ईश्वरात्सैव जाताभूदजाता परमार्थतः ११
न यस्या परमो भावः सुराणामपि गोचरः
विश्वामरेश्वरी चैव विभक्ता भर्तुरंगतः १२
तां दृष्ट्वा परमेशानीं सर्वलोकमहेश्वरीम्
सर्वज्ञां सर्वगां सूक्ष्मां सदसद्व्यक्तिवर्जिताम् १३
परमां निखिलं भासा भासयन्तीमिदं जगत्
प्रणिपत्य महादेवीं प्रार्थयामास वै विराट् १४
ब्रह्मोवाच
देवि देवेन सृष्टोऽहमादौ सर्वजगन्मयि
प्रजासर्गे नियुक्तश्च सृजामि सकलं जगत् १५

मनसा निर्मिताः सर्वे देवि देवादयो मया
न वृद्धिमुपगच्छन्ति सृज्यमानाः पुनः पुनः १६
मिथुनप्रभवामेव कृत्वा सृष्टिमतः परम्
संवर्धयितुमिच्छामि सर्वा एव मम प्रजाः १७
न निर्गतं पुरा त्वत्तो नारीणां कुलमव्ययम्
तेन नारीकुलं स्रष्टुं शक्तिर्मम न विद्यते १८
सर्वासामेव शक्तीनां त्वत्तः खलु समुद्भवः
तस्मात्सर्वत्र सर्वेषां सर्वशक्तिप्रदायिनीम् १९
त्वामेव वरदां मायां प्रार्थयामि सुरेश्वरीम्
चराचरविवृद्ध्यर्थमंशेनैकेन सर्वगे २०
दक्षस्य मम पुत्रस्य पुत्री भव भवार्दिनि
एवं सा याचिता देवी ब्रह्मणा ब्रह्मयोनिना २१
शक्तिमेकां भ्रुवोर्मध्यात्ससर्जात्मसमप्रभाम्
तामाह प्रहसन्प्रेक्ष्य देवदेववरो हरः २२
ब्रह्माणं तपसाराध्य कुरु तस्य यथेप्सितम्
तामाज्ञां परमेशस्य शिरसा प्रतिगृह्य सा २३
ब्रह्मणो वचनाद्देवी दक्षस्य दुहिताभवत्
दत्त्वैवमतुलां शक्तिं ब्रह्मणे ब्रह्मरूपिणीम् २४
विवेश देहं देवस्य देवश्चांतरधीयत
तदा प्रभृति लोकेऽस्मिन् स्त्रियां भोगः प्रतिष्ठितः २५
प्रजासृष्टिश्च विप्रेंद्रा मैथुनेन प्रवर्तते
ब्रह्मापि प्राप सानन्दं सन्तोषं मुनिपुंगवाः २६
एतद्वस्सर्वमाख्यातं देव्याः शक्तिसमुद्भवम्
पुण्यवृद्धिकरं श्राव्यं भूतसर्गानुपंगतः २७
य इदं कीर्तयेन्नित्यं देव्याः शक्तिसमुद्भवम्

पुण्यं सर्वमवाप्नोति पुत्रांश्च लभते शुभान् २८
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
देवीशक्त्युद्भवो नाम षोडशोऽध्यायः १६

अध्याय १७

वायुरुवाच
एवं लब्ध्वा परां शक्तिमीश्वरादेव शाश्वतीम्
मैथुनप्रभवां सृष्टिं कर्तृकामः प्रजापतिः १
स्वयमप्यर्द्धतो नारी चार्द्धेन पुरुषोऽभवत्
यार्द्धेन नारी सा तस्माच्छतरूपा व्यजायत २
विराजमसृजद्ब्रह्मा सोऽर्द्धेन पुरुषोऽभवत्
स वै स्वायंभुवः पूर्वं पुरुषो मनुरुच्यते ३
सा देवी शतरूपा तु तपः कृत्वा सुदुश्चरम्
भर्त्तारं दीप्तयशसं मनुमेवान्वपद्यत ४
तस्मात्तु शतरूपा सा पुत्रद्वयमसूयत
प्रियव्रतोत्तानपादौ पुत्रौ पुत्रवतां वरौ ५
कन्ये द्वे च महाभागे याभ्यां जातास्त्विमाः प्रजाः
आकूतिरेका विज्ञेया प्रसूतिरपरा स्मृता ६
स्वायंभुवः प्रसूतिं च ददौ दक्षाय तां प्रभुः
रुचेः प्रजापतिश्चैव चाकूतिं समपादयत् ७
आकूत्यां मिथुनं जज्ञे मानसस्य रुचेः शुभम्
यज्ञश्च दक्षिणा चैव याभ्यां संवर्तितं जगत् ८
स्वायंभुवसुतायां तु प्रसूत्यां लोकमातरः १
चतस्रो विंशतिः कन्या दक्षस्त्वजनयत्प्रभुः ९
श्रद्धा लक्ष्मीर्धृतिः पुष्टिस्तुष्टिर्मेधा क्रिया तथा

बुद्धिर्लज्जा वपुः शांतिस्सिद्धिः कीर्तिस्त्रयोदशी १०
पत्न्यर्थं प्रतिजग्राह धर्मो दाक्षायणीः प्रभुः
ताभ्यः शिष्टा यवीयस्य एकादश सुलोचनाः ११
ख्यातिः सत्यर्थसंभूतिः स्मृतिः प्रीतिः क्षमा तथा
सन्नतिश्चानसूया च ऊर्ज्जा स्वाहा स्वधा तथा १२
भृगुश्शर्वो मरीचिश्च अंगिराः पुलहः क्रतुः
पुलस्त्योऽत्रिर्विशिष्ठश्च पावकः पितरस्तथा १३
ख्यात्याद्या जगृहुः कन्यामुनयो मुनिसत्तमाः
कामाद्यास्तु यशोंता ये ते त्रयोदश सूनवः १४
धर्मस्य जज्ञिरे तास्तु श्रद्धाद्यास्सुसुखोत्तराः
दुःखोत्तराश्च हिंसायामधर्मस्य च संततौ १५
निकृत्यादय उत्पन्नाःपुत्राश्च धर्मलक्षणाः
नैषां भार्याश्च पुत्रा वा सर्वे त्वनियमाः स्मृताः १६
स एष तामसस्सर्गो जज्ञे धर्मनियामकः
या सा दक्षस्य दुहिता रुद्रस्य दयिता सती १७
भर्तृनिन्दाप्रसंगेन त्यक्त्वा दाक्षायिणीं तनुम्
दक्षं च दक्षभार्य्यां च विनिंद्य सह बन्धुभिः १८
सा मेनायामाविरभूत्पुत्री हिमवतो गिरेः
रुद्रस्तु तां सतीं दृष्ट्वा रुद्रांस्त्वात्मसमप्रभान् १९
यथासृजदसंख्यातांस्तथा कथितमेव च
भृगोः ख्यात्यां समुत्पन्ना लक्ष्मीर्नारायणप्रिया २०
देवौ धातृविधातारौ मन्वंतरविधारिणौ
तयोर्वै पुत्रपौत्राद्याश्शतशोऽथ सहस्रशः २१
स्वायंभुवेऽतरे नीताः सर्वे ते भार्गवा मताः
मरीचेरपि संभूतिः पौर्णमासमसूयत २२

कन्याचतुष्टयं चैव महीयांसस्तदन्वयाः
येषां वंशे समुत्पन्नो बहुपुत्रस्य कश्यपः २३
स्मृतिश्चांगिरसः पत्नी जनयामास वै सुतौ
आग्नीध्रं शरभञ्चैव तथा कन्याचतुष्टयम् २४
तदीयाः पुत्रपौत्राश्च येतीतास्ते सहस्रशः
प्रीत्यां पुलस्त्यभार्यायां दन्तोग्निरभवत्सुतः
पूर्वजन्मनि योगस्त्यस्स्मृतः स्वायंभुवेऽतरे २५
तत्संततीया बहवः पौलस्त्या इति विश्रुताः
क्षमा तु सुषुवे पुत्रान्पुलहस्य प्रजापतेः २६
कर्दमश्च सुरिश्चैव सहिष्णुश्चेति ते त्रयः
त्रेताग्निवर्चसस्सर्वे येषां वंशः प्रतिष्ठितः २७
क्रतोः क्रतुसमान्भार्या सन्नतिस्सुषुवे सुतान्
नैषां भार्याश्च पुत्राश्च सर्वे ते ह्यूर्ध्वरेतसः २८
षष्टिस्तानि सहस्राणि वालखिल्या इति स्मृताः
अनूरोरग्रतो यांति परिवार्य्य दिवाकरम् २९
अत्रेर्भार्यानुसूया च पञ्चात्रेयानसूयत
कन्यकां च श्रुतिं नाम माता शंखपदस्य च ३०
सत्यनेत्रश्च हव्यश्च आपोमूर्तिश्शनैश्चरः
सोमश्च पंचमस्त्वेते पंचात्रेयाः प्रकीर्तिताः ३१
तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च ह्यात्रेयाणां महात्मनाम्
स्वायंभुवेऽतरेऽतीताः शतशोऽथ सहस्रशः ३२
ऊर्जायां तु वसिष्ठस्य पुत्रा वै सप्त जज्ञिरे
ज्यायसी च स्वसा तेषां पुंडरीका सुमध्यमा ३३
रजो गात्रोर्द्ध्वबाहू च सवनश्चानयश्च यः
सुतपाश्शुक्र इत्येते सप्त सप्तर्षयः स्मृताः ३४

गोत्राणि नामभिस्तेषां वासिष्ठानां महात्मनाम्
स्वायंभुवेऽतरेऽतीतान्यर्बुदानि शतानि च ३५
इत्येष ऋषिसर्गस्तु सानुबंधः प्रकीर्तितः
समासाद्विस्तराद्वक्तुमशक्योऽयमिति द्विजाः ३६
योऽसौ रुद्रात्मको बह्निब्रह्मणो मानसस्सुतः
स्वाहा तस्य प्रिया लेभे पुत्रांस्त्रीनमितौजसः ३७
पावकः पवमानश्च शुचिरित्येष ते त्रयः
निर्मंथ्यः पवमानस्स्याद्वैद्युतः पावकस्स्मृतः ३८
सूर्ये तपति यश्चासौ शुचिः सौर उदाहृतः
हव्यवाहः कव्यवाहः सहरक्षा इति त्रयः ३९
त्रयाणां क्रमशः पुत्रा देवपितृसुराश्च ते
एतेषां पुत्रपौत्राश्च चत्वारिंशन्नवैव ते ४०
काम्यनैमित्तिकाजस्त्रकर्मसु त्रिषु संस्थिताः
सर्वे तपस्विनो ज्ञेयाः सर्वे व्रतभृतस्तथा ४१
सर्वे रुद्रात्मकश्चैव सर्वे रुद्रपरायणाः
तस्मादग्निमुखे यत्तद्धुतं स्यादेव केनचित् ४२
तत्सर्वं रुद्रमुद्दिश्य दत्तं स्यान्नात्र संशयः
इत्येवं निश्चयोग्नीनामनुक्रांतो यथातथम् ४३
नातिविस्तरतो विप्राः पितृ-न्वक्ष्याम्यतः परम्
यस्मात्षड्तवस्तेषां स्थानं स्थानाभिमानिनाम् ४४
ऋतवः पितरस्तस्मादित्येषा वैदिकी श्रुतिः
युष्मादृतुषु सर्वे हि जायंते स्थास्नुजंगमा ४५
तस्मादेते पितर आर्तवा इति च श्रुतम्
एवं पितृ-णामेतेषामृतुकालाभिमानिनाम् ४६
आत्मैश्वर्या महात्मानस्तिष्ठंतीहाभ्रसंगमात्

अग्निष्वात्ता बर्हिषदः पितरो द्विविधाः स्मृताः ४७
अयज्वानश्च यज्वानः क्रमात्ते मृहमेधिनः
स्वधासूत पितृभ्यश्च द्वे कन्ये लोकविश्रुते ४८
मेनां च धरणीं चैव याभ्यां विश्वमिदं धृतम्
अग्निष्वात्तसुता मेना धरणी बर्हिषत्सुता ४९
मेना हिमवतः पत्नी मैनाकं क्रौंचमेव च
गौरीं गंगां च सुषुवे भवांगाश्लेषपावनीम् ५०
मेरोस्तु धरणी पत्नी दिव्यौषधिसमन्वितम्
मंदरं सुषुवे पुत्रं चित्रिसुन्दरकन्धरम् ५१
स एव मंदरः श्रीमान्मेरुपुत्रस्तपोबलात्
साक्षाच्छ्रीकंठनाथस्य शिवस्यावसथं गतः ५२
सासूता धरणी भूयस्त्रिंशत्कन्याश्च विश्रुताः
वेलां च नियतिं चैव तृतीयामपि चायतिम् ५३
आयतिर्नियतिश्चैव पत्न्यौ द्वे भृगुपुत्रयोः
स्वायंभुवेऽतरे पूर्वं कथितस्ते तदन्वयः ५४
सुषुवे सागराद्वेला कन्यामेकामनिंदिताम्
सवर्णां नाम सामुद्रीं पत्नीं प्राचीनबर्हिषः ५५
सामुद्री सुषुवे पुत्रान्दश प्राचीनबर्हिषः
सर्वे प्राचेतसा नाम धनुर्वेदस्य पारगाः ५६
येषां स्वायंभुवे दक्षः पुत्रत्वमगमत्पुरा
त्रियम्बकस्य शापेन चाक्षुषस्यांतरे मनोः ५७
इत्येते ब्रह्मपुत्राणां धर्मादीनाम्महात्मनाम्
नातिसंक्षेपतो विप्रा नाति विस्तरतः क्रमात् ५८
वर्णिता वै मया वंशा दिव्या देवगणान्विताः
क्रियावंतः प्रजावंतो महर्द्धिभिरलंकृताः ५९

प्रजानां संनिवेशोऽयं प्रजापतिसमुद्भवः
न हि शक्यः प्रसंख्यातुं वर्षकोटिशतैरपि ६०
राज्ञामपि च यो वंशो द्विधा सोऽपि प्रवर्तते
सूर्यवंशस्सोमवंश इति पुण्यतमः क्षितौ ६१
इक्ष्वाकुरम्बरीषश्च ययातिर्नाहुषादयः
पुण्यश्लोकाः श्रुता येऽत्र ते पि तद्वंशसंभवाः ६२
अन्ये च राजऋषयो नानावीर्यसमन्विता
किं तैः फलमनुत्क्रांतैरुक्तपूर्वैः पुरातनैः ६३
किं चेश्वरकथा वृत्ता यत्र तत्रान्यकीर्तनम्
न सद्भिः संमतं मत्वा नोत्सहे बहुभाषितुम् ६४
प्रसंगादीश्वरस्यैव प्रभावद्योतनादपि
सर्गादयोऽपि कथिता इत्यत्र तत्प्रविस्तरैः ६५
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
सृष्टिकथनं नाम सप्तदशोऽध्यायः १७

अध्याय १८

ऋषय ऊचुः
देवी दक्षस्य तनया त्यक्त्वा दाक्षायणी तनुम्
कथं हिमवतः पुत्री मेनायामभवत्पुरा १
कथं च निन्दितो रुद्रो दक्षेण च महात्मना
निमित्तमपि किं तत्र येन स्यान्निंदितो भवः २
उत्पन्नश्च कथं दक्षो अभिशापाद्भवस्य तु
चाक्षुषस्यांतरे पूर्वं मनोः प्रब्रूहि मारुत ३
वायुरुवाव
शृणवंतु कथयिष्यामि दक्षस्य लघुचेतसः

वृत्तं पापात्प्रमादाच्च विश्वामरविदूषणम् ४
पुरा सुरासुराः सर्वे सिद्धाश्च परमर्षयः
कदाचिद्द्रष्टुमीशानं हिमवच्छिखरं ययुः ५
तदा देवश्च देवी च दिव्यासनगतावुभौ
दर्शनं ददतुस्तेषां देवादीनां द्विजोत्तमाः ६
तदानीमेव दक्षोऽपि गतस्तत्र सहामरैः
जामातरं हरं द्रष्टुं द्रष्टुं चात्मसुतां सतीम् ७
तदात्मगौरवाद्देवो देव्या दक्षे समागते
देवादिभ्यो विशेषेण न कदाचिदभूत्स्मृतिः ८
तस्य तस्याः परं भावमज्ञातुश्चापि केवलम्
पुत्रीत्येवं विमूढस्य तस्यां वैरमजायत ९
ततस्तेनैव वैरेण विधिना च प्रचोदितः
नाजुवाह भवं दक्षो दीक्षितस्तामपि द्विषन् १०
अन्यान् १जामातरस्सर्वानाहूय स यथाक्रमम्
शतशः पुष्कलामर्चाञ्चकार च पृथक्पृथक् ११
तथा तान्संगताञ्छ्रुत्वा नारदस्य मुखात्तदा
ययौ रुद्राय रुद्राणी विज्ञाप्य भवनं पितुः १२
अथ संनिहितं दिव्यं विमानं विश्वतोमुखम्
लक्षणाढ्यं सुखारोहमतिमात्रमनोहरम् १३
तप्तजांबूनदप्रख्यं चित्ररत्नपरिष्कृतम्
मुक्तामयवितानाग्र्यं स्रग्दामसमलंकृतम् १४
तप्तकंचननिर्व्यूहं रत्नस्तंभशतावृतम्
वज्रकल्पितसोपानं विद्रुमस्तंभतोरणम् १५
पुष्पपट्टपरिस्तीर्णं चित्ररत्नमहासनम्
वज्रजालकिरच्छिद्रमच्छिद्रमणिकुट्टिमम् १६

मणिदंडमनोज्ञेन महावृषभलक्ष्मणा
अलंकृतपुरोभागमभ्रशुभ्रेण केतुना १७
रत्नकंचुकगुप्तांगैश्चित्रवेत्रकपाणिभिः
अधिष्ठितमहाद्वारमप्रधृष्यैर्गणेश्वरैः १८
मृदंगतालगीतादिवेणुवीणाविशारदैः
विदग्धवेषभाषैश्च बहुभिः स्त्रीजनैर्वृतम् १९
आरुरोह महादेवी सह प्रियसखीजनैः
चामारव्यञ्जनं तस्या वज्रदंडमनोहरे २०
गृहीत्वा रुद्रकन्ये द्वे विवीजतुरुभे शुभे
तदाचामरयोर्मध्ये देव्या वदनमाबभौ २१
अन्योन्यं युध्यतोर्मध्ये हंसयोरिव पंकजम्
छत्रं शशिनिभं तस्याश्चूडोपरि सुमालिनी २२
धृतमुक्तापरिक्षिप्तं बभार प्रेमनिर्भरा
तच्छत्रमुज्ज्वलं देव्या रुरुचे वदनोपरि २३
उपर्यमृतभांडस्य मंडलं शशिनो यथा
अथ चाग्रे समासीना सुस्मितास्या शुभावती २४
अक्षद्यूतविनोदेन रमयामास वै सतीम्
सुयशाः पादुके देव्याश्शुभे रत्नपरिष्कृते २५
स्तनयोरंतरे कृत्वा तदा देवीमसेवतः
अन्या कांचनचार्वंगी दीप्तं जग्राह दर्पणम् २६
अपरा तालवृन्तं च परा तांबूलपेटिकाम्
काचित्क्रीडाशुकं चारु करेऽकुरुत भामिनी २७
काचित्तु सुमनोज्ञानि पुष्पाणि सुरभीणि च
काचिदाभरणाधारं बभार कमलेक्षणा २८
काचिच्च पुनरालेपं सुप्रसूतं शुभांजनम्

अन्याश्च सदृशास्तास्ता यथास्वमुचितक्रियाः २९
आवृत्त्या तां महादेवीमसेवंत समंततः
अतीव शुशुभे तासामंतरे परमेश्वरी ३०
तारापरिषदो मध्ये चंद्रलेखेव शारदी
ततः शंखसमुत्थस्य नादस्य समनंतरम् ३१
प्रास्थानिको महानादः पटहः समताडयत
ततो मधुरवाद्यानि सह तालोद्यतैस्स्वनैः ३२
अनाहतानि सन्नेदुः काहलानां शतानि च
सायुधानां गणेशानां महेशसमतेजसाम् ३३
सहस्राणि शतान्यष्टौ तदानीं पुरतो ययुः
तेषां मध्ये वृषारूढो गजारूढो यथा गुरुः ३४
जगाम गणपः श्रीमान् सोमनंदीश्वरार्चितः
देवदुंदुभयो नेदुर्दिवि दिव्यसुखा घनाः ३५
ननृतुर्मुनयस्सर्वे मुमुदुः सिद्धयोगिनः
ससृजुः पुष्पवृष्टिं च वितानोपरि वारिदाः ३६
तदा देवगणैश्चान्यैः पथि सर्वत्र संगता
क्षणादिव पितुर्गेहं प्रविवेश महेश्वरी ३७
तां दृष्ट्वा कुपितो दक्षश्चात्मनः क्षयकारणात्
तस्या यवीयसीभ्योऽपि चक्रे पूजाम सत्कृताम् ३८
तदा शशिमुखी देवी पितरं सदसि स्थितम्
अंबिका युक्तमव्यग्रमुवाचाकृपणं वचः ३९
देव्युवाच
ब्रह्मादयः पिशाचांता यस्याज्ञावशवर्तिनः
स देवस्सांप्रतं तात विधिना नार्चितः किल ४०
तदास्तां मम ज्यायस्याः पुत्र्याः पूजां किमीदृशीम्

असत्कृतामवज्ञाय कृतवानसि गर्हितम् ४१
एवमुक्तोऽब्रवीदेनां दक्षः क्रोधादमर्षितः
त्वत्तः श्रेष्ठा विशिष्टाश्च पूज्या बालाः सुता मम ४२
तासां तु ये च भर्त्तारस्ते मे बहुमता मुदा
गुनैश्चाप्यधिकास्सर्वैर्भर्तुस्ते त्र्यंबकादपि ४३
स्तब्धात्मा तामसश्शर्वस्त्वमिमं समुपाश्रिता
तेन त्वामवमन्येऽहं प्रतिकूलो हि मे भवः ४४
तथोक्ता पितरं दक्षं क्रुद्धा देवी तमब्रवीत्
शृणवतामेव सर्वेषां ये यज्ञसदसि स्थिताः ४५
अकस्मान्मम भर्तारमजाताशेषदूषणम्
वाचा दूषयसे दक्ष साक्षाल्लोकमहेश्वरम् ४६
विद्याचौरो गुरुद्रोही वेदेश्वरविदूषकः
त एते बहुपाप्मानस्सर्वे दंड्या इति श्रुतिः ४७
तस्मादत्युत्कटस्यास्य पापस्य सदृशो भृशम्
सहसा दारुणो दंडस्तव दैवाद्भविष्यति ४८
त्वया न पूजितो यस्माद्देवदेवस्त्रियंबकः
तस्मात्तव कुलं दुष्टं नष्टमित्यवधारय ४९
इत्युक्त्वा पितरं रुष्टा सती संत्यक्तसाध्वसा
तदीयां च तनुं त्यक्त्वा हिमवंतं ययौ गिरिम् ५०
स पर्वतपरः श्रीमाँल्लब्धपुण्यफलोदयः
तदर्थमेव कृतवान् सुचिरं दुश्चरं तपः ५१
तस्मात्तमनुगृह्णाति भूधरेश्वरमीश्वरी
स्वेच्छया पितरं चक्रे स्वात्मनो योगमायया ५२
यदा गता सती दक्षं विनिंद्य भयविह्वला
तदा तिरोहिता मंत्रा विहतश्च ततोऽध्वरः ५३

तदुपश्रुत्य गमनं देव्यास्त्रिपुरमर्दनः
दक्षाय च ऋषिभ्यश्च चुकोप च शशाप तान् ५४
यस्मादवमता दक्षमत्कृतेऽनागसा सती
पूजिताश्चेतराः सर्वाः स्वसुता भर्तृभिः सह ५५
वैवस्वतेऽतरे तस्मात्तव जामातरस्त्वमी
उत्पत्स्यंते समं सर्वे ब्रह्मयज्ञेष्वयोनिजाः ५६
भविता मानुषो राजा चाक्षुषस्य त्वमन्वये
प्राचीनबर्हिषः पौत्रः पुत्रश्चापि प्रचेतसः ५७
अहं तत्रापि ते विघ्नमाचरिष्यामि दुर्मते
धर्मार्थकामयुक्तेषु कर्मस्वपि पुनः पुनः ५८
तेनैवं व्याहृतो दक्षो रुद्रेणामिततेजसा
स्वायंभुवीं तनुं त्यक्त्वा पपात भुवि दुःखितः ५९
ततः प्राचेतसो दक्षो जज्ञे वै चाक्षुषेऽन्तरे
प्राचीनबर्हिषः पौत्रः पुत्रश्चैव प्रचेतसाम् ६०
भृग्वादयोऽपि जाता वै मनोर्वैवस्वतस्य तु
अंतरे ब्रह्मणो यज्ञे वारुणीं बिभ्रतस्तनुम् ६१
तदा दक्षस्य धर्मार्थं यज्ञे तस्य दुरात्मनः
महेशः कृतवान्विघ्नं मना ववस्वते सति ६२

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
सतीदेहत्यागो नामाष्टादशोऽध्यायः १८

अध्याय १९

ऋषय ऊचुः
कथं दक्षस्य धर्मार्थं प्रवृत्तस्य दुरात्मनः
महेशः कृतवान् विघ्नमेतदिच्छाम वेदितुम् १

वायुरुवाच
विश्वस्य जगतो मातुरपि देव्यास्तपोबलात्
पितृभावमुपागम्य मुदिते हिमवद्गिरौ २
देवेऽपि तत्कृतोद्वाहे हिमवच्छिखरालये
संक्रीडति तया सार्द्धं काले बहुतरे गते ३
वैवस्वतेऽतरे प्राप्ते दक्षः प्राचेतसः स्वयम्
अश्वमेधेन यज्ञेन यक्ष्यमाणोऽन्वपद्यत ४
ततो हिमवतः पृष्ठे दक्षो वै यज्ञमाहरत्
गंगाद्वारे शुभे देशे ऋषिसिद्धनिषेविते ५
तस्य तस्मिन्मखेदेवाः सर्वे शक्र पुरोगमाः
गमनाय समागम्य बुद्धिमापेदिरे तदा ६
आदित्या वसवो रुद्रास्साध्यास्सह मरुद्गणैः
ऊष्मपाः सोमपाश्चैव आज्यपा धूमपास्तथा ७
अश्विनौ पितरश्चैव तथा चान्ये महर्षयः
विष्णुना सहिताः सर्वे स्वागता यज्ञभागिनः ८
दृष्ट्वा देवकुलं सर्वमीश्वरेण विनागतम्
दधीचो मन्युनाविष्टो दक्षमेवमभाषत ९
दधीच उवाच
अप्रपूज्ये चैव पूजा पूज्यानां चाप्य पूजने
नरः पापमवाप्नोति महद्वै नात्र संशयः १०
असतां संमतिर्यत्र सतामवमतिस्तथा
दंडो देवकृतस्तत्र सद्यः पतति दारुणः ११
एवमुक्त्वा तु विप्रर्षिः पुनर्दक्षमभाषत
पूज्यं तु पशुभर्तारं कस्मान्नार्चयसे प्रभुम् १२
दक्ष उवाच

संति मे बहवो रुद्राः शूलहस्ताः कपर्दिनः
एकादशावस्थिता ये नान्यं वेद्मि महेश्वरम् १३
दधीच उवाच
किमेभिरमरैरन्यैः पूजितैरध्वरे फलम्
राजा चेदध्वरस्यास्य न रुद्रः पूज्यते त्वया १४
ब्रह्मविष्णुमहेशानां स्त्रष्टा यः प्रभुरव्ययः
ब्रह्मादयः पिशाचांता यस्य कैंकर्यवादिनः १५
प्रकृतीनां परश्चैव पुरुषस्य च यः परः
चिंत्यते योगविद्वद्भि ऋषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः १६
अक्षरं परमं ब्रह्म ह्यसच्च सदसच्च यत्
अनादिमध्यनिधनमप्रतर्क्यं सनातनम् १७
यः स्त्रष्टा चैव संहर्ता भर्ता चैव महेश्वरः
तस्मादन्यं न पश्यामि शंकरात्मानमध्वरे १८
दक्ष उवाच
एतन्मखेशस्य सुवर्णपात्रे हविः समस्तं विधिमंत्रपूतम्
विष्णोर्नयाम्यप्रतिमस्य भागं प्रभोर्विभज्यावहनीयमद्य १९
दधीच उवाच
यस्मान्नाराधितो रुद्रस्सर्वदेवेश्वरेश्वरः
तस्माद्दक्ष तवाशेषो यज्ञोऽयं न भविष्यति २०
इत्युक्त्वा वचनं क्रुद्धो दधीचो मुनिसत्तमः
निर्गम्य च ततो देशाज्जगाम स्वकमाश्रमम् २१
निर्गतेऽपि मुनौ तस्मिन्देवा दक्षं न तत्यजुः
अवश्यमनुभावित्वादनर्थस्य तु भाविनः २२
एतस्मिन्नेव काले तु ज्ञात्वैतत्सर्वमीश्वरात्
दग्धुं दक्षाध्वरं विप्रा देवी देवमचोदयत् २३

देव्या संचोदितो देवो दक्षाध्वरजिघांसया
ससर्ज सहसा वीरं वीरभद्रं गणेश्वरम् २४
सहस्रवदनं देवं सहस्रकमलेक्षणम्
सहस्रमुद्गरधरं सहस्रशरपाणिकम् २५
शूलटंकगदाहस्तं दीप्तकार्मुकधारिणम्
चक्रवज्रधरं घोरं चंद्रार्द्धकृतशेखरम् २६
कुलिशोद्योतितकरं तडिज्ज्वलितमूर्द्धजम्
दंष्ट्राकरालं बिभ्राणं महावक्त्रं महोदरम् २७
विद्युज्जिह्वं प्रलंबोष्ठं मेघसागरनिःस्वनम्
वसानं चर्म वैयाघ्रं महद्रुधिरनिस्रवम् २८
गण्डद्वितयसंसृष्टमण्डलीकृतकुण्डलम्
वरामरशिरोमालावलीकलितशेखरम् २९
रणन्नूपुरकेयूरमहाकनकभूषितम्
रत्नसंचयसंदीप्तं तारहारावृतोरसम् ३०
महाशरभशार्दूलसिंहैः सदृशविक्रमम्
प्रशस्तमत्तमातंगसमानगमनालसम् ३१
शंखचामरकुंदेन्दुमृणालसदृशप्रभम्
सतुषारमिवाद्रीन्द्रं साक्षाज्जंगमतां गतम् ३२
ज्वालामालापरिक्षिप्तं दीप्तमौक्तिकभूषणम्
तेजसा चैव दीव्यंतं युगांत इव पावकम् ३३
स जानुभ्यां महीं गत्वा प्रणतः प्रांजलिस्ततः
पार्श्वतो देवदेवस्य पर्य्यतिष्ठद्गणेश्वरः ३४
मन्युना चासृजद्भद्रां भद्रकालीं महेश्वरीम्
आत्मनः कर्मसाक्षित्वे तेन गंतुं सहैव तु ३५
तं दृष्ट्वावस्थितं वीरभद्रं कालाग्निसन्निभम्

भद्रया सहितं प्राह भद्रमस्त्विति शंकरः ३६
स च विज्ञापयामास सह देव्या महेश्वरम्
आज्ञापय महादेव किं कार्यं करवाणयहम् ३७
ततस्त्रिपुरहा प्राह हैमवत्याः प्रियेच्छया
वीरभद्रं महाबाहुं वाचा विपुलनादया ३८
देवदेव उवाच
प्राचेतसस्य दक्षस्य यज्ञं सद्यो विनाशय
भद्रकाल्या सहासि त्वमेतत्कृत्यं गणेश्वर ३९
अहमप्यनया सार्द्धं रैभ्याश्रमसपीपतः
स्थित्वा वीक्षे गणेशान विक्रमं तव दुःसहम् ४०
वृक्षा कनखले ये तु गंगाद्वारसमीपगाः
सुवर्णशृंगस्य गिरेर्मेरुमंदरसंनिभाः ४१
तस्मिन्प्रदेशे दक्षस्य युज्ञः संप्रति वर्तते
सहसा तस्य यज्ञस्य विघातं कुरु मा चिरम् ४२
इत्युक्ते सति देवेन देवी हिमगिरीन्द्रजा
भद्रं भद्रं च संप्रेक्ष्य वत्सं धेनुरिवौरसम् ४३
आलिंग्य च समाघ्राय मूर्ध्नि षड्वदनं यथा
सस्मिता वचनं प्राह मधुरं मधुरं स्वयम् ४४
देव्युवाच
वत्स भद्र महाभाग महाबलपराक्रम
मत्प्रियार्थं त्वमुत्पन्नो मम मन्युं प्रमार्जक ४५
यज्ञेश्वरमनाहूय यज्ञकर्मरतोऽभवत्
दक्षं वैरेण तं तस्माद्भिंधि यज्ञं गणेश्वर ४६
यज्ञलक्ष्मीमलक्ष्मीं त्वं भद्र कृत्वा ममाज्ञया
यजमानं च तं हत्वा वत्स हिंसय भद्रया ४७

अशेषामिव तामाज्ञां शिवयोश्चित्रकृत्ययोः
मूर्ध्नि कृत्वा नमस्कृत्य भद्रो गंतुं प्रचक्रमे ४८
अथैष भगवान्क्रुद्धः प्रेतावासकृतालयः
वीरभद्रो महादेवो देव्या मन्युप्रमार्जकः ४९
ससर्ज रोमकूपेभ्यो रोमजाख्यान्गणेश्वरान्
दक्षिणाद्भुजदेशात्तु शतकोटिगविश्वरान् ५०
पादात्तथोरुदेशाच्च पृष्ठात्पार्श्वान्मुखाद्गलात्
गुह्याद्गुल्फाच्छिरोमध्यात्कंठादास्यात्तथोदरात् ५१
तदा गणेश्वरैर्भद्रैर्भद्रतुल्यपराक्रमैः
संछादितमभूत्सर्वं साकाशविवरं जगत् ५२
सर्वे सहस्रहस्तास्ते सहस्रायुधपाणयः
रुद्रस्यानुचरास्सर्वे सर्वे रुद्रसमप्रभाः ५३
शूलशक्तिगदाहस्ताष्टंकोपलशिलाधराः
कालाग्निरुद्रसदृशास्त्रिनेत्राश्च जटाधराः ५४
निपेतुर्भृशमाकाशे शतशस्सिंहवाहनाः
विनेदुश्च महानादाञ्जलदा इव भद्रजाः ५५
तैर्भद्रैर्भगवान्भद्रस्तथा परिवृतो बभौ
कालानलशतैर्युक्तो यथांते कालभैरवः ५६
तेषां मध्ये समारुह्य वृषेंद्रं वृषभध्वजः
जगाम भगवान्भद्रश्शुभमभ्रं यथा भवः ५७
तस्मिन्वृषभमारूढे भद्रे तु भसितप्रभः
बभार मौक्तिकं छत्रं गृहीतसितचामरः ५८
स तदा शुशुभे पार्श्वे भद्रस्य भसितप्रभः
भगवानिव शैलेन्द्रः पार्श्वे विश्वजगद्गुरोः ५९
सोऽपि तेन बभौ भद्रः श्वेतचामरपाणिना

बालसोमेन सौम्येन यथा शूलवरायुधः ६०
दध्मौ शंखं सितं भद्रं भद्रस्य पुरतः शुभम्
भानुकंपो महातेजा हेमरत्नैरलंकृतः ६१
देवदुंदुभयो नेदुर्दिव्यसंकुलनिःस्वनाः
ववृषुश्शतशो मूर्ध्नि पुष्पवर्षं बलाहकाः ६२
फुल्लानां मधुगर्भाणां पुष्पाणां गंधबंधवः
मार्गानुकूलसंवाहा वबुश्च पथि मारुताः ६३
ततो गणेश्वराः सर्वे मत्ता युद्धबलोद्धताः
ननृतुर्मुमुदुर् १नेदुर्जहसुर्जगदुर्जगुः ६४
तदा भद्रगणांतःस्थो बभौ भद्रः स भद्रया
यथा रुद्रगणांतः स्थस्त्र्यम्बकोंबिकया सह ६५
तत्क्षणादेव दक्षस्य यज्ञवाटं रणमयम्
प्रविवेश महाबाहुर्वीरभद्रो महानुगः ६६
ततस्तु दक्षप्रतिपादितस्य क्रतुप्रधानस्य गणप्रधानः
प्रयोगभूमिं प्रविवेश भद्रो रुद्रो यथांते भुवनं दिधक्षुः ६७
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
वीरभद्रोत्पत्तिवर्णनं नामैकोनविंशोऽध्यायः १९

अध्याय २०

वायुरुवाच
ततो विष्णुप्रधानानां सुराणाममितौजसाम्
ददर्श च महत्सत्रं चित्रध्वजपरिच्छदम् १
सुदर्भास्तृतसंस्तीर्णं सुसमिद्धहुताशनम्
कांचनैर्यज्ञभांडैश्च भ्राजिष्णुभिरलंकृतम् २
ऋषिभिर्यज्ञपटुभिर्यथावत्कर्मकर्तृभिः

विधिना वेददृष्टेन स्वनुष्ठितबहुक्रमम् ३
देवांगनासहस्राढ्यमप्सरोगणसेवितम्
वेणुवीणारवैर्जुष्टं वेदघोषैश्च बृंहितम् ४
दृष्ट्वा दक्षाध्वरे वीरो वीरभद्रः प्रतापवान्
सिंहनादं तदा चक्रे गंभीरो जलदो यथा ५
ततः किलकिलाशब्द आकाशं पूरयन्निव
गणेश्वरैः कृतो जज्ञे महान्नयक्कृतसागरः ६
तेन शब्देन महताः ग्रस्ता सर्वेदिवौकसः
दुद्रुवुः परितो भीताः स्रस्तवस्त्रविभूषणाः ७
किंस्विद्भग्नो महामेरुः किंस्वित्संदीर्यते मही
किमिदं किमिदं वेति जजल्पुस्त्रिदशा भृशम् ८
मृगेन्द्राणां यथा नादं गजेंद्रा गहने वने
श्रुत्वा तथाविधं केचित्तत्यजुर्जीवितं भयात् ९
पर्वताश्च व्यशीर्यंत चकम्पे च वसुंधरा
मरुतश्च व्यघूर्णंत चुक्षुभे मकरालयः १०
अग्नयो नैव दीप्यंते न च दीप्यति भास्करः
ग्रहाश्च न प्रकाशंते नक्षत्राणि च तारकाः ११
एतस्मिन्नेव काले तु यज्ञवाटं तदुज्ज्वलम्
संप्राप भगवान्भद्रो भद्रैश्च सह भद्रया १२
तं दृष्ट्वा भीतभीतोऽपि दक्षो दृढ इव स्थितः
क्रुद्धवद्वचनं प्राह को भवान् किमिहेच्छसि १३
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा दक्षस्य च दुरात्मनः
वीरभद्रो महातेजा मेघसंभीरनिस्स्वनः १४
स्मयन्निव तमालोक्य दक्षं देवाश्च ऋत्विजः
अर्थगर्भमसंभ्रान्तमवोचदुचितं वचः १५

वीरभद्र उवाच
वयं ह्यनुचराः सर्वे शर्वस्यामिततेजसः
भागाभिलिप्सया प्राप्ता भागो नस्संप्रदीयताम् १६
अथ चेदध्वरेऽस्माकं न भागः परिकल्पितः
कथ्यतां कारणं तत्र युध्यतां वा मयामरैः १७
इत्युक्तास्ते गणेंद्रेण देवा दक्षपुरोगमाः
ऊचुर्मन्त्राः प्रमाणं नो न वयं प्रभवस्त्विति १८
मन्त्रा ऊचुस्सुरा यूयं मोहोपहतचेतसः
येन प्रथमभागार्हं न यजध्वं महेश्वरम् १९
मंत्रोक्ता अपि ते देवाः सर्वे संमूढचेतसः
भद्राय न ददुर्भागं तत्प्रहाणमभीप्सवः २०
यदा तथ्यं च पथ्यं च स्ववाक्यं तद्वृथाऽभवत्
तदा ततो ययुर्मंदा ब्रह्मलोकं सनातनम् २१
अथोवाच गणाध्यक्षो देवान्विष्णुपुरोगमान्
मन्त्राः प्रमाणं न कृता युष्माभिर्बलगर्वितैः २२
यस्मादस्मिन् मखे देवैरित्थं वयमसत्कृताः
तस्माद्वो जीवितैस्सार्द्धमपनेष्यामि गर्वितम् २३
इत्युक्त्वा भगवान् क्रुद्धो व्यदहन्नेत्रवह्निना
यक्षवाटं महाकूटं यथातिस्त्रः पुरो हरः २४
ततो गणेश्वरास्सर्वे पर्वतोदग्रविग्रहाः
यूपानुत्पाट्य होतृ-णां कंठेष्वाबध्य रज्जुभिः २५
यज्ञपात्राणि चित्राणि भित्त्वा संचूर्ण्य वारिणि
गृहीत्वा चैव यज्ञांगं गंगास्त्रोतसि चिक्षिपुः २६
तत्र दिव्यान्नपानानां राशयः पर्वतोपमाः
क्षीरनद्योऽमृतस्त्रावाः सुस्निग्धदधिकर्दमाः २७

उच्चावचानि मांसानि भक्ष्याणि सुरभीणि च
रसवन्ति च पानानि लेह्यचोष्याणि तानि वै २८
वीरास्तद्भुजते वक्त्रैर्विलुंपंति क्षिपंति च
वज्रैश्चक्रैर्महाशूलैश्शक्तिभिः पाशपट्टिशैः २९
मुसलैरसिभिष्टंकैर्भिंधिपालैः परश्वधैः
उद्धतांस्त्रिदशान्सर्वाँल्लोकपालपुरस्सरान् ३०
बिभिदुर्बलिनो वीरा वीरभद्रांगसंभवाः
छिंधि भिंधि क्षिप क्षिप्रं मार्यतां दार्यतामिति ३१
हरस्व प्रहरस्वेति पाटयोत्पाटयेति च
संरंभप्रभवाः क्रूराश्शब्दाः श्रवणशंकवः ३२
यत्रतत्र गणेशानां जज्ञिरे समरोचिताः
विवृत्तनयनाः केचिद्दष्टदंष्ट्रोष्ठतालवः ३३
आश्रमस्थान्समाकृष्य मारयन्ति तपोधनात्
स्रुवानपहरन्तश्च क्षिपन्तोग्निं जलेषु च ३४
कलशानपि भिन्दंतश्छिंदंतो मणिवेदिकाः
गायंतश्च नदन्तश्च हसन्तश्च मुहुर्मुहुः ३५
रक्तासवं पिबन्तश्च ननृतुर्गणपुंगवाः
निर्मथ्य सेंद्रानमरान् गणेन्द्रान्वृषेन्द्रनागेन्द्रमृगेन्द्रसाराः ३६
चक्रुर्बहून्यप्रतिमभावाः सहर्षरोमाणि विचेष्टितानि
नन्दंति केचित्प्रहरन्ति केचिद्धावन्ति केचित्प्रलपन्ति केचित् ३७
नृत्यन्ति केचिद्विहसन्ति केचिद्वल्गन्ति केचित्प्रमथा बलेन ३८
केचिज्जिघृक्षंति घनान्स तोयान्केचिद्ग्रहीतुं रविमुत्पतंति
केचित्प्रसर्तुं पवनेन सार्द्धमिच्छंति भीमाः प्रमथा वियत्स्थाः ३९
आक्षिप्य केचिच्च वरायुधानि महा भुजंगानिव वैनतेयाः
भ्रमंति देवानपि विद्रवंतः खमंडले पर्वतकूटकल्पाः ४०

उत्पाटय चोत्पाटयगृहाणि केचित्सजालवातायनवेदिकानि
विक्षिप्य विक्षिप्य जलस्य मध्ये कालांबुदाभाः प्रमथा निनेदुः ४१
उद्वर्तितद्वारकपाटकुडयं विध्वस्तशालावलभीगवाक्षम्
अहो बताभज्यत यज्ञवाटमनाथवद्वाक्यमिवायथार्थम् ४२
हा नाथ तातेति पितुः सुतेति भ्रतर्ममाम्बेति च मातुलेति
उत्पाटयमानेषु गृहेषु नार्यो ह्यानाथशब्दान्बहुशः प्रचक्रुः ४३
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
यज्ञविध्वंसनो नाम विंशोऽध्यायः २०

अध्याय २१

वायुरुवाच
ततस्त्रिदशमुख्यास्ते विष्णुशक्रपुरोगमाः
सर्वे भयपरित्रस्तादुद्रुवुर्भयविह्वलाः १
निजैरदूषितैरंगैर्दृष्ट्वा देवानुपद्रुतान्
दंडयानदंडितान्मत्वा चुकोप गणपुंगवः २
ततस्त्रिशूलमादाय शर्वशक्तिनिबर्हणम्
ऊर्ध्वदृष्टिर्महाबाहुर्मुखाज्ज्वालाः समुत्सृजन् ३
अमरानपि दुद्राव द्विरदानिव केसरी
तानभिद्रवतस्तस्य गमनं सुमनोहरम् ४
वारणस्येव मत्तस्य जगाम प्रेक्षणीयताम्
ततस्तत्क्षोभयामास महत्सुरबलं बली ५
महासरोवरं यद्वन्मत्तो वारणयूथपः
विकुर्वन्बहुधावर्णान्नीलपांडुरलोहितान् ६
विभ्रद्वयाघ्राजिनं वासो हेमप्रवरतारकम्
छिन्दन्भिन्दन्नुद १क्लिन्दन्दारयन्प्रमथन्नपि ७

व्यचरद्देवसंघेषु भद्रोऽग्निरिव कक्षगः
तत्र तत्र महावेगाच्चरंतं शूलधारिणम् ८
तमेकं त्रिदशाः सर्वे सहस्रमिव मेनिरे
भद्रकाली च संक्रुद्धा युद्धवृद्धमदोद्धता ९
मुक्तज्वालेन शूलेन निर्बिभेद रणे सुरान्
स तया रुरुचे भद्रो रुद्रकोपसमुद्भवः १०
प्रभयेव युगांताग्निश्चलया धूमधूम्रया
भद्रकाली तदायुद्धे विद्रुतत्रिदशाबभौ ११
कल्पे शेषानलज्वालादग्धाविश्वजगद्यथा
तदा सवाजिनं सूर्यं रुद्रान्रुद्रगणाग्रणीः १२
भद्रो मूर्ध्नि जघानाशु वामपादेन लीलया
असिभिः पावकं भद्रः पट्टिशैस्तु यमं यमी १३
रुद्रान्दृढेन शूलेन मुद्गरैर्वरुणं दृढैः
परिघैर्निर्ऋतिं वायुं टंकैष्टंकधरः स्वयम् १४
निर्बिभेद रणे वीरो लीलयैव गणेश्वरः
सर्वान्देवगणान्सद्यो मुनीञ्छंभोर्विरोधिनः १५
ततो देवः सरस्वत्या नासिकाग्रं सुशोभनम्
चिच्छेद करजाग्रेण देवमातुस्तथैव च १६
चिच्छेद च कुठारेण बाहुदंडं विभावसोः
अग्रतो द्व्यंगुलां जिह्वां मातुर्देव्या लुलाव च १७
स्वाहादेव्यास्तथा देवो दक्षिणं नासिकापुटम्
चकर्त करजाग्रेण वामं च स्तनचूचुकम् १८
भगस्य विपुले नेत्रे शतपत्रसमप्रभे
प्रसह्योत्पाटयामास भद्रः परमवेगवान् १९
पूष्णो दशनरेखां च दीप्तां मुक्तावलीमिव

जघान धनुषः कोटया स तेनास्पष्टवागभूत् २०
ततश्चंद्रमसं देवः पादांगुष्ठेन लीलया
क्षणं कृमिवदाक्रम्य घर्षयामास भूतले २१
शिरश्चिच्छेद दक्षस्य भद्रः परमकोपतः
क्रोशंत्यामेव वैरिण्यां भद्रकाल्यै ददौ च तत् २२
तत्प्रहृष्टा समादाय शिरस्तालफलोपमम्
सा देवी कंडुकक्रीडां चकार समरांगणे २३
ततो दक्षस्य यज्ञस्त्री कुशीला भर्तृभिर्यथा
पादाभ्यां चैव हस्ताभ्यां हन्यते स्म गणेश्वरैः २४
अरिष्टनेमिने सोमं धर्मं चैव प्रजापतिम्
बहुपुत्रं चांगिरसं कृशाश्वं कश्यपं तथा २५
गले प्रगृह्य बलिनो गणपाः सिंहविक्रमाः
भर्त्सयंतो भृशं वाग्भिर्निर्जघ्नुर्मूर्ध्नि मुष्टिभिः २६
धर्षिता भूतवेतालैर्दारास्सुतपरिग्रहाः
यथा कलियुगे जारैर्बलेन कुलयोषितः २७
तच्च विध्वस्तकलशं भग्नयूपं गतोत्सवम्
प्रदीपितमहाशालं प्रभिन्नद्वारतोरणम् २८
उत्पाटितसुरानीकं हन्यमानं तपोधनम्
प्रशान्तब्रह्मनिर्घोषं प्रक्षीणजनसंचयम् २९
क्रन्दमानातुरस्त्रीकं हताशेषपरिच्छदम्
शून्यारण्यनिभं जज्ञे यज्ञवाटं तदार्दितम् ३०
शूलवेगप्ररुग्णाश्च भिन्नबाहूरुवक्षसः
विनिकृत्तोत्तमांगाश्च पेतुरुर्व्यां सुरोत्तमाः ३१
हतेषु तेषु देवेषु पतितेषुः सहस्रशः
प्रविवेश गणेशानः क्षणादाहवनीयकम् ३२

प्रविष्टमथ तं दृष्ट्वा भद्रं कालाग्निसंनिभम्
दुद्राव मरणाद्भीतो यज्ञो मृगवपुर्धरः ३३
स विस्फार्य्य महच्चापं दृढज्याघोषणभीषणम्
भद्रस्तमभिदुद्राव विक्षिपन्नेव सायकान् ३४
आकर्णपूर्णमाकृष्टं धनुरम्बुदसंनिभम्
नादयामास च ज्यां द्यां खं च भूमिं च सर्वशः ३५
तमुपश्रित्य सन्नादं हतोऽस्मीत्येव विह्वलम्
शरणार्धेन वक्रेण स वीरोऽध्वरपूरुषम् ३६
महाभयस्खलत्पादं वेपन्तं विगतत्विषम्
मृगरूपेण धावन्तं विशिरस्कं तदाकरोत् ३७
तमीदृशमवज्ञातं दृष्ट्वा वै सूर्यसंभवम्
विष्णुः परमसंक्रुद्धो युद्धायाभवदुद्यतः ३८
तमुवाह महावेगात्स्कन्धेन नतसंधिना
सर्वेषां वयसां राजा गरुडः पन्नगाशनः ३९
देवाश्च हतशिष्टा ये देवराजपुरोगमाः
प्रचक्रुस्तस्य साहाय्यं प्राणांस्त्यक्तुमिवोद्यताः ४०
विष्णुना सहितान्देवान्मृगेन्द्रः क्रोष्टुकानिव
दृष्ट्वा जहास भूतेन्द्रो मृगेन्द्र इव विव्यथः ४१
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
देवदंडवर्णनं नामैकविंशोऽध्यायः २१

अध्याय २२

तस्मिन्नवसरे व्योम्नि समाविरभवद्रथः
सहस्रसूर्यसंकाशश्चारुचीरवृषध्वजः १
अश्वरत्नद्वयोदारो रथचक्रचतुष्टयः

सञ्चितानेकदिव्यास्त्रशस्त्ररत्नपरिष्कृतः २
तस्यापि रथवर्यस्य स्यात्स एव हि सारथिः
यथा च त्रैपुरे युद्धे पूर्वं शार्वरथे स्थितः ३
स तं रथवरं ब्रह्मा शासनादेव शूलिनः
हरेस्समीपमानीय कृताञ्जलिरभाषत ४
भगवन्भद्र भद्रांग भगवानिन्दुभूषणः
आज्ञापयति वीरस्त्वां रथमारोढुमव्ययः ५
रेभ्याश्रमसमीपस्थस्त्र्यंबकोऽबिकया सह
सम्पश्यते महाबाहो दुस्सहं ते पराक्रमम् ६
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा स वीरो गणकुञ्जरः
आरुरोह रथं दिव्यमनुगृह्य पितामहम् ७
तथा रथवरे तस्मिन्स्थिते ब्रह्मणि सारथौ
भद्रस्य ववृधे लक्ष्मी रुद्रस्येव पुरद्विषः ८
ततः शंखवरं दीप्तं पूर्णचंद्रसमप्रभम्
प्रदध्मौ वदने कृत्वा भानुकंपो महाबलः ९
तस्य शंखस्य तं नादं भिन्नसारससन्निभम्
श्रुत्वा भयेन देवानां जज्वाल जठरानलः १०
यक्षविद्याधराहीन्द्रैः सिद्धैर्युद्धदिदृक्षुभिः
क्षणेन निबडीभूताः साकाशविवरा दिशाः ११
ततः शार्ङ्गेण चापाण्कात्स नारायणनीरदः
महता बाणवर्षेण तुतोद गणगोवृषम् १२
तं दृष्ट्वा विष्णुमायांतं शतधा बाणवर्षिणम्
स चाददे धनुर्जैत्रं भद्रो बाणसहस्रमुक् १३
समादाय च तद्दिव्यं धनुस्समरभैरवम्
शनैर्विस्फारयामास मेरुं धनुरिवेश्वरः १४

तस्य विस्फार्य्यमाणस्य धनुषोऽभून्महास्वनः
तेन स्वनेन महता पृथिवीं समकंपयत् १५
ततः शरवरं घोरं दीप्तमाशीविषोपमम्
जग्राह गणपः श्रीमान्स्वयमुग्रपराक्रमः १६
बाणोद्धारे भुजो ह्यस्य तूणीवदनसंगतः
प्रत्यदृश्यत वल्मीकं विविक्षुरिव पन्नगः १७
समुद्धृतः करे तस्य तत्क्षणं रुरुचे शरेः
महाभुजंगसंदष्टो यथा बालभुजण्गमः १८
शरेण घनतीव्रेण भद्रो रुद्रपराक्रमः
विव्याध कुपितो गाढं ललाटे विष्णुमव्ययम् १९
ललाटेऽभिहितो विष्णुः पूर्वमेवावमानितः
चुकोप गणपेंद्राय मृगेंद्रायेव गोवृषः २०
ततस्त्वशनिकल्पेन क्रूरास्येन महेषुणा
विव्याध गणराजस्य भुजे भुजगसन्निभे २१
सोऽपि तस्य भुजे भूयः सूर्यायुतसमप्रभम्
विससर्ज शरं वेगाद्वीरभद्रो महाबलः २२
स च विष्णुः पुनर्भद्रं भद्रो विष्णुं तथा पुनः
स च तं स च तं विप्राश्शरैस्तावनुजघ्नतुः २३
तयोः परस्परं वेगाच्छरानाशु विमुंचतोः
द्वयोस्समभवद्युद्धं तुमुलं रोमहर्षणम् २४
तद्दृष्ट्वा तुमुलं युद्धं तयोरेव परस्परम्
हाहाकारो महानासीदाकाशे खेचरेरितः २५
ततस्त्वनलतुंडेन शरेणादित्यवर्चसा
विव्याध सुदृढं भद्रो विष्णोर्महति वक्षसि २६
स तु तीव्रप्रपातेन शरेण दृढमाहतः

महतीं रुजमासाद्य निपपात विमोहितः २७
पुनः क्षणादिवोत्थाय लब्धसंज्ञस्तदा हरिः
सर्वाण्यपि च दिव्यास्त्राण्यथैनं प्रत्यवासृजत् २८
स च विष्णुर्धनुर्मुक्तान्सर्वाञ्छर्वचमूपतिः
सहसा वारयामास घोरैः प्रतिशरैः शरान् २९
ततो विष्णुस्स्वनामांकं बाणमव्याहतं क्वचित्
ससर्ज क्रोधरक्ताक्षस्तमुद्दिश्य गणेश्वरम्
तं बाणं बाणवर्येण भद्रो भद्राह्वयेण तु ३०
अप्राप्तमेव भगवाञ्चिच्छेद शतधा पथि
अथैकेनेषुणा शार्ङ्गं द्वाभ्यां पक्षौ गरुत्मतः ३१
निमेषादेव चिच्छेद तदद्भुतमिवाभवत्
ततो योगबलाद्विष्णुर्देहाद्देवान्सुदारुणान् ३२
शंखचक्रगदाहस्तान् विससर्ज सहस्रशः
सर्वांस्तान्क्षणमात्रेण त्रैपुरानिव शंकरः ३३
निर्ददाह महाबाहुर्नेत्रसृष्टेन वह्निना
ततः क्रुद्धतरो विष्णुश्चक्रमुद्यम्य सत्वरः ३४
तस्मिन्वीरो समुत्स्रष्टुं तदानीमुद्यतोऽभवत्
तं दृष्ट्वा चक्रमुद्यम्य पुरतः समुपस्थितम् ३५
स्मयन्निव गणेशानो व्यष्टंभयदयत्नतः
स्तंभितांगस्तु तच्चक्रं घोरमप्रतिमं क्वचित् ३६
इच्छन्नपि समुत्स्रष्टुं न विष्णुरभवत्क्षमः
श्वसन्निवैकमुद्धृत्य बाहुं चक्रसमन्वितम् ३७
अतिष्ठदलसो भूत्वा पाषाण इव निश्चलः
विशरीरो यथाजीवो विशृङ्गो वा यथा वृषः ३८
विदंष्ट्रश्च यथा सिंहस्तथा विष्णुरवस्थितः

तं दृष्ट्वा दुर्दशापन्नं विष्णुमिंद्रादयः सुराः
समुन्नद्धा गणेन्द्रेण मृगेंद्रेणेव गोवृषाः ३९
प्रगृहीतायुधा यौद्धुंक्रुद्धाः समुपतस्थिरे
तान्दृष्ट्वा समरे भद्रः क्षुद्रानिव हरिर्मृगान् ४०
साक्षाद्रुद्रतनुर्वीरो वरवीरगणावृतः
अट्टहासेन घोरेण व्यष्टं भयदनिंदितः ४१
तथा शतमखस्यापि सवज्रो दक्षिणः करः
सिसृक्षोरेव उद्वज्रश्चित्रीकृत इवाभवत् ४२
अन्येषामपि सर्वेषां सरक्ता अपि बाहवः
अलसानामिवारंभास्तादृशाः प्रतियांत्युत ४३
एवं भगवता तेन व्याहताशेषवैभवात्
अमराः समरे तस्य पुरतः स्थातुमक्षमाः ४४
स्तब्धैरवयवैरेव दुद्रुवुर्भयविह्वलाः
स्थितिं च चक्रिरे युद्धे वीरतेजोभयाकुलाः ४५
विद्रुतांस्त्रिदशान्वीरान्वीरभद्रो महाभुजः ४६ब्
विव्याध निशितैर्बाणैर्मघो वर्षैरिवाचलान् ४६
बहवस्तस्य वीरस्य बाहवः परिघोपमाः
शस्त्रैश्चकाशिरे दीप्तैः साग्निज्वाला इवोरगाः ४७
अस्त्रशस्त्राण्यनेकानिसवीरो विसृजन्बभौ
विसृजन्सर्वभूतानि यथादौ विश्वसंभवः ४८
यथा रश्मिभिरादित्यः प्रच्छादयति मेदिनीम्
तथा वीरः क्षणादेव शरैः प्राच्छादयद्दिशः ४९
खमंडले गणेन्द्रस्य शराः कनकभूषिताः
उत्पतंतस्तडिद्रूपैरुपमानपदं ययुः ५०
महांतस्ते सुरगणान् मंडूकानिवडुंडुभाः

प्राणैर्वियोजयामासुः पपुश्च रुधिरासवम् ५१
निकृत्तबाहवः केचित्केचिल्लूनवराननाः
पार्श्वे विदारिताः केचिन्निपेतुरमरा भुवि ५२
विशिखोन्मथितैर्गात्रैर्बहुभिश्छिन्नसन्धिभिः
विवृत्तनयनाः केचिन्निपेतुर्भूतले मृताः
गां प्रवेष्टुमिवेच्छंतः खं गंतुमिव लिप्सवः ५३
अलब्धात्मनिरोधानां व्यलीयंतः परस्परम्
भूमौ केचित्प्रविविशुः पर्वतानां गुहाः परे ५४
अपरे जग्मुराकाशं परे च विविशुर्जलम्
तथा संछिन्नसर्वांगैस्स वीरस्त्रिदशैर्बभौ ५५
परिग्रस्तप्रजावर्गो भगवानिव भैरवः
दग्धत्रिपुरसंव्यूहस्त्रिपुरारिर्यथाभवत् ५६
एवं देवबलं सर्वं दीनं बीभत्सदर्शनम्
गणेश्वरसमुत्पन्नं कृपणं वपुराददे ५७
तदा त्रिदशवीराणामसृक्सलिलवाहिनी
प्रावर्तत नदी घोरा प्राणिनां भयशंसिनी ५८
रुधिरेण परिक्लिन्ना यज्ञभूमिस्तदा बभौ
रक्तार्द्रवसना श्यामा हतशुंभेव कैशिकी ५९
तस्मिन्महति संवृत्ते समरे भृशदारुणे
भयेनेव परित्रस्ता प्रचचाल वसुन्धरा ६०
महोर्मिकलिलावर्तश्चुक्षुभे च महोदधिः
पेतुश्चोल्का महोत्पाताः शाखाश्च मुमुचुर्द्रुमाः ६१
अप्रसन्ना दिशः सर्वाः पवनश्चाशिवो ववौ
अहो विधिविपर्यासस्त्वश्वमेधोयमध्वरः
यजमानस्स्वयं दक्षो ब्रह्मपुत्रप्रजापतिः ६२

धर्मादयस्सदस्याश्च रक्षिता गरुडध्वजः
भागांश्च प्रतिगृह्णंति साक्षादिंद्रादयः सुराः ६३
तथापि यजमानस्य यज्ञस्य च सहर्त्विजः
सद्य एव शिरश्छेदस्साधु संपद्यते फलम् ६४
तस्मान्नावेदनिर्दिष्टं न चेश्वरबहिष्कृतम्
नासत्परिगृहीतं च कर्म कुर्यात्कदाचन ६५
कृत्वापि सुमहत्पुण्यमिष्ट्वा यज्ञशतैरपि
न तत्फलमवाप्नोति भक्तिहीनो महेश्वरे ६६
कृत्वापि सुमहत्पापं भक्त्या यजति यश्शिवम्
मुच्यते पातकैः सर्वैर्नात्र कार्या विचारणा ६७
बहुनात्र किमुक्तेन वृथा दानं वृथा तपः
वृथा यज्ञो वृथा होमः शिवनिन्दारतस्य तु ६८
ततः सनारायणकास्सरुद्राः सलोकपालास्समरे सुरौघाः
गणेंद्रचापच्युतबाणविद्धाः प्रदुद्रुवुर्गाढरुजाभिभूताः ६९
चेलुः क्वचित्केचन शीर्णकेशाः सेदुः क्वचित्केचन दीर्घगात्राः
पेतुः क्वचित्केचन भिन्नवक्त्रा नेशुः क्वचित्केचन देववीराः ७०
केचिच्च तत्र त्रिदशा विपन्ना विस्रस्तवस्त्राभरणास्त्रशस्त्राः
निपेतुरुद्भासितदीनमुद्रा मदं च दर्पं च बलं च हित्वा ७१
सस्मुत्पथप्रस्थितमप्रधृष्यो विक्षिप्य दक्षाध्वरमक्षतास्त्रैः
बभौ गणेशस्स गणेश्वराणां मध्ये स्थितः सिंह इवर्षभाणाम् ७२
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
दक्षयज्ञविध्वंसवर्णनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः २२

अध्याय २३

वायुरुवाच
इति सञ्छिन्नभिन्नांगा देवा विष्णुपुरोगमाः
क्षणात्कष्टां दशामेत्य त्रेसुः स्तोकावशेषिता १
त्रस्तांस्तान्समरे वीरान् देवानन्यांश्च वै गणाः
प्रमथाः परमक्रुद्धा वीरभद्रप्रणोदिताः २
प्रगृह्य च तथा दोषं निगडैरायसैर्दृढैः
बबन्धुः पाणिपादेषु कंधरेषूदरेषु च ३
तस्मिन्नवसरे ब्रह्मा भद्रमद्रीन्द्रजानुतम्
सारथ्याल्लब्धवात्सल्यः प्रार्थयन् प्रणतोऽब्रवीत् ४
अलं क्रोधेन भगवन्नष्टाश्चैते दिवौकसः
प्रसीद क्षम्यतां सर्वं रोमजैस्सह सुव्रत ५
एवं विज्ञापितस्तेन ब्रह्मणा परमेष्ठिना
शमं जगाम संप्रीतो गणपस्तस्य गौरवात् ६
देवाश्च लब्धावसरा देवदेवस्य मंत्रिणः
धारयन्तोऽञ्जलीन्मूर्ध्नि तुष्टुवुर्विविधैः स्तवैः ७
देवा ऊचुः
नमः शिवाय शान्ताय यज्ञहन्त्रे त्रिशूलिने
रुद्रभद्राय रुद्राणां पतये रुद्रभूतये ८
कालाग्निरुद्ररूपाय कालकामांगहारिणे
देवतानां शिरोहन्त्रे दक्षस्य च दुरात्मनः ९
संसर्गादस्य पापस्य दक्षस्याक्लिष्टकर्मणः
शासिताः समरे वीर त्वया वयमनिन्दिता १०
दग्धाश्चामी वयं सर्वे त्वत्तो भीताश्च भो प्रभो
त्वमेव गतिरस्माकं त्राहि नश्शरणागतान् ११

वायुरुवाच
तुष्टस्त्वेवं स्तुतो देवान् विसृज्य निगडात्प्रभुः
आनयद्देवदेवस्य समीपममरानिह १२
देवोपि तत्र भगवानन्तरिक्षे स्थितः प्रभुः
सगणः सर्वगः शर्वस्सर्वलोकमहेश्वरः १३
तं दृष्ट्वा परमेशानं देवा विष्णुपुरोगमाः
प्रीता अपि च भीताश्च नमश्चक्रुर्महेश्वरम् १४
दृष्ट्वा तानमरान्भीतान्प्रणतार्तिहरो हरः
इदमाह महादेवः प्रहसन् प्रेक्ष्य पार्वतीम् १५
महादेव उवाच
माभैष्ट त्रिदशास्सर्वे यूयं वै मामिकाः प्रजाः
अनुग्रहार्थमेवेह धृतो दंडः कृपालुना १६
भवतां निर्जराणां हि क्षान्तोऽस्माभिर्व्यतिक्रमः
क्रुद्धेष्वस्मासु युष्माकं न स्थितिर्न च जीवितम् १७
वायुरुवाच
इत्युक्तास्त्रिदशास्सर्वे शर्वेणामिततेजसा
सद्यो विगतसन्देहा ननृतुर्विबुधा मुदा १८
प्रसन्नमनसो भूत्वानन्दविह्वलमानसाः
स्तुतिमारेभिरे कर्तुं शंकरस्य दिवौकसः १९
देवा ऊचुः
त्वमेव देवाखिललोककर्ता पाता च हर्ता परमेश्वरोऽसि
कविष्णुरुद्राख्यस्वरूपभेदै रजस्तमस्सत्त्वधृतात्ममूर्त्ते २०
सर्वमूर्त्ते नमस्तेऽस्तु विश्वभावन पावन
अमूर्त्ते भक्तहेतोर्हि गृहीताकृतिसौख्यद २१
चंद्रोऽगदो हि देवेश कृपातस्तव शंकर

निमज्ञनान्मृतः प्राप सुखं मिहिरजाजलिः २२
सीमन्तिनी हतधवा तव पूजनतः प्रभो
सौभाग्यमतुलं प्राप सोमवारव्रतात्सुतान् २३
श्रीकराय ददौ देवः स्वीयं पदमनुत्तमम्
सुदर्शनमरक्षस्त्वं नृपमंडलभीतितः २४
मेदुरं तारयामास सदारं च घृणानिधिः
शारदां विधवां चक्रे सधवां क्रियया भवान् २५
भद्रायुषो विपत्तिं च विच्छिद्य त्वमदाः सुखम्
सौमिनी भवबन्धाद्वै मुक्ताऽभूत्तव सेवनात् २६
विष्णुरुवाच
त्वं शंभो कहरीशाश्च रजस्सत्त्वतमोगुणैः
कर्ता पाता तथा हर्ता जनानुग्रहकांक्षया २७
सर्वगर्वापहारी च सर्वतेजोविलासकः
सर्वविद्यादिगूढश्च सर्वानुग्रहकारकः २८
त्वत्तः सर्वं च त्वं सर्वं त्वयि सर्वं गिरीश्वर
त्राहि त्राहि पुनस्त्राहि कृपां कुरु ममोपरि २९
अथास्मिन्नन्तरे ब्रह्मा प्रणिपत्य कृतांजलिः
एवं त्ववसरं प्राप्य व्यज्ञापयत शूलिने ३०
ब्रह्मोवाच
जय देव महादेव प्रणतार्तिविभंजन
ईदृशेष्वपराधेषु कोऽन्यस्त्वत्तः प्रसीदति ३१
लब्धमानो भविष्यंति ये पुरा निहिता मृधे
प्रत्यापत्तिर्न कस्य स्यात्प्रसन्ने परमेश्वरे ३२
यदिदं देवदेवानां कृतमन्तुषु दूषणम्
तदिदं भूषणं मन्येत अंगीकारगौरवात् ३३

इति विज्ञाप्यमानस्तु ब्रह्मणा परमेष्ठिना
विलोक्य वदनं देव्या देवदेवस्स्मयन्निव ३४
पुत्रभूतस्य वात्सल्याद्ब्रह्मणः पद्मजन्मनः
देवादीनां यथापूर्वमंगानि प्रददौ प्रभुः ३५
प्रथमाद्यैश्च या देव्यो दंडिता देवमातरः
तासामपि यथापूर्वाण्यंगानि गिरिशो ददौ ३६
दक्षस्य भगवानेव स्वयं ब्रह्मा पितामहः
तत्पापानुगुणं चक्रे जरच्छागमुखं मुखम् ३७
सोऽपि संज्ञां ततो लब्ध्वा स दृष्ट्वा जीवितः सुधी
भीतः कृताञ्जलिः शंभुं तुष्टाव प्रलपन्बहु ३८
दक्ष उवाच
जय देव जगन्नाथ लोकानुग्रहकारक
कृपां कुरु महेशानापराधं मे क्षमस्व ह ३९
कर्त्ता भर्त्ता च हर्ता च त्वमेव जगतां प्रभो
मया ज्ञातं विशेषेण विष्णवादिसकलेश्वरः ४०
त्वयैव विततं सर्वं व्याप्तं सृष्टं न नाशितम्
न हि त्वदधिकाः केचिदीशास्तेऽच्युतकादयः ४१
वायुरुवाच
तं तथा व्याकुलं भीतं प्रलपंतं कृतागसम्
स्मयन्निवावदत्प्रेक्ष्य मा भैरिति १ घृणानिधिः ४२
तथोक्त्वा ब्रह्मणस्तस्य पितुः प्रियचिकीर्षया
गाणपत्यं ददौ तस्मै दक्षायाक्षयमीश्वरः ४३
ततो ब्रह्मादयो देवा अभिवंद्य कृत रंजलिः
तुष्टुवुः प्रश्रया वाचा शंकरं गिरिजाधिपम् ४४
ब्रह्मादय ऊचुः

जय शंकर देवेश दीनानाथ महाप्रभो
कृपां कुरु महेशानापराधं नो क्षमस्व वै ४५
मखपाल मखाधीश मखविध्वंसकारक
कृपां कुरु मशानापराधं नः क्षमस्व वै ४६
देवदेव परेशान भक्तप्राणप्रपोषक
दुष्टदण्डप्रद स्वामिन्कृपां कुरु नमोऽस्तु ते ४७
त्वं प्रभो गर्वहर्ता वै दुष्टानां त्वामजानताम्
रक्षको हि विशेषेण सतां त्वत्सक्तचेतसाम् ४८
अद्भुतं चरितं ते हि निश्चितं कृपया तव
सर्वापराधः क्षंतव्यो विभवो दीनवत्सलाः ४९
वायुरुवाच
इति स्तुतो महादेवो ब्रह्माद्यैरमरैः प्रभुः
स भक्तवत्सलस्स्वामी तुतोष करुणोदधिः ५०
चकारानुग्रहं तेषां ब्रह्मादीनां दिवौकसाम्
ददौ नरांश्च सुप्रीत्या शंकरो दीनवत्सलः ५१
स च ततस्त्रिदशाञ्छरणागतान् परमकारुणिकः परमेश्वरः
अनुगतस्मितलक्षणया गिरा शमितसर्वभयः समभाषत ५२
शिव उवाच
यदिदमाग इहाचरितं सुरैर्विधिनियोगवशादिव यन्त्रितैः
शरणमेव गतानवलोक्य वस्तदखिलं किल विस्मृतमेव नः ५३
तदिह यूयमपि प्रकृतं मनस्यविगणय्य विमर्दमपत्रपाः
हरिविरिंचिसुरेन्द्रमुखास्सुखं व्रजत देवपुरं प्रति संप्रति ५४
इति सुरानभिधाय सुरेश्वरो निकृतदक्षकृतक्रतुरक्रतुः
सगिरिजानुचरस्सपरिच्छदः स्थित इवाम्बरतोन्तरधाद्धरः ५५
अथ सुरा अपि ते विगतव्यथाः कथितभद्रसुभद्रपराक्रमाः

सपदि खेन सुखेन यथासुखं ययुरनेकमुखाः मघवन्मुखाः ५६
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
गिरिशानुनयो नाम त्रयोविंशोऽध्यायः २३

अध्याय २४

ऋषय ऊचुः
अन्तर्धानगतो देव्या सह सानुचरो हरः
क्व यातः कुत्र वासः किं कृत्वा विरराम ह १
वायुरुवाच
महीधरवरः श्रीमान् मंदरश्चित्रकंदरः
दयितो देवदेवस्य निवासस्तपसोऽभवत् २
तपो महत्कृतं तेन वोढुं स्वशिरसा शिवौ
चिरेण लब्धं तत्पादपंकजस्पर्शजं सुखम् ३
तस्य शैलस्य सौन्दर्य्यं सहस्रवदनैरपि
न शक्यं विस्तराद्वक्तुं वर्षकोटिशतैरपि ४
शक्यमप्यस्य सौन्दर्य्यं न वर्णयितुमुत्सहे
पर्वतान्तरसौन्दर्य्यं साधारणविधारणात् ५
इदन्तु शक्यते वक्तुमस्मिन्पर्वतसुन्दरे
ऋद्ध्या कयापि सौन्दर्यमीश्वरावासयोग्यता ६
अत एव हि देवेन देव्याः प्रियचिकीर्षया
अतीव रमणीयोयं गिरिरन्तःपुरीकृतः ७
मेखलाभूमयस्तस्य विमलोपलपादपाः
शिवयोर्नित्यसान्निध्यान्नयक्कुर्वंत्यखिलंजगत् ८
पितृभ्यां जगतो नित्यं स्नानपानोपयोगतः
अवाप्तपुण्यसंस्कारः प्रसरद्भिरितस्ततः ९

लघुशीतलसंस्पर्शैरच्छाच्छैर्निर्झराम्बुभिः
अधिराज्येन चाद्रीणामद्रीरेषोऽभिषिच्यते १०
निशासु शिखरप्रान्तर्वर्तिना स शिलोच्चयः
चंद्रेणाचल साम्राज्यच्छत्रेणेव विराजते ११
स शैलश्चंचलीभूतैर्बालैश्चामरयोषिताम्
सर्वपर्वतसाम्राज्यचामरैरिव वीज्यते १२
प्रातरभ्युदिते भानौ भूधरो रत्नभूषितः
दर्पणे देहसौभाग्यं द्रष्टुकाम इव स्थितः १३
कूजद्विहंगवाचालैर्वातोद्धृतलताभुजैः
विमुक्तपुष्पैः सततं व्यालम्बिमृदुपल्लवैः १४
लताप्रतानजटिलैस्तरुभिस्तपसैरिव
जयाशिषा सहाभ्यर्च्य निषेव्यत इवाद्रिराट् १५
अधोमुखैरूर्द्ध्वमुखैश्शृंगैस्तिर्यग्मुखैस्तथा
प्रपतन्निव पाताले भूपृष्ठादुत्पतन्निव १६
परीतः सर्वतो दिक्षु भ्रमन्निव विहायसि
पश्यन्निव जगत्सर्वं नृत्यन्निव निरन्तरम् १७
गुहामुखैः प्रतिदिनं व्यात्तास्यो विपुलोदरैः
अजीर्णलावण्यतया जृंभमाण इवाचलः १८
ग्रसन्निव जगत्सर्वं पिबन्निव पयोनिधिम्
वमन्निव तमोन्तस्थं माद्यन्निव खमम्बुदैः १९
निवास भूमयस्तास्ता दर्पणप्रतिमोदराः
तिरस्कृतातपास्स्निग्धाश्रमच्छायामहीरुहाः २०
सरित्सरस्तडागादिसंपर्कशिशिरानिलाः
तत्र तत्र निषण्णाभ्यां शिवाभ्यां सफलीकृताः २१
तमिमं सर्वतः श्रेष्ठं स्मृत्वा साम्बस्त्रियम्बकः

रैभ्याश्रमसमीपस्थश्चान्तर्धानं गतो ययौ २२
तत्रोद्यानमनुप्राप्य देव्या सह महेश्वरः
रराम रमणीयासु देव्यान्तःपुरभूमिषु २३
तथा गतेषु कालेषु प्रवृद्धासु प्रजासु च
दैत्यौ शुंभनिशुंभाख्यौ भ्रातरौ संबभूवतुः २४
ताभ्यां तपो बलाद्दत्तं ब्रह्मणा परमेष्ठिना
अवध्यत्वं जगत्यस्मिन्पुरुषैरखिलैरपि २५
अयोनिजा तु या कन्या ह्यंबिकांशसमुद्भवा
अजातपुंस्पर्शरतिरविलंघ्यपराक्रमा २६
तया तु नौ वधः संख्ये तस्यां कामाभिभूतयोः
इति चाभ्यर्थितो ब्रह्मा ताभ्याम्प्राह तथास्त्विति २७
ततः प्रभृति शक्रादीन्विजित्य समरे सुरान्
निःस्वाध्यायवषट्कारं जगच्चक्रतुरक्रमात् २८
तयोर्वधाय देवेशं ब्रह्माभ्यर्थितवान्पुनः
विनिंद्यापि रहस्यं वां क्रोधयित्वा यथा तथा २९
तद्वर्णकोशजां शक्तिमकामां कन्यकात्मिकाम्
निशुम्भशुंभयोर्हंत्रीं सुरेभ्यो दातुमर्हसि ३०
एवमभ्यर्थितो धात्रा भगवान्नीललोहितः
कालीत्याह रहस्यं वां निन्दयन्निव सस्मितः ३१
ततः क्रुद्धा तदा देवी सुवर्णा वर्णकारणात्
स्मयन्ती चाह भर्तारमसमाधेयया गिरा ३२
देव्युवाच
ईदृशो मम वर्णेऽस्मिन्न रतिर्भवतोऽस्ति चेत्
एवावन्तं चिरं कालं कथमेषा नियम्यते ३३
अरत्या वर्तमानोऽपि कथं च रमसे मया

न ह्यशक्यं जगत्यस्मिन्नीश्वरस्य जगत्प्रभोः ३४
स्वात्मारामस्य भवतो रतिर्न सुखसाधनम्
इति हेतोः स्मरो यस्मात्प्रसभं भस्मसात्कृतः ३५
या च नाभिमता भर्तुरपि सर्वांगसुन्दरी
सा वृथैव हि जायेत सर्वैरपि गुणान्तरैः ३६ शेषो हि सर्ग एवैष योषिताम्
तथासत्यन्यथाभूता नारी कुत्रोपयुज्यते ३७
तस्माद्वर्णमिमं त्यक्त्वा त्वया रहसि निन्दितम्
वर्णान्तरं भजिष्ये वा न भजिष्यामि वा स्वयम् ३८
इत्युक्त्वोत्थाय शयनाद्देवी साचष्ट गद्गदम्
ययाचेऽनुमतिं भर्तुस्तपसे कृतनिश्चया ३९
तथा प्रणयभंगेन भीतो भूतपतिः स्वयम्
पादयोः प्रणमन्नेव भवानीं प्रत्यभाषत ४०
ईश्वर उवाच
अजानती च क्रीडोक्तिं प्रिये किं कुपितासि मे
रतिः कुतो वा जायेत त्वत्तश्चेदरतिर्मम ४१
माता त्वमस्य जगतः पिताहमधिपस्तथा
कथं तदुत्पपद्येत त्वत्तो नाभिरतिर्मम ४२
आवयोरभिकामोऽपि किमसौ कामकारितः
यतः कामसमुत्पत्तिः प्रागेव जगदुद्भवः ४३
पृथग्जनानां रतये कामात्मा कल्पितो मया
ततः कथमुपालब्धः कामदाहादहं त्वया ४४
मां वै त्रिदशसामान्यं मन्यमानो मनोभवः
मनाक्परिभवं कुर्वन्मया वै भस्मसात्कृतः ४५
विहारोप्यावयोरस्य जगतस्त्राणकारणात्

ततस्तदर्थं त्वय्यद्य क्रीडोक्तिं कृतवाहनम् ४६
स चायमचिरादर्थस्तवैवाविष्करिष्यते
क्रोधस्य जनकं वाक्यं हृदि कृत्वेदमब्रवीत् ४७
देव्युवाच
श्रुतपूर्वं हि भगवंस्तव चाटु वचो मया
येनैवमतिधीराहमपि प्रागभिवंचिता ४८
प्राणानप्यप्रिया भर्तुर्नारी या न परित्यजेत्
कुलांगना शुभा सद्भिः कुत्सितैव हि गम्यते ४९
भूयसी च तवाप्रीतिरगौरमिति मे वपुः
क्रीडोक्तिरपि कालीति घटते कथमन्यथा ५०
सद्भिर्विगर्हितं तस्मात्तव कार्ष्णर्यमसंमतम्
अनुत्सृज्य तपोयोगात्स्थातुमेवेह नोत्सहे ५१
शिव उवाच
स यद्येवंविधतापस्ते तपसा किं प्रयोजनम्
ममेच्छया स्वेच्छया वा वर्णान्तरवती भव ५२
देव्युवाच
नेच्छामि भवतो वर्णं स्वयं वा कर्तुमन्यथा
ब्रह्माणं तपसाराध्य क्षिप्रं गौरी भवाम्यहम् ५३
ईश्वर उवाच
मत्प्रसादात्पुरा ब्रह्मा ब्रह्मत्वं प्राप्तवान्पुरा
तमाहूय महादेवि तपसा किं करिष्यसि ५४
देव्युवाच
त्वत्तो लब्धपदा एव सर्वे ब्रह्मादयः सुराः
तथाप्याराध्य तपसा ब्रह्माणं त्वन्नियोगतः ५५
पुरा किल सती नाम्ना दक्षस्य दुहिताऽभवम्

जगतां पतिमेवं त्वां पतिं प्राप्तवती तथा ५६
एवमद्यापि तपसा तोषयित्वा द्विजं विधिम्
गौरी भवितुमिच्छामि को दोषः कथ्यतामिह ५७
एवमुक्तो महादेव्या वामदेवः स्मयन्निव
न तां निर्बंधयामास देवकार्यचिकीर्षया ५८
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
शिवमन्दरगिरिनिवासक्रीडोक्तवर्णनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः २४

अध्याय २५

वायुरुवाच
ततः प्रदक्षिणीकृत्य पतिमम्बा पतिव्रता
नियम्य च वियोगार्तिं जगाम हिमवद्गिरिम् १
तपःकृतवती पूर्वं देशे यस्मिन्सखीजनैः
तमेव देशमवृनोत्तपसे प्रणयात्पुनः २
ततः स्वपितरं दृष्ट्वा मातरं च तयोर्गृहे
प्रणम्य वृत्तं विज्ञाप्य ताभ्यां चानुमता सती ३
पुनस्तपोवनं गत्वा भूषणानि विसृज्य च
स्नात्वा तपस्विनो वेषं कृत्वा परमपावनम् ४
संकल्प्य च महातीव्रं तपः परमदुश्चरम्
सदा मनसि सन्धाय भर्तुश्चरणपंकजम् ५
तमेव क्षणिके लिंगे ध्यात्वा बाह्यविधानतः
त्रिसन्ध्यमभ्यर्चयन्ती वन्यैः पुष्पैः फलादिभिः ६
स एव ब्रह्मणो मूर्तिमास्थाय तपसः फलम्
प्रदास्यति ममेत्येवं नित्यं कृत्वाऽकरोत्तपः ७
तथा तपश्चरन्तीं तां काले बहुतिथे गते

दृष्टः कश्चिन्महाव्याघ्रो दुष्टभावादुपागमत् ८
तथैवोपगतस्यापि तस्यातीवदुरात्मनः
गात्रं चित्रार्पितमिव स्तब्धं तस्यास्सकाशतः ९
तं दृष्ट्वापि तथा व्याघ्रं दुष्टभावादुपागतम्
न पृथग्जनवद्देवी स्वभावेन विविच्यते १०
स तु विष्टब्धसर्वांगो बुभुक्षापरिपीडितः
ममामिषं ततो नान्यदिति मत्वा निरन्तरम् ११
निरीक्ष्यमाणः सततं देवीमेव तदाऽनिशम्
अतिष्ठदग्रतस्तस्या उपासनमिवाचरत् १२
देव्याश्च हृदये नित्यं ममैवायमुपासकः
त्राता च दुष्टसत्त्वेभ्य इति प्रववृते कृपा १३
तस्या एव कृपा योगात्सद्योनष्टमलत्रयः
बभूव सहसा व्याघ्रो देवीं च बुबुधे तदा १४
न्यवर्तत बुभुक्षा च तस्यांगस्तम्भनं तथा
दौरात्म्यं जन्मसिद्धं च तृप्तिश्च समजायत १५
तदा परमभावेन ज्ञात्वा कार्तार्थ्यमात्मनः
सद्योपासक एवैष सिषेवे परमेश्वरीम् १६
दुष्टानामपि सत्त्वानां तथान्येषान्दुरात्मनाम्
स एव द्रावको भूत्वा विचचार तपोवने १७
तपश्च ववृधे देव्यास्तीव्रं तीव्रतरात्मकम्
देवाश्च दैत्यनिर्बन्धाद्ब्रह्माणं शरणं गताः १८
चक्रुर्निवेदनं देवाः स्वदुःखस्यारिपीडनात्
यथा च ददतुः शुम्भनिशुम्भौ वरसम्मदात् १९
सोऽपि श्रुत्वा विधिर्दुःखं सुराणां कृपयान्वितः
आसीद्दैत्यवधायैव स्मृत्वा हेत्वाश्रयां कथाम् २०

सामरः प्रार्थितो ब्रह्मा ययौ देव्यास्तपोवनम्
संस्मरन्मनसा देवदुःखमोक्षं स्वयत्नतः २१
ददर्श च सुरश्रेष्ठः श्रेष्ठे तपसि निष्ठिताम्
प्रतिष्ठामिव विश्वस्य भवानीं परमेश्वरीम् २२
ननाम चास्य जगतो मातरं स्वस्य वै हरेः
रुद्रस्य च पितुर्भार्यामार्यामद्रीश्वरात्मजाम् २३
ब्रह्माणमागतं दृष्ट्वा देवी देवगणैः सह
अर्घ्यं तदर्हं दत्त्वाऽस्मै स्वागताद्यैरुपाचरत् २४
तां च प्रत्युपचारोक्तिं पुरस्कृत्याभिनंद्य च
पप्रच्छ तपसो हेतुमजानन्निव पद्मजः २५
ब्रह्मोवाच
तीव्रेण तपसानेन देव्या किमिह साध्यते
तपःफलानां सर्वेषां त्वदधीना हि सिद्धयः २६
यश्चैव जगतां भर्ता तमेव परमेश्वरम्
भर्तारमात्मना प्राप्य प्राप्तञ्च तपसः फलम् २७
अथवा सर्वमेवैतत्क्रीडाविलसितं तव
इदन्तु चित्रं देवस्य विरहं सहसे कथम् २८
देव्युवाच
सर्गादौ भवतो देवादुत्पत्तिः श्रूयते यदा
तदा प्रजानां प्रथमस्त्वं मे प्रथमजः सुतः २९
यदा पुनः प्रजावृद्ध्यै ललाटाद्भवतो भवः
उत्पन्नोऽभूत्तदा त्वं मे गुरुः श्वशुरभावतः ३०
यदा भवद्गिरीन्द्रस्ते पुत्रो मम पिता स्वयम्
तदा पितामहस्त्वं मे जातो लोकपितामह ३१
तदीदृशस्य भवतो लोकयात्राविधायिनः

वृत्तवन्तःपुरे भर्ता कथयिष्ये कथं पुनः ३२
किमत्र बहुना देहे यश्चायं मम कालिमा
त्यक्त्वा सत्त्वविधानेन गौरी भवितुमुत्सहे ३३
ब्रह्मोवाच
एतावता किमर्थेन तीव्रं देवि तपः कृतम्
स्वेच्छैव किमपर्याप्ता क्रीडेयं हि तवेदृशी ३४
क्रीडाऽपि च जगन्मातस्तव लोकहिताय वै
अतो ममेष्टमनया फलं किमपि साध्यताम् ३५
निशुंभशुंभनामानौ दैत्यौ दत्तवरौ मया
दृप्तौ देवान्प्रबाधेते त्वत्तो लब्धस्तयोर्वधः ३६
अलं विलंबनेनात्र त्वं क्षणेन स्थिरा भव
शक्तिर्विसृज्यमानाऽद्य तयोर्मृत्युर्भविष्यति ३७
ब्राह्मणाभ्यर्थिता चैव देवी गिरिवरात्मजा
त्वक्कोशं सहसोत्सृज्य गौरी सा समजायत ३८
सा त्वक्कोशात्मनोत्सृष्टा कौशिकी नाम नामतः
काली कालाम्बुदप्रख्या कन्यका समपद्यत ३९
सा तु मायात्मिका शक्तिर्योगनिद्रा च वैष्णवी
शंखचक्रत्रिशूलादिसायुधाष्टमहाभुजा ४०
सौम्या घोरा च मिश्रा च त्रिनेत्रा चन्द्रशेखरा
अजातपुंस्पर्शरतिरधृष्या चातिसुन्दरी ४१
दत्ता च ब्रह्मणे देव्या शक्तिरेषा सनातनी
निशुंभस्य च शुंभस्य निहंत्री दैत्यसिंहयोः ४२
ब्रह्मणापि प्रहृष्टेन तस्यै परमशक्तये
प्रबलः केसरी दत्तो वाहनत्वे समागतः ४३
विन्ध्ये च वसतिं तस्याः पूजामासवपूर्वकैः

मांसैर्मत्स्यैरपूपैश्च निर्वर्त्यासौ समादिशत् ४४
सा चैव संमता शक्तिर्ब्रह्मणो विश्वकर्मणः
प्रणम्य मातरं गौरीं ब्रह्माणं चानुपूर्वशः ४५
शक्तिभिश्चापि तुल्याभिः स्वात्मजाभिरनेकशः
परीता प्रययौ विन्ध्यं दैत्येन्द्रौ हन्तुमुद्यता ४६
निहतौ च तया तत्र समरे दैत्यपुंगवौ
तद्बाणैः कामबाणैश्च च्छिन्नभिन्नांगमानसौ ४७
तद्युद्धविस्तरश्चात्र न कृतोऽन्यत्र वर्णनात्
ऊहनीयं परस्माच्च प्रस्तुतं वर्णयामि वः ४८

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
देवीगौरत्वभवनं नाम पंचविंशोऽध्यायः २५

अध्याय २६

वायुरुवाच
उत्पाद्य कौशिकीं गौरी ब्रह्मणे प्रतिपाद्य ताम्
तस्य प्रत्युपकाराय पितामहमथाब्रवीत् १
देव्युवाच
दृष्टः किमेष भवता शार्दूलो मदुपाश्रयः
अनेन दुष्टसत्त्वेभ्यो रक्षितं मत्तपोवनम् २
मय्यर्पितमना एष भजते मामनन्यधीः
अस्य संरक्षणादन्यत्प्रियं मम न विद्यते ३
भवितव्यमनेनातो ममान्तःपुरचारिणा
गणेश्वरपदं चास्मै प्रीत्या दास्यति शंकरः ४
एनमग्रेसरं कृत्वा सखीभिर्गन्तुमुत्सहे
प्रदीयतामनुज्ञा मे प्रजानां पतिना १ त्वया ५

इत्युक्तः प्रहसन्ब्रह्मा देवीम्मुग्धामिव स्मयन्
तस्य तीव्रैः पुरावृत्तैर्दौरात्म्यं समवर्णयत् १ ६
ब्रह्मोवाच
पशौ देवि मृगाः क्रूराः क्व च तेऽनुग्रहः शुभः
आशीविषमुखे साक्षादमृतं किं निषिच्यते ७
व्याघ्रमात्रेण सन्नेष दुष्टः कोऽपि निशाचरः
अनेन भक्षिता गावो ब्राह्मणाश्च तपोधनाः ८
तर्पयंस्तान्यथाकामं कामरूपी चरत्यसौ
अवश्यं खलु भोक्तव्यं फलं पापस्य कर्मणः ९
अतः किं कृपया कृत्यमीदृशेषु दुरात्मसु
अनेन देव्याः किं कृत्यं प्रकृत्या कलुषात्मना १०
देव्युवाच
यदुक्तं भवता सर्वं तथ्यमस्त्वयमीदृशः
तथापि मां प्रपन्नोऽभून्न त्याज्यो मामुपाश्रितः ११
ब्रह्मोवाच
अस्य भक्तिमविज्ञाय प्राग्वृत्तं ते निवेदितम्
भक्तिश्चेदस्य किं पापैर्न ते भक्तः प्रणश्यति १२
पुण्यकर्मापि किं कुर्य्यात्त्वदीयाज्ञानपेक्षया
अजा प्रज्ञा पुराणी च त्वमेव परमेश्वरी १३
त्वदधीना हि सर्वेषां बंधमोक्षव्यवस्थितिः
त्वदृते परमा शक्तिः संसिद्धिः कस्य कर्मणा १४
त्वमेव विविधा शक्तिः भवानामथ वा स्वयम्
अशक्तः कर्मकरणे कर्ता वा किं करिष्यति १५
विष्णोश्च मम चान्येषां देवदानवरक्षसाम्
तत्तदैश्वर्यसम्प्राप्त्यै तवैवाज्ञा हि कारणम् १६

अतीताः खल्वसंख्याता ब्रह्माणो हरयो भवाः
अनागतास्त्वसंख्यातास्त्वदाज्ञानुविधायिनः १७
त्वामनाराध्य देवेशि पुरुषार्थचतुष्टयम्
लब्धुं न शक्यमस्माभिरपि सर्वैः सुरोत्तमैः १८
व्यत्यासोऽपि भवेत्सद्यो ब्रह्मत्वस्थावरत्वयोः
सुकृतं दुष्कृतं चापि त्वयेव स्थापितं यतः १९
त्वं हि सर्वजगद्धर्तुश्शिवस्य परमात्मनः
अनादिमध्यनिधना शक्तिराद्या सनातनी २०
समस्तलोकयात्रार्थं मूर्तिमाविश्य कामपि
क्रीडसे २ विविधैर्भावैः कस्त्वां जानाति तत्त्वतः २१
अतो दुष्कृतकर्मापि व्याघ्रोऽयं त्वदनुग्रहात्
प्राप्नोतु परमां सिद्धिमत्र कः प्रतिबन्धकः २२
इत्यात्मनः परं भावं स्मारयित्वानुरूपतः
ब्रह्मणाभ्यर्थिता गौरी तपसोऽपि न्यवर्तत २३
ततो देवीमनुज्ञाप्य ब्रह्मण्यन्तर्हिते सति
देवीं च मातरं दृष्ट्वा मेनां हिमवता सह २४
प्रणम्याश्वास्य बहुधा पितरौ विरहासहौ
तपः प्रणयिनो देवी तपोवनमहीरुहान् २५
विप्रयोगशुचेवाग्रे पुष्पबाष्पं विमुंचतः
तत्तुच्छाखासमारूढविहगो दीरितै रुतैः २६
व्याकुलं बहुधा दीनं विलापमिव कुर्वतः
सखीभ्यः कथयंत्येवं सत्त्वरा भर्तृदर्शने २७
पुरस्कृत्य च तं व्याघ्रं स्नेहात्पुत्रमिवौरसम्
देहस्य प्रभया चैव दीपयन्ती दिशो दश २८
प्रययौ मंदरं गौरी यत्र भर्ता महेश्वरः

सर्वेषां जगतां धाता कर्ता पाता विनाशकृत् २६
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
व्याघ्रगतिवर्णनं नाम षड्विंशोऽध्यायः २६

अध्याय २७

ऋषय ऊचुः
कृत्वा गौरं वपुर्दिव्यं देवी गिरिवरात्मजा
कथं ददर्श भर्तारं प्रविष्टा मन्दितं सती १
प्रवेशसमये तस्या भवनद्वारगोचरैः
गणेशैः किं कृतं देवस्तान्दृष्ट्वा किन्तदाऽकरोत् २
वायुरुवाच
प्रवक्तुमंजसाऽशक्यः तादृशः परमो रसः
येन प्रणयगर्भेण भावो भाववतां हृतः ३
द्वास्थैस्ससंभ्रमैरेव देवो देव्यागमोत्सुकः
शंकमाना प्रविष्टान्तस्तञ्च सा समपश्यत ४
तैस्तैः प्रणयभावैश्च भवनान्तरवर्त्तिभिः
गणेन्द्रैर्वन्दिता वाचा प्रणनाम त्रियम्बकम् ५
प्रणम्य नोत्थिता यावत्तावत्तां परमेश्वरः
प्रगृह्य दोर्भ्यामाश्लिष्य परितः परया मुदा ६
स्वांके धर्तुं प्रवृत्तोऽपि सा पर्य्यंके न्यषीदत
पर्य्यंकतो बलाद्देवीं सोणकमारोप्य सुस्मिताम् ७
सस्मितो विवृतैर्नेत्रैस्तद्वक्त्रं प्रपिबन्निव
तया संभाषणायेशः पूर्वभाषितमब्रवीत् ८
देवदेव उवाच
सा दशा च व्यतीता किं तव सर्वांगसुन्दरि

यस्यामनुनयोपायः कोऽपि कोपान्न लभ्यते ९
स्वेच्छयापि न कालीति नान्यवर्णवतीति च
त्वत्स्वभावाहृतं चित्तं सुभ्रु चिंतावहं मम १०
विस्मृतः परमो भावः कथं स्वेच्छांगयोगतः
न सम्भवन्ति ये तत्र चित्तकालुष्यहेतवः ११
पृथग्जनवदन्योन्यं विप्रियस्यापि कारणम्
आवयोरपि यद्यस्ति नास्त्येवैतच्चराचरम् १२
अहमग्निशिरोनिष्ठस्त्वं सोमशिरसि स्थिता
अग्नीषोमात्मकं विश्वमावाभ्यां समधिष्ठितम् १३
जगद्धिताय चरतोः स्वेच्छाधृतशरीरयोः
आवयोर्विप्रयोगे हि स्यान्निरालम्बनं जगत् १४
अस्ति हेत्वन्तरं चात्र शास्त्रयुक्तिविनिश्चितम्
वागर्थमिव मे वैतज्जगत्स्थावरजंगमम् १५
त्वं हि वागमृतं साक्षादहमर्थामृतं परम्
द्वयमप्यमृतं कस्माद्वियुक्तमुपपद्यते १६
विद्याप्रत्यायिका त्वं मे वेद्योऽहं प्रत्ययात्तव
विद्यावेद्यात्मनोरेव विश्लेषः कथमावयोः १७
न कर्मणा सृजामीदं जगत्प्रतिसृजामि च
सर्वस्याज्ञैकलभ्यत्वादाज्ञात्वं हि गरीयसी १८
आज्ञैकसारमैश्वर्य्यं यस्मात्स्वातंत्र्यलक्षणम्
आज्ञया विप्रयुक्तस्य चैश्वर्य्यं मम कीदृशम् १९
न कदाचिदवस्थानमावयोर्विप्रयुक्तयोः
देवानां कार्य्यमुद्दिश्य लीलोक्तिं कृतवानहम् २०
त्वयाप्यविदितं नास्ति कथं कुपितवत्यसि
ततस्त्रिलोकरक्षार्थे कोपो मय्यपि ते कृतः २१

यदनर्थाय भूतानां न तदस्ति खलु त्वयि
इति प्रियंवदे साक्षादीश्वरे परमेश्वरे २२
शृंगारभावसाराणां जन्मभूमिरकृत्रिमा
स्वभर्त्रा ललितन्तथ्यमुक्तं मत्वा स्मितोत्तरम् २३
लज्जया न किमप्यूचे कौशिकी वर्णनात्परम्
तदेव वर्णयाम्यद्य शृणु देव्याश्च वर्णनम् २४
देव्युवाच
किं देवेन न सा दृष्टा या सृष्टा कौशिकी मया
तादृशी कन्यका लोके न भूता न भविष्यति २५
तस्या वीर्य्यं बलं विन्ध्यनिलयं विजयं तथा
शुंभस्य च निशुंभस्य मारणे च रणे तयोः २६
प्रत्यक्षफलदानं च लोकाय भजते सदा
लोकानां रक्षणं शश्वद्ब्रह्मा विज्ञापयिष्यति २७
इति संभाषमाणाया देव्या एवाज्ञया तदा
व्याघ्रः सख्या समानीय पुरोऽवस्थापितस्तदा २८
तं प्रेक्ष्याह पुनर्देवी देवानीतमुपायतम्
व्याघ्रं पश्य न चानेन सदृशो मदुपासकः २९
अनेन दुष्टसंघेभ्यो रक्षितं मत्तपोवनम्
अतीव मम भक्तश्च विश्रब्धश्च स्वरक्षणात् ३०
स्वदेशं च परित्यज्य प्रसादार्थं समागतः
यदि प्रीतिरभून्मत्तः परां प्रीतिं करोषि मे ३१
नित्यमन्तःपुरद्वारि नियोगान्नन्दिनः स्वयम्
रक्षिभिस्सह तच्चिह्नैर्वर्ततामयमीश्वर ३२
वायुरुवाच
मधुरं प्रणयोदर्कं श्रुत्वा देव्याः शुभं वचः

प्रीतोऽस्मीत्याह तं देवस्स चादृश्यत तत्क्षणात् ३३
बिभ्रद्वेत्रलतां हैमीं रत्नचित्रं च कंचुकम्
छुरिकामुरगप्रख्यां गणेशो रत्नवेषधृक् ३४
यस्मात्सोमो महादेवो नन्दी चानेन नन्दितः
सोमनन्दीति विख्यातस्तस्मादेष समाख्यया ३५
इत्थं देव्याः प्रियं कृत्वा देवश्चर्द्धेन्दुभूषणः
भूषयामास तन्दिव्यैर्भूषणै रत्नभूषितैः ३६
ततस्स गौरीं गिरिशो गिरीन्द्रजां सगौरवां सर्वमनोहरां हरः
पर्य्यंकमारोप्य वरांगभूषणैर्विभूषयामास शशांकभूषणः ३७
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
सप्तविंशोऽध्यायः २७

अध्याय २८

ऋषय ऊचुः
देवीं समादधानेन देवेनेदं किमीरितम्
अग्निषोमात्मकं विश्वं वागर्थात्मकमित्यपि १
आज्ञैकसारमैश्वर्य्यमाज्ञा त्वमिति चोदितम्
तदिदं श्रोतुमिच्छामो यथावदनुपूर्वशः २
वायुरुवाच
अग्निरित्युच्यते रौद्री घोरा या तैजसी तनुः
सोमः शाक्तोऽमृतमयः शक्तेः शान्तिकरी तनुः ३
अमृतं यत्प्रतिष्ठा सा तेजो विद्या कला स्वयम्
भूतसूक्ष्मेषु सर्वेषु त एव रसतेजसी ४
द्विविधा तेजसो वृत्तिसूर्य्यात्मा चानलात्मिका
तथैव रसवृत्तिश्च सोमात्मा च जलात्मिका ५

विद्युदादिमयन्तेजो मधुरादिमयो रसः
तेजोरसविभेदैस्तु धृतमेतच्चराचरम् ६
अग्नेरमृतनिष्पत्तिरमृतेनाग्निरेधते
अत एव हि विक्रान्तमग्नीषोमं जगद्धितम् ७
हविषे सस्यसम्पत्तिर्वृष्टिः सस्याभिवृद्धये
वृष्टेरेव हविस्तस्मादग्नीषोमधृतं जगत् ८
अग्निरूर्द्ध्वं ज्वलत्येष यावत्सौम्यं परामृतम्
यावदग्न्यास्पदं सौम्यममृतं च स्रवत्यधः ९
अत एव हि कालाग्निरधस्ताच्छक्तिरूर्द्ध्वतः
यावदादहनं चोर्द्ध्वमधश्चाप्लावनं भवेत् १०
आधारशक्त्यैव धृतः कालाग्निरयमूर्द्ध्वगः
तथैव निम्नगः सोमश्शिवशक्तिपदास्पदः ११
शिवश्चोर्द्ध्वमधश्शक्तिरूर्द्ध्वं शक्तिरधः शिवः
तदित्थं शिवशक्तिभ्यान्नाव्याप्तमिह किञ्चन १२
असकृच्चाग्निना दग्धं जगद्यद्भस्मसात्कृतम्
अग्नेर्वीर्यमिदं चाहुस्तद्वीर्यं भस्म यत्ततः १३
यश्चेत्थं भस्मसद्भावं ज्ञात्वा स्नाति च भस्मना
अग्निरित्यादिभिर्मन्त्रैर्बद्धः पाशात्प्रमुच्यते १४
अग्नेर्वीर्यं तु यद्भस्म सोमेनाप्लावितम्पुनः
अयोगयुक्त्या प्रकृतेरधिकाराय कल्पते १५
योगयुक्त्या तु तद्भस्म प्लाव्यमानं समन्ततः
शाक्तेनामृतवर्षेण चाधिकारान्निवर्तयेत् १६
अतो मृत्युंजयायेत्थममृतप्लावनं सदा
शिवशक्त्यमृतस्पर्शे लब्धं येन कुतो मृतिः १७
यो वेद दहनं गुह्यं प्लावनं च यथोदितम्

अग्नीषोमपदं हित्वा न स भूयोऽभिजायते १८
शिवाग्निना तनुं दग्ध्वा शक्तिसौम्या मृतेन यः
प्लावयेद्योगमार्गेण सोऽमृतत्वाय कल्पते १९
हृदि कृत्वेममर्थं वै देवेन समुदाहृतम्
अग्नीषोमात्मकं विश्वं जगदित्यनुरूपतः २०
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
भस्मतत्त्ववर्णनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः २८

अध्याय २९

वायुरुवाच
निवेदयामि जगतो वागर्थात्म्यं कृतं यथा
षडध्ववेदनं सम्यक् समासान्न तु विस्तरात् १
नास्ति कश्चिदशब्दार्थो नापि शब्दो निरर्थकः
ततो हि समये शब्दस्सर्वस्सर्वार्थबोधकः २
प्रकृतेः परिणामोऽयं द्विधा शब्दार्थभावना
तामाहुः प्राकृतीं मूर्तिं शिवयोः परमात्मनोः ३
शब्दात्मिका विभूतिर्या सा त्रिधा कथ्यते बुधैः
स्थूला सूक्ष्मा परा चेति स्थूला या श्रुतिगोचरा ४
सूक्ष्मा चिन्तामयी प्रोक्ता चिंतया रहिता परा
या शक्तिः सा परा शक्तिश्शिवतत्त्वसमाश्रया ५
ज्ञानशक्तिसमायोगादिच्छोपोद्बलिका तथा
सर्वशक्तिसमष्ट्यात्मा शक्तितत्त्वसमाख्यया ६
समस्तकार्यजातस्य मूलप्रकृतितां गता
सैव कुण्डलिनी माया शुद्धाध्वपरमा सती ७
सा विभागस्वरूपैव षडध्वात्मा विजृंभते

तत्र शब्दास्त्रयोऽध्वानस्त्रयश्चार्थाः समीरिताः ८
सर्वेषामपि वै पुंसां नैजशुद्ध्यनुरूपतः
लयभोगाधिकारास्स्युस्सर्वतत्त्वविभागतः ९
कलाभिस्तानि तत्त्वानि व्याप्तान्येव यथातथम्
परस्याः प्रकृतेरादौ पंचधा परिणामतः १०
कलाश्च ता निवृत्त्याद्याः पर्य्याप्ता इति निश्चयः
मंत्राध्वा च पदाध्वा च वर्णाध्वा चेति शब्दतः ११
भुवनाध्वा च तत्त्वाध्वा कलाध्वा चार्थतः क्रमात्
अत्रान्योन्यं च सर्वेषां व्याप्यव्यापकतोच्यते १२
मंत्राः सर्वैः पदैर्व्याप्ता वाक्यभावात्पदानि च
वर्णैर्वर्णसमूहं हि पदमाहुर्विपश्चितः १३
वर्णास्तु भुवनैर्व्याप्तास्तेषां तेषूपलंभनात्
भुवनान्यपि तत्त्वौघैरुत्पत्त्यांतर्बहिष्क्रमात् १४
व्याप्तानि कारणैस्तत्त्वैरारब्धत्वादनेकशः
अंतरादुत्थितानीह भुवनानि तु कानिचित् १५
पौराणिकानि चान्यानि विज्ञेयानि शिवागमे
सांख्ययोगप्रसिद्धानि तत्त्वान्यपि च कानिचित् १६
शिवशास्त्रप्रसिद्धानि ततोन्यान्यपि कृत्स्नशः
कलाभिस्तानि तत्त्वानि व्याप्तान्येव यथातथम् १७
परस्याः प्रकृतेरादौ पंचधा परिणामतः
कलाश्च ता निवृत्त्याद्या व्याप्ताः पंच यथोत्तरम् १८
व्यापिकातः परा शक्तिरविभक्ता षडध्वनाम्
परप्रकृतिभावस्य तत्सत्त्वाच्छिवतत्त्वतः १९
शक्त्यादि च पृथिव्यन्तं शिवतत्त्वसमुद्भवम्
व्याप्तमेकेन तेनैव मृदा कुंभादिकं यथा २०

शैवं तत्परमं धाम यत्प्राप्यं षड्भिरध्वभिः
व्यापिकाऽव्यापिका शक्तिः पंचतत्त्वविशोधनात् २१
निवृत्त्या रुद्रपर्य्यन्तं स्थितिरराडस्य शोध्यते
प्रतिष्ठया तदूर्ध्वं तु यावदव्यक्तगोचरम् २२
तदूर्ध्वं विद्यया मध्ये यावद्विश्वेश्वरावधि
शान्त्या तदूर्ध्वं मध्वान्ते विशुद्धिः शान्त्यतीतया २३
यामाहुः परमं व्योम परप्रकृतियोगतः
एतानि पंचतत्त्वानि यैर्व्याप्तमखिलं जगत् २४
तत्रैव सर्वमेवेदं द्रष्टव्यं खलु साधकैः
अध्वव्याप्तिमविज्ञाय शुद्धिं यः कर्तुमिच्छति २५
स विप्रलम्भकः शुद्धेर्नालम्प्रापयितुं फलम्
वृथा परिश्रमस्तस्य निरयायैव केवलम् २६
शक्तिपातसमायोगादृते तत्त्वानि तत्त्वतः
तद्व्याप्तिस्तद्विवृद्धिश्च ज्ञातुमेवं न शक्यते २७
शक्तिराज्ञा परा शैवी चिद्रूपा मरमेश्वरी
शिवोऽधितिष्ठत्यखिलं यया कारणभूतया २८
नात्मनो नैव मायैषा न विकारो विचारतः
न बंधो नापि मुक्तिश्च बंधमुक्तिविधायिनी २९
सर्वैश्वर्यपराकाष्टा शिवस्य व्यभिचारिणी
समानधर्मिणी तस्य तैस्तैर्भावैर्विशेषतः ३०
स तयैव गृही सापि तेनैव गृहिणी सदा
तयोरपत्यं यत्कार्यं परप्रकृतिजं जगत् ३१
स कर्ता कारणं सेति तयोर्भेदो व्यवस्थितः
एक एव शिवः साक्षादि्द्वधाऽसौ समवस्थितः ३२
स्त्रीपुंसभावेन तयोर्भेद इत्यपि केचन

अपरे तु परा शक्तिः शिवस्य समवायिनी ३३
प्रभेव भानोश्चिद्रूपा भिन्नैवेति व्यवस्थितः
तस्माच्छिवः परो हेतुस्तस्याज्ञा परमेश्वरी ३४
तयैव प्रेरिता शैवी मूलप्रकृतिरव्यया
महामाया च माया च प्रकृतिस्त्रिगुणेति च ३५
त्रिविधा कार्यवेधेन सा प्रसूते षडध्वनः
स वागर्थमयश्चाध्वा षड्विधो निखिलं जगत् ३६
अस्यैव विस्तरं प्राहुः शास्त्रजातमशेषतः ३७
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
वागर्थकतत्त्ववर्णनं नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः २९

अध्याय ३०

ऋषय ऊचुः
चरितानि विचित्राणि गृह्याणि गहनानि च
दुर्विज्ञेयानि देवैश्च मोहयंति मनांसि नः १
शिवयोस्तत्त्वसम्बन्धे न दोष उपलभ्यते
चरितैः प्राकृतो भावस्तयोरपि विभाव्यते २
ब्रह्मादयोऽपि लोकानां सृष्टिस्थित्यन्तहेतवः
निग्रहानुग्रहौ प्राप्य शिवस्य वशवर्तिनः ३
शिवः पुनर्न कस्यापि निग्रहानुग्रहास्पदम्
अतोऽनायत्तमैश्वर्यं तस्यैवेति विनिश्चितम् ४
यद्येवमीदृशैश्वर्य्यं तत्तु स्वातन्त्र्यलक्षणम्
स्वभावसिद्धं चैतस्य मूर्तिमत्तास्पदं भवेत् ५
न मूर्तिश्च स्वतंत्रस्य घटते मूलहेतुना
मूर्तेरपि च कार्यत्वात्तत्सिद्धिः स्यादहैतुकी ६

सर्वत्र परमो भावोऽपरमश्चान्य उच्यते
परमापरमौ भावौ कथमेकत्र संगतौ ७
निष्फलो हि स्वभावोऽस्य परमः परमात्मनः
स एव सकलः कस्मात्स्वभावो ह्यविपर्ययः ८
स्वभावो विपरीतश्चेत्स्वतंत्रः स्वेच्छया यदि
न करोति किमीशानो नित्यानित्यविपर्ययम् ९
मूर्तात्मा सकलः कश्चित्स चान्यो निष्फलः शिवः
शिवेनाधिष्ठितश्चेति सर्वत्र लघु कथ्यते १०
मूर्त्यात्मैव तदा मूर्तिः शिवस्यास्य भवेदिति
तस्य मूर्तौ मूर्तिमतोः पारतंत्र्यं हि निश्चितम् ११
अन्यथा निरपेक्षेण मूर्तिः स्वीक्रियते कथम्
मूर्तिस्वीकरणं तस्मान्मूर्तौ साध्यफलेप्सया १२
न हि स्वेच्छाशरीरत्वं स्वातंत्र्यायोपपद्यते
स्वेच्छैव तादृशी पुंसां यस्मात्कर्मानुसारिणी १३
स्वीकर्तुं स्वेच्छया देहं हातुं च प्रभवन्त्युत
ब्रह्मादयः पिशाचांताः किं ते कर्मातिवर्तिनः १४
इच्छया देहनिर्माणमिन्द्रजालोपमं विदुः
अणिमादिगुणैश्वर्य्यवशीकारानतिक्रमात् १५
विश्वरूपं दधद्विष्णुर्दधीचेन महर्षिणा
युध्यता समुपालब्धस्तद्रूपं दधता स्वयम् १६
सर्वस्मादधिकस्यापि शिवस्य परमात्मनः
शरीरवत्तयान्यात्मसाधर्म्यं प्रतिभाति नः १७
सर्वानुग्राहकं प्राहुश्शिवं परमकारणम्
स निर्गृह्णाति देवानां सर्वानुग्राहकः कथम् १८
चिच्छेद बहुशो देवो ब्रह्मणः पञ्चमं शिरः

शिवनिन्दां प्रकुर्व्वंतं पुत्रेति कुमतेर्हठात् १९
विष्णोरपि नृसिंहस्य रभसा शरभाकृतिः
बिभेद पद्मामाक्रम्य हृदयं नखरैः खरैः २०
देवस्त्रीषु च देवेषु दक्षस्याध्वरकारणात्
वीरेण वीरभद्रेण न हि कश्चिददण्डितः २१
पुरत्रयं च सस्त्रीकं सदैत्यं सह बालकैः
क्षणेनैकेन देवेन नेत्राग्नेरिंधनीकृतम् २२
प्रजानां रतिहेतुश्च कामो रतिपतिस्स्वयम्
क्रोशतामेव देवानां हुतो नेत्रहुताशने २३
गावश्च कश्चिद्दुग्धौघं स्रवन्त्यो मूर्ध्नि खेचराः
सरुषा प्रेक्ष्य देवेन तत्क्षणे भस्मसात्कृतः २४
जलंधरासुरो दीर्णश्चक्रीकृत्य जलं पदा
बद्ध्वानंतेन यो विष्णुं चिक्षेप शतयोजनम् २५
तमेव जलसंधायी शूलेनैव जघान सः
तच्चक्रं तपसा लब्ध्वा लब्धवीर्य्यो हरिस्सदा २६
जिघांसतां सुरारीणां कुलं निर्घृणचेतसाम्
त्रिशूलेनान्धकस्योरः शिखिनैवोपतापितम् २७
कण्ठात्कालांगनां सृष्ट्वा दारकोऽपि निपातितः
कौशिकीं जनयित्वा तु गौर्य्यास्त्वक्कोशगोचराम् २८
शुंभस्सह निशुंभेन प्रापितो मरणं रणे
श्रुतं च महदाख्यानं स्कान्दे स्कन्दसमाश्रयम् २९
वधार्थे तारकाख्यस्य दैत्येन्द्रस्येन्द्रविद्विषः
ब्रह्मणाभ्यर्थितो देवो मन्दरान्तःपुरं गतः ३०
विहृत्य सुचिरं देव्या विहाराऽतिप्रसङ्गतः
रसां रसातलं नीतामिव कृत्वाभिधां ततः ३१

देवीं च वंचयंस्तस्यां स्ववीर्यमतिदुर्वहम्
अविसृज्य विसृज्याग्नौ हविः पूतमिवामृतम् ३२
गंगादिष्वपि निक्षिप्य वह्निद्वारा तदंशतः
तत्समाहृत्य शनकैस्तोकंस्तोकमितस्ततः ३३
स्वाहया कृत्तिकारूपात्स्वभर्त्रा रममाणया
सुवर्णीभूतया न्यस्तं मेरौ शरवणे क्वचित् ३४
संदीपयित्वा कालेन तस्य भासा दिशो दश
रञ्जयित्वा गिरीन्सर्वान्कांचनीकृत्य मेरुणा ३५
ततश्चिरेण कालेन संजाते तत्र तेजसि
कुमारे सुकुमारांगे कुमाराणां निदर्शने ३६
तच्छैशवं स्वरूपं च तस्य दृष्ट्वा मनोहरम्
सह देवसुरैर्लोकैर्विस्मिते च विमोहिते ३७
देवोऽपि स्वयमायातः पुत्रदर्शनलालसः
सह देव्यांकमारोप्य ततोऽस्य स्मेरमाननम् ३८
पीतामृतमिव स्नेहविवशेनान्तरात्मना
देवेष्वपि च पश्यत्सु वीतरागैस्तपस्विभिः ३९
स्वस्य वक्षःस्थले स्वैरं नर्तयित्वा कुमारकम्
अनुभूय च तत्क्रीडां संभाव्य च परस्परम् ४०
स्तन्यमाज्ञापयन्देव्याः पाययित्वामृतोपमम्
तवावतारो जगतां हितायेत्यनुशास्य च ४१
स्वयन्देवश्च देवी च न तृप्तिमुपजग्मतुः
ततः शक्रेण संधाय बिभ्यता तारकासुरात् ४२
कारयित्वाभिषेकं च सेनापत्ये दिवौकसाम्
पुत्रमन्तरतः कृत्वा देवेन त्रिपुरद्विषा ४३
स्वयमंतर्हितेनैव स्कन्दमिन्द्रादिरक्षितम्

तच्छक्त्या क्रौञ्चभेदिन्या युधि कालाग्निकल्पया ४४
छेदितं तारकस्यापि शिरश्शक्रभिया सह
स्तुतिं चक्रुर्विशेषेण हरिधातृमुखाः सुराः ४५
तथा रक्षोधिपः साक्षाद्रावणो बलगर्वितः
उद्धरन्स्वभुजैर्दीर्घैः कैलासं गिरिमात्मनः ४६
तदागोऽसहमानस्य देवदेवस्य शूलिनः
पदांगुष्ठपरिस्पन्दान्ममज्ज मृदितो भुवि ४७
बटोः केनचिदर्थेन स्वाश्रितस्य गतायुषः
त्वरयागत्य देवेन पादांतं गमितोन्तकः ४८
स्ववाहनमविज्ञाय वृषेन्द्रं वडवानलः
सगलग्रहमानीतस्ततोऽस्त्येकोदकं जगत् ४९
अलोकविदितैस्तैस्तैर्वृत्तैरानन्दसुन्दरैः
अंगहारस्वसेनेदमसकृच्चालितं जगत् ५०
शान्त एव सदा सर्वमनुगृह्णाति चेच्छिवः
सर्वाणि पूरयेदेव कथं शक्तेन मोचयेत् ५१
अनादिकर्म वैचित्र्यमपि नात्र नियामकम्
कारणं खलु कर्मापि भवेदीश्वरकारितम् ५२
किमत्र बहुनोक्तेन नास्तिक्यं हेतुकारकम्
यथा ह्याशु निवर्तेत तथा कथय मारुत ५३

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
शिवतत्त्वप्रश्नो नाम त्रिंशोऽध्यायः ३०

अध्याय ३१

वायुरुवाच
स्थने संशयितं विप्रा भवद्भिर्हेतुचोदितैः

जिज्ञासा हि न नास्तिक्यं साधयेत्साधुबुद्धिषु १
प्रमणमत्र वद्यामि सताम्मोहनिवर्तकम्
असतां त्वन्यथाभावः प्रसादेन विना प्रभोः २
शिवस्य परिपूर्णस्य परानुग्रहमन्तरा
न किंचिदपि कर्तव्यमिति साधु विनिश्चितम् ३
स्वभाव एव पर्य्याप्तः परानुग्रहकर्मणि
अन्यथा निस्स्वभवेन न किमप्यनुगृह्यते ४
परं सर्वमनुग्राह्यं पशुपाशात्मकं जगत्
परस्यानुग्रहार्थं तु पत्युराज्ञासमन्वयः ५
पतिराज्ञापकः सर्वमनुगृह्णाति सर्व्वदा
तदर्थमर्थस्वीकारे परतंत्रः कथं शिवः ६
अनुग्राह्यनपेक्षोऽस्ति न हि कश्चिदनुग्रहः
अतः स्वातन्त्र्यशब्दार्थाननपेक्षत्वलक्षणः ७
एतत्पुनरनुग्राह्यं परतंत्रं तदिष्यते
अनुग्रहादृते तस्य भुक्तिमुक्त्योरनन्वयात् ८
मूर्तात्मनोऽप्यनुग्राह्या शिवाज्ञाननिवर्तनात्
अज्ञानाधिष्ठितं शम्भोर्न किंचिदिह विद्यते ९
येनोपलभ्यतेऽस्माभिस्सकलेनापि निष्कलः
स मूर्त्यात्मा शिवः शैवमूर्तिरित्युपचर्यते १०
न ह्यसौ निष्कलः साक्षाच्छिवः परमकारणम्
साकारेणानुभावेन केनाप्यनुपलक्षितः ११
प्रमाणगम्यतामात्रं तत्स्वभावोपपादकम्
न तावतात्रोपेक्षाधीरुपलक्षणमंतरा १२
आत्मोपमोल्वणं साक्षान्मूर्तिरिव हि काचन
शिवस्य मूर्तिर्मूर्त्यात्मा परस्तस्योपलक्षणम् १३

यथा काष्ठेष्वनारूढो न वह्निरुपलभ्यते
एवं शिवोऽपि मूर्त्यात्मन्यनारूढ इति स्थितिः १४
यथाग्निमानयेत्युक्ते ज्वलत्काष्ठादृते स्वयम्
नाग्निरानीयते तद्वत्पूज्यो मूर्त्यात्मना शिवः १५
अत एव हि पूजादौ मूर्त्यात्मपरिकल्पनम्
मूर्त्यात्मनि कृतं साक्षाच्छिव एव कृतं यतः १६
लिंगादावपि तत्कृत्यमर्चायां च विशेषतः
तत्तन्मूर्त्यात्मभावेन शिवोऽस्माभिरुपास्यते १७
यथानुगृह्यते सोऽपि मूर्त्यात्मा पारमेष्ठिना
तथा मूर्त्यात्मनिष्ठेन शिवेन पशवो वयम् १८
लोकानुग्रहणायैव शिवेन परमेष्ठिना
सदाशिवादयस्सर्वे मूर्त्यात्मनोऽप्यधिष्ठिताः १९
आत्मनामेव भोगाय मोक्षाय च विशेषतः
तत्त्वातत्त्वस्वरूपेषु मूर्त्यात्मसु शिवान्वयः २०
भोगः कर्मविपाकात्मा सुखदुःखात्मको मतः
न च कर्म शिवोऽस्तीति तस्य भोगः किमात्मकः २१
सर्वं शिवोऽनुगृह्णाति न निगृह्णाति किंचन
निगृह्णतां तु ये दोषाश्शिवे तेषामसंभवात् २२
ये पुनर्निग्रहाः केचिद्ब्रह्मादिषु निदर्शिताः
तेऽपि लोकहितायैव कृताः श्रीकण्ठमूर्तिना २३
ब्रह्माण्डस्याधिपत्यं हि श्रीकण्ठस्य न संशयः
श्रीकण्ठाख्यां शिवो मूर्तिं क्रीडतीमधितिष्ठति २४
सदोषा एव देवाद्या निगृहीता यथोदितम्
ततस्तेपि विपाप्मानः प्रजाश्चापि गतज्वराः २५
निग्रहोऽपि स्वरूपेण विदुषां न जुगुप्सितः

अत एव हि दण्डयेषु दण्डो राज्ञां प्रशस्यते २६
यत्सिद्धिरीश्वरत्वेन कार्यवर्गस्य कृत्स्नशः
न स चेदीशतां कुर्याज्जगतः कथमीश्वरः २७
ईशेच्छा च विधातृत्वं विधेराज्ञापनं परम्
आज्ञावश्यमिदं कुर्यान्न कुर्यादिति शासनम् २८
तच्छासनानुवर्तित्वं साधुभावस्य लक्षणम्
विपरीतसमाधोः स्यान्न सर्वं तत्तु दृश्यते २९
साधु संरक्षणीयं चेद्विनिवर्त्यमसाधु यत्
निवर्तते च सामादेरंते दण्डो हि साधनम् ३०
हितार्थलक्षणं चेदं दण्डान्तमनुशासनम्
अतो यद्विपरीतं तदहितं संप्रचक्षते ३१
हिते सदा निषण्णानामीश्वरस्य निदर्शनम्
स कथं दुष्यते सद्भिरसतामेव निग्रहात् ३२
अयुक्तकारिणो लोके गर्हणीयाविवेकिता
यदुद्वेजयते लोकन्तदयुक्तं प्रचक्षते ३३
सर्वोऽपि निग्रहो लोके न च विद्वेषपूर्वकः
न हि द्वेष्टि पिता पुत्रं यो निगृह्माति शिक्षयेत् ३४
माध्यस्थेनापि निग्राह्यान्यो निगृह्णाति मार्गतः
तस्याप्यवश्यं यत्किंचिन्नैर्घृण्यमनुवर्तते ३५
अन्यथा न हिनस्त्येव सदोषानप्यसौ परान्
हिनस्ति चायमप्यज्ञान्परं माध्यस्थ्यमाचरन् ३६
तस्माद्दुःखात्मिकां हिंसां कुर्वाणो यः सनिर्घृणः
इति निर्बंधयंत्येके नियमो नेति चापरे ३७
निदानज्ञस्य भिषजो रुग्णो हिंसां प्रयुंजतः
न किंचिदपि नैर्घृण्यं घृणैवात्र प्रयोजिका ३८

घृणापि न गुणायैव हिंस्रेषु प्रतियोगिषु
तादृशेषु घृणी भ्रान्त्या घृणान्तरितनिर्घृणः ३९
उपेक्षापीह दोषाह रक्ष्येषु प्रतियोगिषु
शक्तौ सत्यामुपेक्षातो रक्ष्यस्सद्यो विपद्यते ४०
सर्पस्याऽऽस्यगतम्पश्यन्यस्तु रक्ष्यमुपेक्षते
दोषाभासान्समुत्प्रेक्ष्य फलतः सोऽपि निर्घृणः ४१
तस्माद् घृणा गुणायैव सर्वथेति न संमतम्
संमतं प्राप्तकामित्वं सर्वं त्वन्यदसम्मतम् ४२
मूर्त्यात्मस्वपि रागाद्या दोषाः सन्त्येव वस्तुतः
तथापि तेषामेवैते न शिवस्य तु सर्वथा
अग्नावपि समाविष्टं ताम्रं खलु सकालिकम् ४३
इति नाग्निरसौ दुष्येत्ताम्रसंसर्गकारणात्
नाग्नेरशुचिसंसर्गादशुचित्वमपेक्षते ४४
अशुचेस्त्वग्निसंयोगाच्छुचित्वमपि जायते
एवं शोध्यात्मसंसर्गान्न ह्यशुद्धः शिवो भवेत् ४५
शिवसंसर्गतस्त्वेष शोध्यात्मैव हि शुध्यति
अयस्यग्नौ समाविष्टे दाहोऽग्नेरेव नायसः ४६
मूर्त्तात्मन्येवमैश्वर्य्यमीश्वरस्यैव नात्मनाम्
न हि काष्ठं ज्वलत्यूर्द्ध्वमग्निरेव ज्वलत्यसौ ४७
काष्ठस्यांगारता नाग्नेरेवमत्रापि योज्यताम्
अत एव जगत्यस्मिन्काष्ठपाषाणमृत्स्वपि ४८
शिवावेशवशादेव शिवत्वमुपचर्यते
मैत्र्यादयो गुणा गौणास्तस्मात्ते भिन्नवृत्तयः ४९
तैर्गुणैरुपरक्तानां दोषाय च गुणाय च
यत्तु गौणमगौणं च तत्सर्वमनुगृह्णतः

न गुणाय न दोषाय शिवस्य गुणवृत्तयः ५०
न चानुग्रहशब्दार्थं गौणमाहुर्विपश्चितः
संसारमोचनं किं तु शैवमाज्ञामयं हितम् ५१
हितं तदाज्ञाकरणं यद्धितं तदनुग्रहः
सर्वं हिते नियुञ्जावः सर्वानुग्रहकारकः ५२
यस्तूपकारशब्दार्थस्तमप्याहुरनुग्रहम्
तस्यापि हितरूपत्वाच्छिवः सर्वोपकारकः ५३
हिते सदा नियुक्तं तु सर्वं चिदचिदात्मकम्
स्वभावप्रतिबन्धं तत्समं न लभते हितम् ५४
यथा विकासयत्येव रविः पद्मानि भानुभिः
समं न विकसन्त्येव स्वस्वभावानुरोधतः ५५
स्वभावोऽपि हि भावानां भाविनोऽर्थस्य कारणम्
न हि स्वभावो नश्यन्तमर्थं कर्तृषु साधयेत् ५६
सुवर्णमेव नांगारं द्रावयत्यग्निसंगमः
एवं पक्वमलानेव मोचयेन्न शिवपरान् ५७
यद्यथा भवितुं योग्यं तत्तथा न भवेत्स्वयम्
विना भावनया कर्ता स्वतन्त्रस्सन्ततो भवेत् ५८
स्वभावविमलो यद्वत्सर्वानुग्राहकश्शिवः
स्वभावमलिनास्तद्वदात्मनो जीवसंज्ञिताः ५९
अन्यथा संसरन्त्येते नियमान्न शिवः कथम्
कर्ममायानुबन्धोस्य संसारः कथ्यते बुधैः ६०
अनुबन्धोऽयमस्यैव न शिवस्येति हेतुमान्
स हेतुरात्मनामेव निजो नागन्तुको मलः ६१
आगन्तुकत्वे कस्यापि भाव्यं केनापि हेतुना
योऽयं हेतुरसावेकस्त्वविचित्रस्वभावतः ६२

आत्मतायाः समत्वेऽपि बद्धा मुक्ताः परे यतः
बद्धेष्वेव पुनः केचिल्लयभोगाधिकारतः ६३
ज्ञानैश्वर्यादिवैषम्यं भजन्ते सोत्तराधराः
केचिन्मूर्त्यात्मतां यान्ति केचिदासन्नगोचराः ६४
मूर्त्यात्मसु शिवाः केचिदध्वनां मूर्द्धसु स्थिताः
मध्ये महेश्वरा रुद्रास्त्ववर्वाचीनपदे स्थिताः ६५
आसन्नेऽपि च मायायाः परस्मात्कारणात्त्रयम्
तत्राप्यात्मा स्थितोऽधस्तादन्तरात्मा च मध्यतः ६६
परस्तात्परमात्मेति ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः
वर्तन्ते वसवः केचित्परमात्मपदाश्रयाः ६७
अन्तरात्मपदे केचित्केचिदात्मपदे तथा
शान्त्यतीतपदे शैवाः शान्ते माहेश्वरे ततः ६८
विद्यायान्तु यथा रौद्राः प्रतिष्ठायां तु वैष्णवाः
निवृत्तौ च तथात्मानो ब्रह्मा ब्रह्मांगयोनयः ६९
देवयोन्यष्टकं मुख्यं मानुष्यमथ मध्यमम्
पद्म्यादयोऽधमाः पंचयोनयस्ताश्चतुर्दश ७०
उत्तराधरभावोऽपि ज्ञेयस्संसारिणो मलः
यथामभावो मुक्तस्य पूर्वं पश्चात्तु पक्वता ७१
मलोऽप्यामश्च पक्वश्च भवेत्संसारकारणम्
आमे त्वधरता पुंसां पक्वे तूत्तरता क्रमात् ७२
पश्चात्मानस्त्रिधाभिन्ना एकद्वित्रिमलाः क्रमात्
अत्रोत्तरा एकमला द्विमला मध्यमा मताः
त्रिमलास्त्वधमा ज्ञेया यथोत्तरमधिष्ठिताः ७३
त्रिमलानधितिष्ठंति द्विमलैकमलाः क्रमात्
इत्थमौपाधिको भेदो विश्वस्य परिकल्पितः ७४

एकद्वित्रिमलान्सर्वाञ्छिव एकोऽधितिष्ठति
अशिवात्मकमप्येतच्छिवेनाधिष्ठितं यथा ७५
अरुद्रात्मकमित्येवं रुद्रैर्जगदधिष्ठितम्
अराडान्ता हि महाभूमिश्शतरुद्राद्यधिष्ठिता ७६
मायान्तमन्तरिक्षं तु ह्यमरेशादिभिः क्रमात्
अंगुष्ठमात्रपर्यन्तैस्समंतात्संततं ततम् ७७
महामायावसाना द्यौर्वाय्वाद्यैर्भुवनाधिपैः
अनाश्रितान्तैरध्वान्तर्वर्त्तिभिस्समधिष्ठिताः ७८
ते हि साक्षाद्दिविषदस्त्वन्तरिक्षसदस्तथा
पृथिवीपद इत्येवं देवा देवव्रतैः स्तुता ७९
एवन्त्रिभिर्मलैरामैः पक्वैरेव पृथक्पृथक्
निदानभूतैस्संसाररोगः पुंसां प्रवर्तते ८०
अस्य रोगस्य भैषज्यं ज्ञानमेव न चापरम्
भिषगाज्ञापकः शम्भुश्शिवः परमकारणम् ८१
अदुःखेनाऽपि शक्तोऽसौ पशून्मोचयितुं शिवः
कथं दुःखं करोतीति नात्र कार्या विचारणा ८२
दुःखमेव हि सर्वोऽपि संसार इति निश्चितम्
कथं दुःखमदुःखं स्यात्स्वभावो ह्यविपर्ययः ८३
न हि रोगी ह्यरोगी स्याद्भिषग्भैषज्यकारणात्
रोगार्तं तु भिषग्रोगाद्भैषजैस्सुखमुद्धरेत् ८४
एवं स्वभावमलिनान्स्वभावाद्दुःखिनः पशून्
स्वाज्ञौषधविधानेन दुःखान्मोचयते शिवः ८५
न भिषक्कारणं रोगे शिवः संसारकारणम्
इत्येतदपि वैषम्यं न दोषायास्य कल्पते ८६
दुःखे स्वभावसंसिद्धे कथन्तत्कारणं शिवः

स्वाभाविको मलः पुंसां स हि संसारयत्यमून् ८७
संसारकारणं यत्तु मलं मायाद्यचेतनम्
तत्स्वयं न प्रवर्तेत शिवसान्निध्यमन्तरा ८८
यथा मणिरयस्कांतस्सान्निध्यादुपकारकः
अयसश्चलतस्तद्वच्छिवोऽप्यस्येति सूरयः ८९
न निवर्तयितुं शक्यं सान्निध्यं सदकारणम्
अधिष्ठाता ततो नित्यमज्ञातो जगतश्शिवः ९०
न शिवेन विना किंचित्प्रवृत्तमिह विद्यते
तत्प्रेरितमिदं सर्वं तथापि न स मुह्यति ९१
शक्तिराज्ञात्मिका तस्य नियन्त्री विश्वतोमुखी
तया ततमिदं शश्वत्तथापि स न दुष्यति ९२
अनिदं प्रथमं सर्वमीशितव्यं स ईश्वरः
ईशनाच्च तदीयाज्ञा तथापि स न दुष्यति ९३
योऽन्यथा मन्यते मोहात्स विनष्यति दुर्मतिः
तच्छक्तिवैभवादेव तथापि स न दुष्यति ९४
एतस्मिन्नंतरे व्योम्नः श्रुताः वागरीरिणी
सत्यमोममृतं सौम्यमित्याविरभवत्स्फुटम् ९५
ततो हृष्टतराः सर्व्वे विनष्टाशेषसंशयाः
मुनयो विस्मयाविष्टाः प्रेणेमुः पवनं प्रभुम् ९६
तथा विगतसन्देहान्कृत्वापि पवनो मुनीन्
नैते प्रतिष्ठितज्ञाना इति मत्वैवमब्रवीत् ९७
वायुरुवाच्व
परोक्षमपरोक्षं च द्विविधं ज्ञानमिष्यते
परोक्षमस्थिरं प्राहुरपरोक्षं तु सुस्थिरम् ९८
हेतूपदेशगम्यं यत्तत्परोक्षं प्रचक्षते

अपरोक्षं पुनः श्रेष्ठादनुष्ठानाद्भविष्यति ९९
नापरोक्षादृते मोक्ष इति कृत्वा विनिश्चयम्
श्रेष्ठानुष्ठानसिद्ध्यर्थं प्रयतध्वमतन्द्रिताः १००
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
ज्ञानोपदेशो नामैकत्रिंशोऽध्यायः ३१

अध्याय ३२

ऋषय ऊचुः
किं तच्छ्रेष्टमनुष्ठानं मोक्षो येनपरोक्षितः
तत्तस्य साधनं चाद्य वक्तुमर्हसि मारुत १
वायुरुवाच
शैवो हि परमो धर्मः श्रेष्ठानुष्ठानशब्दितः
यत्रापरोक्षो लक्ष्येत साक्षान्मोक्षप्रदः शिवः २
स तु पंचविधो ज्ञेयः पंचभिः पर्वभिः क्रमात्
क्रियातपोजपध्यानज्ञानात्मभिरनुत्तरैः ३
तैरेव सोत्तरैस्सिद्धो धर्मस्तु परमो मतः
परोक्षमपरोक्षं च ज्ञानं यत्र च मोक्षदम् ४
परमोऽपरमश्चोभौ धर्मौ हि श्रुतिचोदितौ
धर्मशब्दाभिधेयेर्थे प्रमाणं श्रुतिरेव नः ५
परमो योगपर्यन्तो धर्मः श्रुतिशिरोगतः
धर्मस्त्वपरमस्तद्वदधः श्रुतिमुखोत्थितः ६
अपश्चात्माधिकारत्वाद्यो धरमः परमो मतः
साधारणस्ततोऽन्यस्तु सर्वेषामधिकारतः ७
स चायं परमो धर्मः परधर्मस्य साधनम्
धर्मशास्त्रादिभिस्सम्यक् सांग एवोपबृंहितः ८

शैवो यः परमो धर्मः श्रेष्ठानुष्ठानशब्दितः
इतिहासपुराणाभ्यां कथंचिदुपबृंहितः ९
शैवागमैस्तु संपन्नः सहांगोपांविस्तरः
तत्संस्काराधिकारैश्च सम्यगेवोपबृंहितः १०
शैवागमो हि द्विविधः श्रौतोऽश्रौतश्च संस्कृतः
श्रुतिसारमयः श्रौतस्स्वतंत्र इतरो मतः ११
स्वतंत्रो दशधा पूर्वं तथाष्टादशधा पुनः
कामिकादिसमाख्याभिस्सिद्धः सिद्धान्तसंज्ञितः १२
श्रुतिसारमयो यस्तु शतकोटिप्रविस्तरः
परं पाशुपतं यत्र व्रतं ज्ञानं च कथ्यते १३
युगावर्तेषु शिष्येत योगाचार्य्यस्वरूपिणा
तत्रतत्रावतीर्णेन शिवेनैव प्रवर्त्यते १४
संक्षिप्यास्य प्रवक्तारश्चत्वारः परमर्षय
रुरुर्दधीचोऽगस्त्यश्च उपमन्युर्महायशाः १५
ते च पाशुपता ज्ञेयास्संहितानां प्रवर्तकाः
तत्संततीया गुरवः शतशोऽथ सहस्रशः १६
तत्रोक्तः परमो धर्मश्चर्याद्यात्मा चतुर्विधः
तेषु पाशुपतो योगः शिवं प्रत्यक्षयेद्दृढम् १७
तस्माच्छ्रेष्ठमनुष्ठानं योगः पाशुपतो मतः
तत्राप्युपायको युक्तो ब्रह्मणा स तु कथ्यते १८
नामाष्टकमयो योगश्शिवेन परिकल्पितः
तेन योगेन सहसा शैवी प्रज्ञा प्रजायते १९
प्रज्ञया परमं ज्ञानमचिराल्लभते स्थिरम्
प्रसीदति शिवस्तस्य यस्य ज्ञानं प्रतिष्ठितम् २०
प्रसादात्परमो योगो यः शिवं चापरोक्षयेत्

शिवापरोक्षात्संसारकारणेन वियुज्यते २१
ततः स्यान्मुक्तसंसारो मुक्तः शिवसमो भवेत्
ब्रह्मप्रोक्त इत्युपायः स एव पृथगुच्यते २२
शिवो महेश्वरश्चैव रुद्रो विष्णुः पितामहः
संसारवैद्यः सर्वज्ञः परमात्मेति मुख्यतः २३
नामाष्टकमिदं मुख्यं शिवस्य प्रतिपादकम्
आद्यन्तु पञ्चकं ज्ञेयं शान्त्यतीताद्यनुक्रमात् २४
संज्ञा सदाशिवादीनां पंचोपाधिपरिग्रहात्
उपाधिविनिवृत्तौ तु यथास्वं विनिवर्तते २५
पदमेव हि तन्नित्यमनित्याः पदिनः स्मृताः
पदानां प्रतिकृत्तौ तु मुच्यन्ते पदिनो यतः २६
परिवृत्त्यन्तरे भूयस्तत्पदप्राप्तिरुच्यते
आत्मान्तराभिधानं स्याद्यदाद्यं नाम पञ्चकम् २७
अन्यत्तु त्रितयं नाम्नामुपादानादियोगतः
त्रिविधोपाधिवचनाच्छिव एवानुवर्तते २८
अनादिमलसंश्लेषः प्रागभावात्स्वभावतः
अत्यंतं परिशुद्धात्मेत्यतोऽयं शिव उच्यते २९
अथवाशेषकल्याणगुणैकधन ईश्वरः
शिव इत्युच्यते सद्भिश्शिवतत्त्वार्थवादिभिः ३०
त्रयोविंशतितत्त्वेभ्यः प्रकृतिर्हि परा मता
प्रकृतेस्तु परं प्राहुः पुरुषं पञ्चविंशकम् ३१
यं वेदादौ स्वरं प्राहुर्वाच्यवाचकभावतः
वेदैकवेद्ययाथात्म्याद्वेदान्ते च प्रतिष्ठितः ३२
तस्य प्रकृतिलीनस्य यः परस्स महेश्वरः
तदधीनप्रवृत्तित्वात्प्रकृतेः पुरुषस्य च ३३

अथवा त्रिगुणं तत्त्वमुपेयमिदमव्ययम्
मायान्तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम् ३४
मायाविक्षोभकोऽनंतो महेश्वरसमन्वयात्
कालात्मा परमात्मादिः स्थूलः सूक्ष्मः प्रकीर्तितः ३५
रुद्दुःखं दुःखहेतुर्वा तद्रावयति नः प्रभुः
रुद्र इत्युच्यते सद्भिः शिवः परमकारणम् ३६
तत्त्वादिभूतपर्यन्तं शरीरादिष्वतन्द्रितः
व्याप्याधितिष्ठति शिवस्ततो रुद्र इतस्ततः ३७
जगतः पितृभूतानां शिवो मूर्त्यात्मनामपि
पितृभावेन सर्वेषां पितामह उदीरितः ३८
निदानज्ञो यथा वैद्यो रोगस्य विनिवर्तकः
उपायैर्भेषजैस्तद्वल्लयभोगाधिकारतः ३९
संसारस्येश्वरो नित्यं समूलस्य निवर्तकः
संसारवैद्य इत्युक्तः सर्वतत्त्वार्थवेदिभिः ४०
दशार्थज्ञानसिद्ध्यर्थमिन्द्रियेष्वेषु सत्स्वपि
त्रिकालभाविनो भावान्स्थूलान्सूक्ष्मानशेषतः ४१
अणवो नैव जानन्ति माययैव मलावृताः
असत्स्वपि च सर्वेषु सर्वार्थज्ञानहेतुषु ४२
यद्यथावस्थितं वस्तु तत्तथैव सदाशिवः
अयत्नेनैव जानाति तस्मात्सर्वज्ञ उच्यते ४३
सर्वात्मा परमैरेभिर्गुणैर्नित्यसमन्वयात्
स्वस्मात्परात्मविरहात्परमात्मा शिवः स्वयम् ४४
नामाष्टकमिदं चैव लब्ध्वाचार्यप्रसादतः
निवृत्त्यादिकलाग्रन्थिं शिवाद्यैः पंचनामभिः ४५
यथास्वं क्रमशश्छित्वा शोधयित्वा यथागुणम्

गुणितैरेव सोद्धातैरनिरुद्धैरथापि वा ४६
हृत्कण्ठतालुभ्रूमध्यब्रह्मरन्ध्रसमन्विताम्
छित्त्वा पर्यष्टकाकारं स्वात्मानं च सुषुम्णया ४७
द्वादशांतःस्थितस्येन्दोर्नीत्वोपरि शिवौजसि
संहृत्यं वदनं पश्चाद्यथासंस्करणं लयात् ४८
शाक्तेनामृतवर्षेण संसिक्तायां तनौ पुनः
अवतार्य स्वमात्मानममृतात्माकृतिं हृदि ४९
द्वादशांतःस्थितस्येन्दोः परस्ताच्छ्वेतपंकजे
समासीनं महादेवं शंकरम्भक्तवत्सलम् ५०
अर्द्धनारीश्वरं देवं निर्मलं मधुराकृतिम्
शुद्धस्फटिकसंकाशं प्रसन्नं शीतलद्युतिम् ५१
ध्यात्वा हि मानसे देवं स्वस्थचित्तोऽथ मानवः
शिवनामाष्टकेनैव भावपुष्पैस्समर्चयेत् ५२
अभ्यर्च्चनान्ते तु पुनः प्राणानायम्य मानवः
सम्यक्चित्तं समाधाय शार्वं नामाष्टकं जपेत् ५३
नाभौ चाष्टाहुतीर्हुत्वा पूर्णाहुत्या नमस्ततः
अष्टपुष्पप्रदानेन कृत्वाभ्यर्च्चनमंतिमम् ५४
निवेदयेत्स्वमात्मानं चुलुकोदकवर्त्मना
एवं कृत्वा चिरादेव ज्ञानं पाशुपतं शुभम् ५५
लभते तत्प्रतिष्ठां च वृत्तं चानुत्तमं तथा
योगं च परमं लब्ध्वा मुच्यते नात्र संशयः ५६

इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
श्रेष्ठानुष्ठानवर्णनं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ३२

अध्याय ३३

ऋषय ऊचुः
भगवञ्छ्रोतुमिच्छामो व्रतं पाशुपतं परम्
ब्रह्मादयोऽपि यत्कृत्वा सर्वे पाशुपताः स्मृताः १
वायुरुवाच
रहस्यं वः प्रवक्ष्यामि सर्वपापनिकृन्तनम्
व्रतं पाशुपतं श्रौतमथर्वशिरसि श्रुतम् २
कालश्चैत्री पौर्णमासी देशः शिवपरिग्रहः
क्षेत्रारामाद्यरण्यं वा प्रशस्तश्शुभलक्षणः ३
तत्र पूर्वं त्रयोदश्यां सुस्नातः सुकृताह्निकः
अनुज्ञाप्य स्वमाचार्यं संपूज्य प्रणिपत्य च ४
पूजां वैशेषिकीं कृत्वा शुक्लांबरधरः स्वयम्
शुक्लयज्ञोपवीती च शुक्लमाल्यानुलेपनः ५
दर्भासने समासीनो दर्भमुष्टिं प्रगृह्य च
प्राणायामत्रयं कृत्वा प्राग्मुखो वाप्युदग्मुखः
ध्यात्वा देवं च देवीं च तद्विज्ञापनवर्त्मना ६
व्रतमेतत्करोमीति भवेत्संकल्प्य दीक्षितः
यावच्छरीरपातं वा द्वादशाब्दमथापि वा ७
तदर्धं वा तदर्धं वा मासद्वादशकं तु वा
तदर्धं वा तदर्धं वा मासमेकमथापि वा ८
दिनद्वादशकं वाऽथ दिनषट्कमथापि वा
तदर्धं दिनमेकं वा व्रतसंकल्पनावधि ९
अग्निमाधाय विधिवद्विरजाहोमकारणात्
हुत्वाज्येन समिद्भिश्च चरुणा च यथाक्रमम् १०
पूर्णामापूर्य तां भूयस्तत्त्वानां शुद्धिमुद्दिशन्

जुहुयान्मूलमन्त्रेण तैरेव समिदादिभिः ११
तत्त्वान्येतानि मद्देहे शुद्ध्यंताम् इत्यनुस्मरन्
पञ्चभूतानि तन्मात्राः पञ्चकर्मेन्द्रियाणि च १२
ज्ञानकर्मविभेदेन पञ्चकर्मविभागशः
त्वगादिधातवस्सप्त पञ्च प्राणादिवायवः १३
मनोबुद्धिरहं ख्यातिर्गुणाः प्रकृतिपूरुषौ
रागो विद्याकले चैव नियतिः काल एव च १४
माया च शुद्धिविद्या च महेश्वरसदाशिवौ
शक्तिश्च शिवतत्त्वं च तत्त्वानि क्रमशो विदुः १५
मन्त्रैस्तु विरजैर्हुत्वा होतासौ विरजा भवेत्
शिवानुग्रहमासाद्य ज्ञानवान्स हि जायते १६
अथ गोमयमादाय पिण्डीकृत्याभिमंत्र्य च
विन्यस्याग्नौ च सम्प्रोक्ष्य दिने तस्मिन्हविष्यभुक् १७
प्रभाते तु चतुर्दश्यां कृत्वा सर्वं पुरोदितम्
दिने तस्मिन्निराहारः कालं शेषं समापयेत् १८
प्रातः पर्वणि चाप्येवं कृत्वा होमा वसानतः
उपसंहृत्य रुद्राग्निं गृह्णीयाद्भस्म यत्नतः १९
ततश्च जटिलो मुण्डी शिखैकजट एव वा
भूत्वा स्नात्वा ततो वीतलज्जश्चेत्स्याद्दिगम्बरः २०
अपि काषायवसनश्चर्मचीराम्बरोऽथ वा
एकाम्बरो वल्कली वा भवेद्दण्डी च मेखली २१
प्रक्षाल्य चरणौ पश्चाद्द्विराचम्यात्मनस्तनुम्
संकुलीकृत्य तद्भस्म विरजानलसंभवम् २२
अग्निरित्यादिभिर्मंत्रैः षड्भिराथर्वणैः क्रमात्
विभृज्यांगानि मूर्द्धादिचरणांतानि तैस्स्पृशेत् २३

ततस्तेन क्रमेणैव समुद्धृत्य च भस्मना
सर्वांगोद्धूलनं कुर्यात्प्रणवेन शिवेन वा २४
ततस्त्रिपुण्ड्रं रचयेत्त्रियायुषसमाह्वयम्
शिवभावं समागम्य शिवयोगमथाचरेत् २५
कुर्यात्स्त्रिसन्ध्यमप्येवमेतत्पाशुपतं व्रतम्
भुक्तिमुक्तिप्रदं चैतत्पशुत्वं विनिवर्तयेत् २६
तत्पशुत्वं परित्यज्य कृत्वा पाशुपतं व्रतम्
पूजनीयो महादेवो लिंगमूर्तिस्सनातनः २७
पद्ममष्टदलं हैमं नवरत्नैरलंकृतम्
कर्णिकाकेशरोपेतमासनं परिकल्पयेत् २८
विभवे तदभावे तु रक्तं सितमथापि वा
पद्मं तस्याप्यभावे तु केवलं भावनामयम् २९
तत्पद्मकर्णिकामध्ये कृत्वा लिंगं कनीयसम्
स्फीटिकं पीठिकोपेतं पूजयेद्विधिवत्क्रमात् ३०
प्रतिष्ठाप्य विधानेन तल्लिंगं कृतशोधनम्
परिकल्प्यासनं मूर्तिं पंचवक्त्रप्रकारतः ३१
पंचगव्यादिभिः पूर्णैर्यथाविभवसंभृतैः
स्नापयेत्कलशैः पूर्णैरष्टापदसमुद्भवैः ३२
गंधद्रव्यैस्सकर्पूरैश्चन्दनाद्यैस्सकुंकुमैः
सवेदिकं समालिप्य लिंगं भूषणभूषितम् ३३
बिल्वपत्रैश्च पद्मैश्च रक्तैः श्वेतैस्तथोत्पलैः
नीलोत्पलैस्तथान्यैश्च पुष्पैस्तैस्तैस्सुगंधिभिः ३४
पुण्यैः प्रशस्तैः पत्रैश्च चित्रैर्दूर्वाक्षतादिभिः
समभ्यर्च्य यथालाभं महापूजाविधानतः ३५
धूपं दीपं तथा चापि नैवेद्यं च समादिशेत्

निवेदयित्वा विभवे कल्याणं च समाचरेत् ३६
इष्टानि च विशिष्टानि न्यायेनोपार्जितानि च
सर्वद्रव्याणि देयानि व्रते तस्मिन्विशेषतः ३७
श्रीपत्रोत्पलपद्मानां संख्या साहस्त्रिकी मता
प्रत्येकमपरा संख्या शतमष्टोत्तरं द्विजाः ३८
तत्रापि च विशेषेण न त्यजेद्बिल्वपत्रकम्
हैममेकं परं प्राहुः पद्मं पद्मसहस्त्रकात् ३९
नीलोत्पलादिष्वप्येतत्समानं बिल्बपत्रकैः
पुष्पान्तरे न नियमो यथालाभं निवेदयेत् ४०
अष्टाण्गमर्घ्यमुत्कृष्टं धूपालेपौ विशेषतः
चन्दनं वामदेवाख्ये हरितालं च पौरुषे ४१
ईशाने भसितं केचिदालेपनमितीदृशाम्
न धूपमिति मन्यन्ते धूपान्तरविधानतः
सितागुरुमघोराख्ये मुखे कृष्णागुरुं पुनः ४२
पौरुषे गुग्गुलं सव्ये सौम्ये सौगंधिकं मुखे
ईशानेऽपि ह्युशीरादि देयाद्धूपं विशेषतः ४३
शर्करामधुकर्पूरकपिलाघृतसंयुतम्
चंदनागुरुकाष्ठाद्यं सामान्यं संप्रचक्षते ४४
कर्पूरवर्तिराज्याढ्या देया दीपावलिस्ततः
अर्घ्यमाचमनं देयं प्रतिवक्त्रमतः परम् ४५
प्रथमावरणे पूज्यो क्रमाद्धेरम्बषण्मुखौ
ब्रह्मांगानि ततश्चैव प्रथमावरणेर्चिते ४६
द्वितीयावरणे पूज्या विघ्नेशाश्चक्रवर्तिनः
तृतीयावरणे पूज्या भवाद्या अष्टमूर्तयः ४७
महादेवादयस्तत्र तथैकादशमूर्तयः

चतुर्थावरणे पूज्याः सर्व एव गणेश्वराः ४८
बहिरेव तु पद्मस्य पंचमावरणे क्रमात्
दशदिक्पतयः पूज्याः सास्त्राः सानुचरास्तथा ४९
ब्रह्मणो मानसाः पुत्राः सर्वेऽपि ज्योतिषां गणाः
सर्वा देव्यश्च देवाश्च सर्वे सर्वे च खेचराः ५०
पातालवासिनश्चान्ये सर्वे मुनिगणा अपि
योगिनो हि सखास्सर्वे पतंगा मातरस्तथा ५१
क्षेत्रपालाश्च सगणाः सर्वं चैतच्चराचरम्
पूजनीयं शिवप्रीत्या मत्त्वा शंभुविभूतिमत् ५२
अथावरणपूजांते संपूज्य परमेश्वरम्
साज्यं सव्यं जनं हृद्यं हविर्भक्त्या निवेदयेत् ५३
मुखवासादिकं दत्त्वा ताम्बूलं सोपदंशकम्
अलंकृत्य च भूयोऽपि नानापुष्पविभूषणैः ५४
नीराजनांते विस्तीर्य पूजाशेषं समापयेत्
चषकं सोपकारं च शयनं च समर्पयेत् ५५
चन्द्रसंकाशहारं च शयनीयं समर्पयेत्
आद्यं नृपोचितं हृद्यं तत्सर्वमनुरूपतः ५६
कृत्वा च कारयित्वा च हित्वा च प्रतिपूजनम्
स्तोत्रं व्यपोहनं जप्त्वा विद्यां पंचाक्षरीं जपेत् ५७
प्रदक्षिणां प्रणामं च कृत्वात्मानं समर्पयेत्
ततः पुरस्ताद्देवस्य गुरुविप्रौ च पूजयेत् ५८
दत्त्वार्घ्यमष्टौ पुष्पाणि देवमुद्वास्य लिंगतः
अग्नेश्चाग्निं सुसंयम्य ह्युद्वास्य च तमप्युत ५९
प्रत्यहं च जनस्त्वेवं कुर्यात्सेवां पुरोदिताम्
ततस्तत्साम्बुजं लिंगं सर्वोपकरणान्वितम् ६०

समर्पयेत्स्वगुरवे स्थापयेद्वा शिवालये
संपूज्य च गुरून्विप्रान्व्रतिनश्च विशेषतः ६१
भक्तान्द्विजांश्च शक्तश्चेद्दीनानाथांश्च तोषयेत्
स्वयं चानशने शक्तः फलमूलाशनेऽथ वा ६२
पयोव्रतो वा भिक्षाशी भवेदेकाशनस्तथा
नक्तं युक्ताशनो नित्यं भूशय्यानिरतः शुचिः ६३
भस्मशायी तृणेशायी चीराजिनधृतोऽथवा
ब्रह्मचर्यव्रतो नित्यं व्रतमेतत्समाचरेत् ६४
अर्कवारे तथार्द्रायां पंचदश्यां च पक्षयोः
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां शक्तस्तूपवसेदपि ६५
पाखण्डिपतितोदक्यास्सूतकान्त्यजपूर्वकान्
वर्जयेत्सर्वयत्नेन मनसा कर्मणा गिरा ६६
क्षमदानदयासत्याहिंसाशीलः सदा भवेत्
संतुष्टश्च प्रशान्तश्च जपध्यानरतस्तथा ६७
कुर्यात्त्रिषवणस्नानं भस्मस्नानमथापि वा
पूजां वैशेषिकीं चैव मनसा वचसा गिरा ६८
बहुनात्र किमुक्तेन नाचरेदशिवं व्रती
प्रमादात्तु तथाचारे निरूप्य गुरुलाघवे ६९
उचितां निष्कृतिं कुर्यात्पूजाहोमजपादिभिः
आसमाप्तेर्व्रतस्यैवमाचरेन्न प्रमादतः ७०
गोदानं च वृषोत्सर्गं कुर्यात्पूजां च संपदा
भक्तश्च शिवप्रीत्यर्थं सर्वकामविवर्जितः ७१
सामान्यमेतत्कथितं व्रतस्यास्य समासतः
प्रतिमासं विशेषं च प्रवदामि यथाश्रुतम् ७२
वैशाखे वज्रलिंगं तु ज्येष्ठे मारकतं शुभम्

आषाढे मौक्तिकं विद्याच्छ्रावणे नीलनिर्मितम् ७३
मासे भाद्रपदे चैव पद्मरागमयं परम्
आश्विने मासि विद्याद्वै लिंगं गोमेदकं वरम् ७४
कार्तिक्यां वैद्रुमं लिंगं वैदूर्यं मार्गशीर्षके
पुष्परागमयं पौषे माघे द्युमणिजन्तथा ७५
फाल्गुणे चन्द्रकान्तोत्थं चैत्रे तद्व्यत्ययोऽथवा
सर्वमासेषु रत्नानामलाभे हैममेव वा ७६
हैमाभावे राजतं वा ताम्रजं शैलजन्तथा
मृन्मयं वा यथालाभं जातुषं चान्यदेव वा ७७
सर्वगंधमयं वाथ लिंगं कुर्याद्यथारुचि
व्रतावसानसमये समाचरितनित्यकः ७८
कृत्वा वैशेषिकीं पूजां हुत्वा चैव यथा पुरा
संपूज्य च तथाचार्यं व्रतिनश्च विशेषतः ७९
देशिकेनाप्यनुज्ञातः प्राग्मुखो वाप्युदग्मुखः
दर्भासनो दर्भपाणिः प्राणापानौ नियम्य च ८०
जपित्वा शक्तितो मूलं ध्यात्वा साम्बं त्रियम्बकम्
अनुज्ञाप्य यथापूर्वं नमस्कृत्य कृताञ्जलिः ८१
समुत्सृजामि भगवन्व्रतमेतत्त्वदाज्ञया
इत्युक्त्वा लिंगमूलस्थान्दर्भानुत्तरतस्त्यजेत् ८२
ततो दण्डजटाचीरमेखला अपि चोत्सृजेत्
पुनराचम्य विधिवत्पंचाक्षरमुदीरयेत् ८३
यः कृत्वात्यंतिकीं दीक्षामादेहान्तमनाकुलः
व्रतमेतत्प्रकुर्वीत स तु वै नैष्ठिकः स्मृतः ८४
सोऽत्याश्रमी च विज्ञेयो महापाशुपतस्तथा
स एव तपतां श्रेष्ठ स एव च महाव्रती ८५

न तेन सदृशः कश्चित्कृतकृत्यो मुमुक्षुषु
यो यतिर्नैष्ठिको जातस्तमाहुर्नैष्ठिकोत्तमम् ८६
योऽन्वहं द्वादशाहं वा व्रतमेतत्समाचरेत्
सोऽपि नैष्ठिकतुल्यः स्यात्तीव्रव्रतसमन्वयात् ८७
घृताक्तो यश्चरेदेतद्व्रतं व्रतपरायणः
द्वित्रैकदिवसं वापि स च कश्चन नैष्ठिकः ८८
कृत्यमित्येव निष्कामो यश्चरेद्व्रतमुत्तमम्
शिवार्पितात्मा सततं न तेन सदृशः क्वचित् ८९
भस्मच्छन्नो द्विजो विद्वान्महापातकसंभवैः
पापैस्सुदारुणैस्सद्यो मुच्यते नात्र संशयः ९०
रुद्राग्निर्यत्परं वीर्य्यन्तद्भस्म परिकीर्तितम्
तस्मात्सर्वेषु कालेषु वीर्यवान्भस्मसंयुतः ९१
भस्मनिष्ठस्य नश्यन्ति देषा भस्माग्निसंगमात्
भस्मस्नानविशुद्धात्मा भस्मनिष्ठ इति स्मृतः ९२
भस्मना दिग्धसर्वांगो भस्मदीप्तत्रिपुंड्रकः
भस्मस्नायी च पुरुषो भस्मनिष्ठ इति स्मृतः ९३
भूतप्रेतपिशासाश्च रोगाश्चातीव दुस्सहाः
भस्मनिष्ठस्य सान्निध्याद्विद्रवंति न संशयः ९४
भासनाद्भासितं प्रोक्तं भस्म कल्मषभक्षणात्
भूतिभूतिकरी चैव रक्षा रक्षाकरी परम् ९५
किमन्यदिह वक्तव्यं भस्ममाहात्म्यकारणम्
व्रती च भस्मना स्नातस्स्वयं देवो महेश्वरः ९६
परमास्त्रं च शैवानां भस्मैतत्पारमेश्वरम्
धौम्याग्रजस्य तपसि व्यापदो यन्निवारिताः ९७
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कृत्वा पाशुपतव्रतम्

धनवद्भस्म संगृह्य भस्मस्नानरतो भवेत् ९८
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
पशुपतिव्रतविधानवर्णनं नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३

अध्याय ३४

ऋषय ऊचुः
धौम्याग्रजेन शिशुना क्षीरार्थं हि तपः कृतम्
तस्मात् क्षीरार्णवो दत्तस्तस्मै देवेन शूलिना १
स कथं शिशुको लेभे शिवशास्त्रप्रवक्तृताम्
कथं वा शिवसद्भावं ज्ञात्वा तपसि निष्ठितः २
कथं च लब्धविज्ञानस्तपश्चरणपर्वणि
रुद्राग्नेर्यत्परं वीर्यं लभे भस्म स्वरक्षकम् ३
वायुरुवाच
न ह्येष शिशुकः कश्चित्प्राकृतः कृतवांस्तपः
मुनिवर्यस्य तनयो व्याघ्रपादस्य धीमतः ४
जन्मान्तरेण संसिद्धः केनापि खलु हेतुना
स्वपदप्रच्युतो दिष्ट्या प्राप्तो मुनिकुमारताम् ५
महादेवप्रसादस्य भाग्यापन्नस्य भाविनः
दुग्धाभिलाषप्रभवद्वारतामगमत्तपः ६
अतः सर्वगणेशत्वं कुमारत्वं च शाश्वतम्
सह दुग्धाब्धिना तस्मै प्रददौ शंकरः स्वयम् ७
तस्य ज्ञानागमोप्यस्य प्रसादादेव शांकरात्
कौमारं हि परं साक्षाज्ज्ञानं शक्तिमयं विदुः ८
शिवशास्त्रप्रवक्तृत्वमपि तस्य हि तत्कृतम्
कुमारो मुनितो लब्धज्ञानाब्धिरिव नन्दनः ९

दृष्टं तु कारणं तस्य शिवज्ञानसमन्वये
स्वमातृवचनं साक्षाच्छोकजं क्षीरकारणात् १०
कदाचित्क्षीरमत्यल्पं पीतवान्मातुलाश्रमे
ईर्षयया मातुलसुतं संतृप्तक्षीरमुत्तमम् ११
पीत्वा स्थितं यथाकामं दृष्ट्वा वै मातुलात्मजम्
उपमन्युर्व्याघ्रपादिः प्रीत्या प्रोवाच मातरम् १२
उपमन्युरुवाच
मातर्मातर्महाभागे मम देहि तपस्विनि
गव्यं क्षीरमतिस्वादु नाल्पमुष्णं पिबाम्यहम् १३
वायुरुवाच
तच्छ्रुत्वा पुत्रवचनं तन्माता च तपस्विनी
व्याघ्रपादस्य महिषी दुःखमापत्तदा च सा १४
उपलाल्याथ सुप्रीत्या पुत्रमालिंग्य सादरम्
दुःखिता विललापाथ स्मृत्वा नैर्धन्यमात्मनः १५
स्मृत्वास्मृत्वा पुनः क्षीरमुपमन्युस्स बालकः
देहि देहीति तामाह रुद्रन्भूयो महाद्युतिः १६
तद्धठं सा परिज्ञाय द्विजपत्नी तपस्विनी
शान्तये तद्धठस्याथ शुभोपायमरीरचत् १७
उञ्छवृत्त्यार्जितान्बीजान्स्वयं दृष्ट्वा च सा तदा
बीजपिष्टमथालोड्य तोयेन कलभाषिणी १८
एह्येहि मम पुत्रेति सामपूर्वं ततस्सुतम्
आलिंग्यादाय दुःखार्ता प्रददौ कृत्रिमं पयः १९
पीत्वा च कृत्रिमं क्षीरं मात्रां दत्तं स बालकः
नैतत्क्षीरमिति प्राह मातरं चातिविह्वलः २०
दुःखिता सा तदा प्राह संप्रेक्ष्याघ्राय मूर्द्धनि

समार्ज्य नेत्र पुत्रस्य कराभ्यां कमलायते २१
जनन्युवाच
तटिनी रत्नपूर्णास्तास्स्वर्गपातालगोचराः
भाग्यहीना न पश्यन्ति भक्तिहीनाश्च ये शिवे २२
राज्यं स्वर्गं च मोक्षं च भोजनं क्षीरसंभवम्
न लभन्ते प्रियाण्येषां न तुष्यति यदा शिवः २३
भवप्रसादजं सर्वं नान्यद्देवप्रसादजम्
अन्यदेवेषु निरता दुःखार्ता विभ्रमन्ति च २४
क्षीरं तत्र कुतोऽस्माकं वने निवसतां सदा
क्व दुग्धसाधनं वत्स क्व वयं वनवासिनः २५
कृत्स्नाभावेन दारिद्र्यान्मया ते भाग्यहीनया
मिथ्यादुग्धमिदं दत्तम्पिष्टमालोड्य वारिणा २६
त्वं मातुलगृहे स्वल्पं पीत्वा स्वादु पयः शृतम्
ज्ञात्वा स्वादु त्वया पीतं तज्जातीयमनुस्मरन् २७
दत्तं न पय इत्युक्त्वा रुदन् दुःखीकरोषि माम्
प्रसादेन विना शंभो पयस्तव न विद्यते २८
पादपंकजयोस्तस्य साम्बस्य सगणस्य च
भक्त्या समर्पितं यत्तत्कारणं सर्वसम्पदाम् २९
अधुना वसुदोस्माभिर्महादेवो न पूजितः
सकामानां यथाकामं यथोक्तफलदायकः ३०
धनान्युद्दिश्य नास्माभिरितः प्रागर्चितः शिवः
अतो दरिद्रास्संजाता वयं तस्मान्न ते पयः ३१
पूर्वजन्मनि यद्दत्तं शिवमुद्दिश्य वै सुतः
तदेव लभ्यते नान्यद्विष्णुमुद्दिश्य वा प्रभुम् ३२
वायुरुवाच

इति मातृवचः श्रुत्वा तथ्यं शोकादिसूचकम्
बालोऽप्यनुतपन्नंतः प्रगल्भमिदमब्रवीत् ३३
उपमन्युरुवाच
शोकेनालमितो मतः सांबो यद्यस्ति शंकरः
त्यज शोकं महाभागे सर्वं भद्रं भविष्यति ३४
शृणु मातर्वचो मेद्य महादेवोऽस्ति चेत्क्वचित्
चिराद्वा ह्यचिराद्वापि क्षीरोदं साधयाम्यहम् ३५
वायुरुवाच
इति श्रुत्वा वचस्तस्य बालकस्य महामतेः
प्रयुतुवाच तदा माता सुप्रसन्ना मनस्विनी ३६
मातोवाच
शुभं विचारितं तात त्वया मत्प्रीतिवर्द्धनम्
विलंबं मा कथास्त्वं हि भज सांबं सदाशिवम् ३७
सर्वस्मादधिकोऽस्त्येव शिवः परमकारणम्
तत्कृतं हि जगत्सर्वं ब्रह्माद्यास्तस्य किंकराः ३८
तत्प्रसादकृतैश्वर्या दासास्तस्य वयं प्रभोः
तं विनान्यं न जानीमश्शंकरं लोकशंकरम् ३९
अन्यान्देवान्परित्यज्य कर्मणा मनसा गिरा
तमेव सांबं सगणं भज भावपुरस्सरम् ४०
तस्य देवाधिदेवस्य शिवस्य वरदायिनः
साक्षान्नमश्शिवायेति मंत्रोऽयं वाचकः स्मृतः ४१
सप्तकोटिमहामंत्राः सर्वे सप्रणवाः परे
तस्मिन्नेव विलीयंते पुनस्तस्माद्विनिर्गताः ४२
सप्रसादाश्च ते मंत्राः स्वाधिकाराद्यपेक्षया
सर्वाधिकारस्त्वेकोऽयं मंत्र एवेश्वराज्ञया ४३

यथा निकृष्टानुत्कृष्टान्सर्वानप्यात्मनः शिवः
क्षमते रक्षितुं तद्वन्मंत्रोऽयमपि सर्वदा ४४
प्रबलश्च तथा ह्येष मंत्रो मन्त्रान्तरादपि
सर्वरक्षाक्षमोऽप्येष नापरः कश्चिदिष्यते ४५
तस्मान्मन्त्रान्तरांस्त्यक्त्वा पंचाक्षरपरो भव
तस्मिञ्जिह्वांतरगते न किंचिदिह दुर्लभम् ४६
अघोरास्त्रं च शैवानां रक्षाहेतुरनुत्तमम्
तच्च तत्प्रभवं मत्वा तत्परो भव नान्यथा ४७
भस्मेदन्तु मया लब्धं पितुरेव तवोत्तमम्
विरजानलसंसिद्धं महाव्यापन्निवारणम् ४८
मंत्रं च ते मया दत्तं गृहाण मदनुज्ञया
अनेनैवाशु जप्तेन रक्षा तव भविष्यति ४९
वायुरुवाच
एवं मात्रा समादिश्य शिवमस्त्वित्युदीर्य च
विसृष्टस्तद्वचो मूर्ध्नि कुर्वन्नेव तदा मुनिः ५०
तां प्रणम्यैवमुक्त्वा च तपः कर्तुं प्रचक्रमे
तमाह च तदा माता शुभं कुर्वंतु ते सुराः ५१
अनुज्ञातस्तया तत्र तपस्तेपे स दुश्चरम्
हिमवत्पर्वतं प्राप्य वायुभक्षः समाहितः ५२
अष्टेष्टकाभिः प्रसादं कृत्वा लिंगं च मृन्मयम्
तत्रावाह्य महादेवं सांबं सगणमव्ययम् ५३
भक्त्या पञ्चाक्षरेणैव पुत्रैः पुष्पैर्वनोद्भवैः
समभ्यर्च्य चिरं कालं चचार परमं तपः ५४
ततस्तपश्चरन्तं तं बालमेकाकिनं कृशम्
उपमन्युं द्विजवरं शिवसंसक्तमानसम् ५५

पुरा मरीचिना शप्ताः केचिन्मुनिपिशाचकाः
संपीड्य राक्षसैर्भावैस्तपसोविघ्नमाचरन् ५६
स च तैः पीड्यमानोऽपि तपः कुर्वन्कथञ्चन
सदा नमः शिवायेति क्रोशति स्मार्तनादवत् ५७
तन्नादश्रवणादेव तपसो विघ्नकारिणः
ते तं बालं समुत्सृज्य मुनयस्समुपाचरन् ५८
तपसा तस्य विप्रस्य चोपमन्योर्महात्मनः
चराचरं च मुनयः प्रदीपितमभूज्जगत् ५९
इति श्रीशिवमहापुराणे सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
उपमन्युतपोवर्णनं नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ३४

अध्याय ३५

वायुरुवाच
अथ सर्वे प्रदीप्तांगा वैकुण्ठं प्रययुर्द्रुतम्
प्रणम्याहुश्च तत्सर्वं हरये देवसत्तमाः १
श्रुत्वा तेषां तदा वाक्यं भगवान्पुरुषोत्तमः
किमिदन्त्विति संचिन्त्य ज्ञात्वा तत्कारणं च सः २
जगाम मन्दरं तूर्णं महेश्वरदिदृक्षया
दृष्ट्वा देवं प्रणम्यैवं प्रोवाच सुकृतांजलिः ३
विष्णुरुवाच
भगवन्ब्राह्मणः कश्चिदुपमन्युरिति श्रुतः
क्षीरार्थमदहत्सर्वं तपसा तन्निवारय ४
वायुरुवाच
इति श्रुत्वा वचो विष्णोः प्राह देवो महेश्वरः
शिशुं निवारयिष्यामि तत्त्वं गच्छ स्वमाश्रमम् ५

तच्छ्रुत्वा शंभुवचनं स विष्णुर्देववल्लभः
जगामाश्वास्य तान्सर्वान्स्वलोकममरादिकान् ६
एतस्मिन्नंतरे देवः पिनाकी परमेश्वरः
शक्रस्य रूपमास्थाय गन्तुं चक्रे मतिं ततः ७
अथ जगाम मुनेस्तु तपोवनं गजवरेण सितेन सदाशिवः
सह सुरासुरसिद्धमहोरगैरमरराजतनुं स्वयमास्थितः ८
स वारणश्चारु तदा विभुं तं निवीज्य वालव्यजनेन दिव्यम्
दधार शच्या सहितं सुरेंद्रं करेण वामेन शितातपत्रम् ९
रराज भगवान्सोमः शक्ररूपी सदाशिवः
तेनातपत्रेण यथा चन्द्रबिंबेन मन्दरः १०
आस्थायैवं हि शक्रस्य स्वरूपं परमेश्वरः
जगामानुग्रहं कर्तुमुपमन्योस्तदाश्रमम् ११
तं दृष्ट्वा परमेशानं शक्ररूपधरं शिवम्
प्रणम्य शिरसा प्राह महामुनिवरः स्वयम् १२
उपमन्युरुवाच
पावितश्चाश्रमस्सोऽयं मम देवेश्वर स्वयम्
प्राप्तो यत्त्वं जगन्नाथ भगवन्देवसत्तम १३
वायुरुवाच
एवमुक्त्वा स्थितं प्रेक्ष्य कृतांजलिपुटं द्विजम्
प्राह गंभीरया वाचा शक्ररूपधरो हरः १४
शक्र उवाच
तुष्टोऽस्मि ते वरं ब्रूहि तपसानेन सुव्रत
ददामि चेप्सितान्सर्वान्धौम्याग्रज महामुने १५
वायुरुवाच
एवमुक्तस्तदा तेन शक्रेण मुनिपुंगवः

वारयामि शिवे भक्तिमित्युवाच कृताञ्जलिः १६
तन्निशम्य हरिः १ प्राह मां न जानासि लेखपम्
त्रैलोक्याधिपतिं शक्रं सर्वदेवनमस्कृतम् १७
मद्भक्तो भव विप्रर्षे मामेवार्चय सर्वदा
ददामि सर्वं भद्रं ते त्यज रुद्रं च निर्गुणम् १८
रुद्रेण निर्गुणेनापि किं ते कार्यं भविष्यति
देवपण्क्तिबहिर्भूतो यः पिशाचत्वमागतः १९
वायुरुवाच
तच्छ्रुत्वा प्राह स मुनिर्जपन्पंचाक्षरं मनुम्
मन्यमानो धर्मविघ्नं प्राह तं कर्तुमागतम् २०
उपमन्युरुवाच
त्वयैवं कथितं सर्वं भवनिंदारतेन वै
प्रसंगादेव देवस्य निर्गुणत्वं महात्मनः २१
त्वं न जानामि वै रुद्रं सर्वदेवेश्वरेश्वरम्
ब्रह्मविष्णुमहेशानां जनक प्रकृतेः परम् २२
सदसद्व्यक्तमव्यक्तं यमाहुर्ब्रह्मवादिनः
नित्यमेकमनेकं च वरं तस्माद्वृणोम्यहम् २३
हेतुवादविनिर्मुक्तं सांख्ययोगार्थदम्परम्
उपासते यं तत्त्वज्ञा वरं तस्माद्वृणोम्यहम् २४
नास्ति शंभोः परं तत्त्वं सर्वकारणकारणात्
ब्रह्मविष्णवादिदेवानां स्त्रष्टुर्गुणपराद्विभोः २५
बहुनात्र किमुक्तेन मयाद्यानुमितं महत्
भवांतरे कृतं पापं श्रुता निन्दा भवस्य चेत् २६
श्रुत्वा निंदां भवस्याथ तत्क्षणादेव सन्त्यजेत्
स्वदेहं तन्निहत्याशु शिवलोकं स गच्छति २७

आस्तां तावन्ममेच्छेयं क्षीरं प्रति सुराधम
निहत्य त्वां शिवास्त्रेण त्यजाम्येतं कलेवरम् २८
वायुरुवाच
एवमुक्त्वोपमन्युस्तं मर्तुं व्यवसितस्स्वयम्
क्षीरे वाञ्छामपि त्यक्त्वा निहन्तुं शक्रमुद्यतः २९
भस्मादाय तदा घोरमघोरास्त्राभिमंत्रितम्
विसृज्य शक्रमुद्दिश्य ननाद स मुनिस्तदा ३०
स्मृत्वा शंभुपदद्वंद्वं स्वदेहं दुग्धुमुद्यतः
आग्नेयीं धारणां बिभ्रदुपमन्युरवस्थितः ३१
एवं व्यवसिते विप्रे भगवान्भगनेत्रहा
वारयामास सौम्येन धारणां तस्य योगिनः ३२
तद्विसृष्टमघोरास्त्रं नंदीश्वरनियोगतः
जगृहे मध्यतः क्षिप्तं नन्दी शंकरवल्लभः ३३
स्वं रूपमेव भगवानास्थाय परमेश्वरः
दर्शयामास शिप्राय बालेन्दुकृतशेखरम् ३४
क्षीरार्णवसहस्त्रं च पीयूषार्णवमेव वा
दध्यादेरर्णवांश्चैव घृतोदार्णवमेव च ३५
फलार्णवं च बालस्य भक्ष्य भोज्यार्णवं तथा
अपूपानां गिरिं चैव दर्शयामास स प्रभुः ३६
एवं स ददृशे देवो देव्या सार्द्धं वृषोपरि
गणेश्वरैस्त्रिशूलाद्यैर्दिव्यास्त्रैरपि संवृतः ३७
दिवि दुंदुभयो नेदुः पुष्पवृष्टिः पपात च
विष्णुब्रह्मेन्द्रप्रमुखैर्देवैश्छन्ना दिशो दश ३८
अथोपमन्युरानन्दसमुद्रोर्मिभिरावृतः
पपात दण्डवद्भूमौ भक्तिनम्रेण चेतसा ३९

एतस्मिन्समये तत्र सस्मितो भगवान्भवः
एह्येहीति तमाहूय मूर्ध्न्याघ्राय ददौ वरान् ४०
शिव उवाच
भक्ष्यभोज्यान्यथाकामं बान्धवैर्भुङ्क्ष्व सर्वदा
सुखी भव सदा दुःखान्निर्मुक्ता भक्तिमान्मम ४१
उपमन्यो महाभाग तवाम्बैषा हि पार्वती
मया पुत्रीकृतो ह्यद्य दत्तः क्षीरोदकार्णवः ४२
मधुनश्चार्णवश्चैव दध्यन्नार्णव एव च
आज्यौदनार्णवश्चैव फलाद्यर्णव एव च ४३
अपूपगिरयश्चैव भक्ष्यभोज्यार्णवस्तथा
एते दत्ता मया ते हि त्वं गृह्णीष्व महामुने ४४
पिता तव महादेवो माता वै जगदम्बिका
अमरत्वं मया दत्तं गाणपत्यं च शाश्वतम् ४५
वरान्वरय सुप्रीत्या मनोऽभिलषितान्परान्
प्रसन्नोऽहं प्रदास्यामि नात्र कार्या विचारणा ४६
वायुरुवाच
एवमुक्त्वा महादेवः कराभ्यामुपगृह्यतम्
मूर्ध्न्याघ्राय सुतस्तेऽयमिति देव्यै न्यवेदयत् ४७
देवी च गुहवत्प्रीत्या मूर्ध्नि तस्य कराम्बुजम्
विन्यस्य प्रददौ तस्मै कुमारपदमव्ययम् ४८
क्षीराब्धिरपि साकारः क्षीरं स्वादु करे दधत्
उपस्थाय ददौ पिण्डीभूतं क्षीरमनश्वरम् ४९
योगैश्वर्यं सदा तुष्टिं ब्रह्मविद्यामनश्वराम्
समृद्धिं परमान्तस्मै ददौ संतुष्टमानसः ५०
अथ शंभुः प्रसन्नात्मा दृष्ट्वा तस्य तपोमहः

पुनर्ददौ वरं दिव्यं मुनये ह्युपमन्यवे ५१
व्रतं पाशुपतं ज्ञानं व्रतयोगं च तत्त्वतः
ददौ तस्मै प्रवक्तृत्वपाटवं सुचिरं परम् ५२
सोऽपि लब्ध्वा वरान्दिव्यान्कुमारत्वं च सर्वदा
तस्माच्छिवाच्च तस्याश्च शिवाया मुदितोऽभवत् ५३
ततः प्रसन्नचेतस्कः सुप्रणम्य कृतांजलिः
ययाचे स वरं विप्रो देवदेवान्महेश्वरात् ५४
उपमन्युरुवाच
प्रसीद देवदेवेश प्रसीद परमेश्वर
स्वभक्तिन्देहि परमान्दिव्यामव्यभिचारिणीम् ५५
श्रद्धान्देहि महादेव त्वत्सम्बन्धिषु मे सदा
स्वदास्यं परमं स्नेहं सान्निध्यं चैव सर्वदा ५६
एवमुक्त्वा प्रसन्नात्माहर्षगद्गदया गिरा
सतुष्टाव महादेवमुपमन्युर्द्विजोत्तमः ५७
उपमन्युरुवाच
देवदेव महादेव शरणागतवत्सल
प्रसीद करुणासिंधो साम्ब शंकर सर्वदा ५८
वायुरुवाच
एवमुक्तो महादेवः सर्वेषां च वरप्रदः
प्रत्युवाच प्रसन्नात्मोपमन्युं मुनिसत्तमम् ५९
शिव उवाच
वत्सोपमन्यो तुष्टोऽस्मि सर्वं दत्तं मया हि ते
दृढभक्तोऽसि विप्रर्षे मया विज्ञासितो ह्यसि ६०
अजरश्चामरश्चैव भव त्वन्दुःखवर्जितः
यशस्वी तेजसा युक्तो दिव्यज्ञानसमन्वितः ६१

अद्भया बान्धवाश्चैव कुलं गोत्रं च ते सदा
भविष्यति द्विजश्रेष्ठ मयि भक्तिश्च शाश्वती ६२
सान्निध्यं चाश्रमे नित्यं करिष्यामि द्विजोत्तम
उपकंठं मम त्वं वै सानन्दं विहरिष्यसि ६३
एवमुक्त्वा स भगवान्सूर्यकोटिसमप्रभः
ईशानस्स वरान्दत्त्वा तत्रैवान्तर्दधे हरः ६४
उपमन्युः प्रसन्नात्मा प्राप्य तस्माद्वराद्वरान्
जगाम जननीस्थानं सुखं प्रापाधिकं च सः ६५

इति श्रीशिवमहापुराणे वैयासिक्यां चतुर्विंशतिसाहस्र्यां संहितायां
तदन्तर्गतायां सप्तम्यां वायवीयसंहितायां पूर्वखण्डे
उपमन्युचरितवर्णनं नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ३५
समाप्तोऽयं सप्तम्या वायवीयसंहितायाः पूर्वखण्डः